

श्रीकृष्णजन्मखण्ड

नारदजीके प्रश्न तथा मुनिवर नारायणद्वारा भगवान् विष्णु एवं वैष्णवके माहात्म्यका वर्णन, श्रीराधा और श्रीकृष्णके गोकुलमें अवतार लेनेका एक कारण

श्रीदाम और राधाका परस्पर शपथ

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्॥
भगवान् नारायण, नरश्रेष्ठ नर तथा देवी सरस्वतीको नमस्कार करके जय (इतिहास-पुराण आदि)-का पाठ करना चाहिये।

नारदजीने कहा—ब्रह्मन्! मैंने सबसे पहले पूज्यपाद पिता ब्रह्माजीके मुखारविन्दसे ब्रह्मखण्डकी मनोहर कथा सुनी है, जो अत्यन्त अद्भुत है। तदनन्तर उन्हींकी आज्ञासे मैं तुरन्त आपके निकट चला आया और यहाँ अमृतखण्डसे भी अधिक मधुर प्रकृतिखण्ड सुननेको मिला। तत्पश्चात् मैंने गणपतिखण्ड श्रवण किया, जो अखण्ड जन्मोंका खण्डन करनेवाला है। परन्तु मेरा लोलुप मन अभी तृप्त नहीं हुआ। यह और भी विशिष्ट प्रसङ्गको सुनना चाहता है। अतः अब श्रीकृष्णजन्मखण्डका विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये, जो मनुष्योंके जन्म-मरण आदिका खण्डन करनेवाला है। वह समस्त तत्त्वोंका प्रकाशक, कर्मबन्धनका नाशक, हरिभक्ति प्रदान करनेवाला, तत्काल वैराग्यजनक, संसारविषयक आसक्तिका निवारक, मुक्तिबीजका कारण तथा भवसागरसे पार उतारनेवाला उत्तम साधन है। वह कर्मभोगरूपी रोगोंका नाश करनेके लिये रसायनका काम देता है। श्रीकृष्णचरणारविन्दोंकी प्राप्तिके लिये सोपानका निर्माण करता है। वैष्णवोंका तो वह जीवन ही है। तीनों लोकोंको परम पवित्र करनेवाला है। मैं आपका शरणागत भक्त एवं शिष्य हूँ। अतः आप मुझे श्रीकृष्णजन्मखण्डकी कथाको विस्तारपूर्वक सुनाइये। किसकी प्रार्थनासे एकमात्र परिपूर्णतम परमेश्वर श्रीकृष्ण अपने सम्पूर्ण

अंशोंसे इस भूतलपर अवतीर्ण हुए? किस युगमें, किस हेतुसे और कहाँ उनका आविर्भाव हुआ? उनके पिता वसुदेव कौन थे अथवा माता देवकी भी कौन थीं? बताइये। किसके कुलमें भगवान्ने मायाद्वारा जन्म-ग्रहणकी लीला की? श्रीहरिने किस रूपसे यहाँ आकर क्या किया? मुने! सुना जाता है कि श्रीकृष्ण कंसके भयसे सूतिकागृहसे गोकुलको चले गये थे। जो स्वयं भयके स्वामी हैं, उन्हें कीटतुल्य कंससे क्यों भय हुआ? उन श्रीहरिने गोप-वेष धारण करके गोकुलमें कौन-सी लीला की? वे तो जगदीश्वर हैं। फिर उन्होंने गोपाङ्गनाओंके साथ क्यों विहार किया? गोपाङ्गनाएँ कौन थीं? अथवा वे ग्वाल-बाल भी कौन थे? यशोदा कौन थीं? नन्दरायजी कौन थे? उन्होंने कौन-सा पुण्य किया था? श्रीहरिकी प्रेयसी गोलोकवासिनी पुण्यवती देवी श्रीराधा क्यों व्रजमें व्रजकन्या होकर प्रकट हुईं? गोपियोंने किस प्रकार दुराराध्य परमेश्वरको प्राप्त किया? श्रीहरि उन सबको छोड़कर मथुरा क्यों चले गये? महाभाग! पृथ्वीका भार उतारकर कौन-सी लीला करनेके पश्चात् भगवान् श्रीकृष्ण पुनः परमधामको पधारे? आप उनकी लीला-कथा सुनाइये; क्योंकि उसका श्रवण और कीर्तन पुण्यदायक है। श्रीहरिकी कथा अत्यन्त दुर्लभ है। वह भवसागरसे पार उतारनेके लिये नौकाके तुल्य है। प्रारब्धभोगरूपी बेड़ी तथा क्लेशोंका उच्छेद करनेके लिये कटार है। पापरूपी ईधन-राशिका दाह करनेके लिये प्रज्वलित अग्नि-शिखाके समान है। इसे सुननेवाले पुरुषोंके करोड़ों जन्मोंकी पापराशिका यह नाश

कर देती है। भगवान्‌की कथा शोक-सागरका नाश करनेवाली मुक्ति है। वह कानोंमें अमृतके समान मधुर प्रतीत होती है। कृपानिधे! मैं आपका भक्त एवं शिष्य हूँ। आप मुझे श्रीहरिकथाका ज्ञान प्रदान कीजिये। तप, जप, बड़े-बड़े दान, पृथ्वीके तीर्थोंके दर्शन, श्रुतिपाठ, अनशन, व्रत, देवार्चन तथा सम्पूर्ण यज्ञोंमें दीक्षा ग्रहण करनेसे मनुष्यको जो फल मिलता है, वह सब ज्ञानदानकी सोलहवीं कलाके बराबर भी नहीं है। पिताजीने मुझे आपके पास ज्ञान प्राप्त करनेके लिये भेजा है। सुधा-समुद्रके पास पहुँचकर कौन दूसरी वस्तु (जल आदि) पीनेकी इच्छा करेगा?

भगवान्‌ नारायण बोले—कुलको पवित्र करनेवाले नारद! मैं तुम्हें अच्छी तरह जानता हूँ। तुम धन्य हो। पुण्यकी मूर्तिमती राशि हो। लोकोंको पवित्र करनेके लिये ही तुम इनमें भ्रमण करते हो। वाणीसे मनुष्योंके हृदयकी तत्काल पहचान हो जाती है। शिष्य, कलत्र, कन्या, दौहित्र, बन्धु-बान्धव, पुत्र-पौत्र, प्रवचन, प्रताप, यश, श्री, बुद्धि, वैरी और विद्या—इनके विषयमें मनुष्योंके हार्दिक अभिप्रायका पता चल जाता है। तुम जीवन्मुक्त और पवित्र हो। भगवान्‌ गदाधरके शुद्ध भक्त हो। अपने चरणोंकी धूलसे सबकी आधारभूता वसुधाको पवित्र करते फिरते हो। समस्त लोकोंको अपने स्वरूपका दर्शन देकर पवित्र बनाते हो। भगवान्‌ श्रीहरिकी कथा परम मङ्गलमयी है, इसीलिये तुम उसे सुनना चाहते हो। जहाँ श्रीकृष्णकी कथाएँ होती हैं, वहीं सब देवता निवास करते हैं। ऋषि, मुनि और सम्पूर्ण तीर्थ भी वहीं रहते हैं। वे कथा सुनकर अन्तमें अपने निरापद स्थानको जाते हैं। जिन स्थानोंमें श्रीकृष्णकी शुभ कथाएँ होती हैं, वे तीर्थ बन जाते हैं। सैकड़ों जन्मोंतक तपस्या करके जो

पवित्र हो गया है, वही इस भारतवर्षमें जन्म पाता है। वह यदि श्रीहरिकी अमृतमयी कथाका श्रवण करे, तभी अपने जन्मको सफल कर सकता है। भगवान्‌की पूजा, वन्दना, मन्त्र-जप, सेवा, स्मरण, कीर्तन, निरन्तर उनके गुणोंका श्रवण, उनके प्रति आत्मनिवेदन तथा उनका दास्यभाव—ये भक्तिके नौ लक्षण हैं*। नारद! इन सबका अनुष्ठान करके मनुष्य अपने जन्मको सफल बनाता है। उसके मार्गमें विघ्न नहीं आता और उसकी पूरी आयु नष्ट नहीं होती। उसके सामने काल उसी तरह नहीं जाता है, जैसे गरुड़के सामने सर्प। भगवान्‌ श्रीहरि उस भक्तका सामीप्य एक क्षणके लिये भी नहीं छोड़ते हैं। अणिमा आदि सिद्धियाँ तुरन्त उसकी सेवामें उपस्थित हो जाती हैं। भगवान्‌ श्रीकृष्णकी आज्ञासे उसकी रक्षाके लिये सुदर्शन चक्र दिन-रात उसके पास घूमता रहता है। फिर कौन उसका क्या कर सकता है? यमराजके दूत स्वप्नमें भी उसके निकट वैसे ही नहीं जाते हैं, जैसे शलभ जलती हुई आगको देखकर उससे दूर भागते हैं। उसके ऊपर ऋषि, मुनि, सिद्ध तथा सम्पूर्ण देवता संतुष्ट रहते हैं। वह भगवान्‌ श्रीकृष्णकी कृपासे सर्वत्र सुखी एवं निःशंक रहता है। श्रीकृष्णकी कथामें सदा तुम्हारा आत्यन्तिक अनुराग है। क्यों न हो? पिताका स्वभाव पुत्रमें अवश्य ही प्रकट होता है। विप्रवर! तुम्हारी यह प्रशंसा क्या है? तुम्हारा जन्म ब्रह्माजीके मानससे हुआ है। जिसका जिस कुलमें जन्म होता है, उसकी बुद्धि उसके अनुसार ही होती है। तुम्हारे पिता श्रीकृष्णके चरणारविन्दोंकी सेवासे ही विधाताके पदपर प्रतिष्ठित हैं। वे नित्य-निरन्तर नवधा भक्तिका पालन करते हैं।

जिसका श्रीकृष्णकी कथामें अनुराग हो,

* अर्चनं वन्दनं मन्त्रजपं सेवनमेव च। स्मरणं कीर्तनं शश्वद् गुणश्रवणमीप्सितम्॥
निवेदनं तस्य दास्यं नवधा भक्तिलक्षणम् । (श्रीकृष्णजन्मखण्ड १। ३३-३४)



कथा सुनकर जिसके नेत्रोंमें आँसू छलक आते हों और शरीरमें रोमाञ्च छा जाता हो तथा मन उसीमें डूब जाता हो; उसीको विद्वान् पुरुषोंने सच्चा भक्त कहा है। जो मन, वाणी और शरीरसे स्त्री-पुत्र आदि सबको श्रीहरिका ही स्वरूप समझता है, उसे विद्वानोंने भक्त कहा है। जिसकी सब जीवोंपर दया है तथा जो सम्पूर्ण जगत्को श्रीकृष्ण जानता है, वह महाज्ञानी पुरुष ही वैष्णव भक्त माना गया है। जो निर्जन स्थानमें अथवा तीर्थोंके सम्पर्कमें रहकर आसक्तिशून्य हो बड़े आनन्दके साथ श्रीहरिके चरणारविन्दका चिन्तन करते हैं, वे वैष्णव माने गये हैं। जो सदा भगवान्‌के नाम और गुणका गान करते, मन्त्र जपते तथा कथा-वार्ता कहते-सुनते हैं, वे अत्यन्त वैष्णव हैं। मीठी वस्तुएँ पाकर श्रीहरिको प्रसन्नतापूर्वक भोग लगानेके लिये जिसका मन हर्षसे खिल उठता है, वह ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ भक्त है। जिसका मन सोते, जागते, दिन-रात श्रीहरिके चरणारविन्दमें ही लगा रहता है और जो बाह्य शरीरसे पूर्व कर्मोंका फल भोगता है, वह वैष्णव है। तीर्थ सदा वैष्णवोंके दर्शन और स्पर्शकी अभिलाषा करते हैं; क्योंकि उनके सङ्गसे उन तीर्थोंके वे सारे पाप नष्ट हो जाते हैं, जो उन्हें पापियोंके संसर्गसे मिले होते हैं। जितनी देरमें गाय दुही जाती है, उतनी देर भी जहाँ वैष्णव पुरुष ठहर जाता है, वहाँकी धरतीपर उतने समयके लिये सम्पूर्ण तीर्थ निवास करते हैं। वहाँ मरा हुआ पापी मनुष्य निश्चय ही पापमुक्त हो श्रीहरिके धाममें वैसे ही चला जाता है, जैसे अन्तकालमें श्रीकृष्णकी स्मृति होनेपर अथवा ज्ञानगङ्गामें अवगाहन करनेपर मनुष्य परम पदको प्राप्त हो जाता है। तथा जैसे तुलसीवनमें, गोशालामें, श्रीकृष्ण-मन्दिरमें, वृन्दावनमें, हरिद्वारमें एवं अन्य तीर्थोंमें भी मृत्यु होनेपर मनुष्यको परम धामकी प्राप्ति होती है। तीर्थोंमें स्नान करने या गोता लगानेसे पापियोंके पाप धुल जाते हैं। फिर उन

तीर्थोंके पाप वैष्णवोंको छूकर बहनेवाली वायुके स्पर्शसे नष्ट होते हैं। जो भगवान् हृषीकेशकी और उनके पुण्यात्मा भक्तकी निन्दा करते हैं, उनके सौ जन्मोंका पुण्य निश्चय ही नष्ट हो जाता है। वैष्णवोंके स्पर्शमात्रसे पातकी मनुष्य पातकसे मुक्त हो जाता है। पातकीके स्पर्शसे उस भक्तमें जो पाप आता है, उसका नाश उसके अन्तः-करणमें बैठे हुए भगवान् मधुसूदन अवश्य कर देते हैं। ब्रह्मन्! इस प्रकार मैंने भगवान् विष्णु और वैष्णव भक्तके गुणोंका वर्णन किया है। अब मैं तुम्हें श्रीहरिके जन्मका प्रसङ्ग सुनाता हूँ, सुनो।

श्रीनारायणने कहा—एक बार गोलोकमें श्रीकृष्ण विरजादेवीके समीप थे। श्रीराधाको यह ठीक नहीं लगा। श्रीराधा सखियोंसहित वहाँ जाने लगीं। तब श्रीदामने उन्हें रोका। इसपर श्रीराधाने श्रीदामको शाप दे दिया कि 'तुम असुरयोनिको प्राप्त हो जाओ।' तब श्रीदामने भी श्रीराधाको यह शाप दिया कि 'आप भी मानवी-योनिमें जायँ। वहाँ गोकुलमें श्रीहरिके ही अंश महायोगी रायाण नामक एक वैश्य होंगे। आपका छायारूप उनके साथ रहेगा। अतएव भूतलपर मूढ़ लोग आपको रायाणकी पत्नी समझेंगे, श्रीहरिके साथ कुछ समय आपका विछोह रहेगा।'।

इससे श्रीदाम और श्रीराधा दोनोंको ही क्षोभ हुआ। तब श्रीकृष्णने श्रीदामको सान्त्वना देकर कहा कि 'तुम त्रिभुवनविजेता सर्वश्रेष्ठ शङ्खचूड नामक असुर होओगे और अन्तमें श्रीशंकरके त्रिशूलसे भिन्न-देह होकर यहाँ मेरे पास लौट आओगे।'।

श्रीराधाको बड़े ही प्रेमके साथ हृदयसे लगाकर भगवान्‌ने कहा—'वाराहकल्पमें मैं पृथ्वीपर जाऊँगा और व्रजमें जाकर वहाँके पवित्र काननोंमें तुम्हारे साथ विहार करूँगा। मेरे रहते तुमको क्या भय है?'।

उधर विरजादेवी नदी हो गयीं और उनके

श्रीकृष्णके द्वारा जो सात सुन्दर पुत्र हुए थे—वे लवण, इक्षु, सुरा, घृत, दधि, दुग्ध और जलरूप सात समुद्र हो गये (यह सब श्रीराधा और श्रीकृष्णकी लीला ही है, जो ब्रजमें परम दिव्य पवित्रतम विलक्षण प्रेमरसधारा बहानेके लिये निमित्तरूपसे की गयी थी)। इसी निमित्तसे लीलामय श्रीराधा और श्रीकृष्ण वाराहकल्पमें पृथ्वीपर अवतीर्ण हुए। श्रीराधाजी गोकुलमें श्रीवृषभानुके घर प्रकट हुईं। यह कथा प्रसङ्गानुसार पहले भी आ चुकी है। (भगवान्, श्रीराधा-कृष्णके अवतार तथा ब्रजकी मधुरतम लीलाका यह एक निमित्त कारणमात्र है।) (अध्याय १—३)

~~~~~

**पृथ्वीका देवताओंके साथ ब्रह्मलोकमें जाकर अपनी व्यथा-कथा सुनाना, ब्रह्माजीका उन सबके साथ कैलासगमन, कैलाससे ब्रह्मा, शिव तथा धर्मका वैकुण्ठमें जाकर श्रीहरिकी आज्ञासे गोलोकमें जाना और वहाँ विरजातट, शतशृङ्गपर्वत, रासमण्डल एवं वृन्दावन आदिके प्रदेशोंका अवलोकन करना, गोलोकका विस्तृत वर्णन**

**नारदजीने पूछा—**वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ नारायण! किसकी प्रार्थनासे और किस कारण जगदीश्वर श्रीकृष्णने इस भूतलपर अवतार लिया था?

**श्रीनारायणने कहा—**प्राचीन कालकी बात है। वाराह-कल्पमें पृथ्वी असुरोंके अधिक भारसे आक्रान्त हो गयी थी; अतः शोकसे अत्यन्त पीड़ित हो वह ब्रह्माजीकी शरणमें गयी। उसके साथ असुरोंद्वारा सताये गये देवता भी थे, जिनका चित्त अत्यन्त उद्विग्न हो रहा था। पृथ्वी उन देवताओंके साथ ब्रह्माजीकी दुर्गम सभामें गयी। वहाँ उसने देखा, देवेश्वर ब्रह्मा ब्रह्मतेजसे जाज्वल्यमान हो रहे हैं तथा बड़े-बड़े ऋषि, मुनीन्द्र तथा सिद्धेन्द्रगण सानन्द उनकी सेवामें उपस्थित हैं। ब्रह्माजी 'कृष्ण' इस दो अक्षरके परब्रह्मस्वरूप मन्त्रका जप कर रहे थे। उनके नेत्र भक्तिजनित आनन्दके आँसुओंसे भरे थे तथा सम्पूर्ण अङ्गोंमें रोमाञ्च हो आया था। मुने! देवताओंसहित पृथ्वीने भक्तिभावसे चतुराननको प्रणाम किया और दैत्योंके भार आदिका सारा वृत्तान्त कह सुनाया। आँसूभरे नेत्रों और पुलकित शरीरसे वह ब्रह्माजीकी स्तुति तथा रोदन करने लगी।

**तब जगद्धाता ब्रह्माने उससे पूछा—**भद्रे! तुम क्यों स्तुति करती और रोती हो? बताओ,

किस उद्देश्यसे तुम्हारा आगमन हुआ है? विश्वास करो, तुम्हारा भला होगा। कल्याणि! सुस्थिर हो जाओ, मेरे रहते तुम्हें क्या भय है?

इस प्रकार पृथ्वीको आश्वासन देकर ब्रह्माजीने देवताओंसे आदरपूर्वक पूछा—'देवगण! किसलिये तुम्हारा मेरे समीप आगमन हुआ है?'

**ब्रह्माजीकी यह बात सुनकर देवतालोग उन प्रजापतिसे बोले—**प्रभो! पृथ्वी दैत्योंके भारसे दबी हुई है तथा हम भी उनके कारण संकटमें पड़ गये हैं। दैत्योंने हमें ग्रस लिया। आप ही जगत्के स्रष्टा हैं, शीघ्र ही हमारा उद्धार कीजिये। ब्रह्मन्! आप ही इस पृथ्वीकी गति हैं; इसे शान्ति प्रदान करें। पितामह! यह पृथ्वी जिस भारसे पीड़ित है, उसीसे हम भी दुःखी हैं, अतः आप उस भारका हरण कीजिये।'

**देवताओंकी बात सुनकर जगत्स्रष्टा ब्रह्माने पृथ्वीसे पूछा—**'बेटी! तुम भय छोड़कर मेरे पास सुखपूर्वक रहो। पद्मलोचने! बताओ, किनका ऐसा भार आ गया है, जिसे सहन करनेमें तुम असमर्थ हो गयी हो। भद्रे! मैं उस भारको दूर करूँगा। निश्चय ही तुम्हारा भला होगा। ब्रह्माजीका यह वचन सुनकर पृथ्वीके मुखपर और नेत्रोंमें प्रसन्नता छा गयी। वह जिस-जिस

कारणसे इस तरह पीड़ित थी, अपनी पीड़ाकी उस कथाको कहने लगी—‘तात! सुनिये, मैं अपने मनकी व्यथा बता रही हूँ। विश्वासी बन्धु-बान्धवके सिवा दूसरे किसीको मैं यह बात नहीं बता सकती; क्योंकि स्त्री-जाति अबला होती है। अपने सगे बन्धु, पिता, पति और पुत्र सदा उसकी रक्षा करते हैं; परंतु दूसरे लोग निश्चय ही उसकी निन्दा करने लगते हैं। जगत्पिता आपने मेरी सृष्टि की है; अतः आपसे अपने मनकी बात कहनेमें मुझे कोई संकोच नहीं है। मैं जिनके भारसे पीड़ित हूँ, उनका परिचय देती हूँ, सुनिये।’

‘जो श्रीकृष्णभक्तिसे हीन हैं और जो श्रीकृष्ण-भक्तकी निन्दा करते हैं, उन महापातकी मनुष्योंका भार वहन करनेमें मैं सर्वथा असमर्थ हूँ। जो अपने धर्मके आचरणसे शून्य तथा नित्यकर्मसे रहित हैं, जिनकी वेदोंमें श्रद्धा नहीं है; उनके भारसे मैं पीड़ित हूँ। जो पिता, माता, गुरु, स्त्री, पुत्र तथा पोष्य-वर्गका पालन-पोषण नहीं करते हैं; उनका भार वहन करनेमें मैं असमर्थ हूँ। पिताजी! जो मिथ्यावादी हैं, जिनमें दया और सत्यका अभाव है तथा जो गुरुजनों और देवताओंकी निन्दा करते हैं; उनके भारसे मुझे बड़ी पीड़ा होती है। जो मित्रद्रोही, कृतघ्न, झूठी गवाही देनेवाले, विश्वासघाती तथा धरोहर हड़प लेनेवाले हैं; उनके भारसे भी मैं पीड़ित रहती हूँ। जो कल्याणमय सूक्तों, साम-मन्त्रों तथा एकमात्र मङ्गलकारी श्रीहरिके नामोंका विक्रय करते हैं; उनके भारसे मुझे बड़ा कष्ट होता है। जो जीवघाती, गुरुद्रोही, ग्रामपुरोहित, लोभी, मुर्दा जलानेवाले तथा ब्राह्मण होकर शूद्रान्न भोजन करनेवाले हैं; उनके भारसे मुझे बड़ा कष्ट होता है। जो मूढ़ पूजा, यज्ञ, उपवास-व्रत और नियमको तोड़नेवाले हैं; उनके भारसे भी मुझे बड़ी पीड़ा होती है। जो पापी सदा गौ, ब्राह्मण, देवता, वैष्णव, श्रीहरि, हरिकथा और हरिभक्तिसे

द्वेष करते हैं; उनके भारसे मैं पीड़ित रहती हूँ। विधे! शङ्खचूड़के भारसे जिस तरह मैं पीड़ित थी, उससे भी अधिक दैत्योंके भारसे पीड़ित हूँ। प्रभो! यह सब कष्ट मैंने कह सुनाया। यही मुझ अनाथाका निवेदन है। यदि आपसे मैं सनाथ हूँ तो आप मेरे कष्टके निवारणका उपाय कीजिये।’

यों कहकर वसुधा बार-बार रोने लगी। उसका रोदन सुनकर कृपानिधान ब्रह्माने उससे कहा—‘वसुधे! तुम्हारे ऊपर जो दस्युभूत राजाओंका भार आ गया है, मैं किसी उपायसे अवश्य ही उसे हटाऊँगा।’

पृथ्वीको इस प्रकार आश्वासन देकर देवताओंसहित जगद्धाता ब्रह्मा भगवान् शंकरके निवासस्थान कैलास पर्वतपर गये। वहाँ पहुँचकर विधाताने कैलासके रमणीय आश्रम तथा भगवान् शंकरको देखा। वे गङ्गाजीके तटपर अक्षयवटके नीचे बैठे हुए थे। उन्होंने व्याघ्रचर्म पहन रखा था। दक्षकन्याकी हड्डियोंके आभूषणसे वे विभूषित थे। उन्होंने हाथोंमें त्रिशूल और पट्टिश धारण कर रखे थे। उनके पाँच मुख और प्रत्येक मुखमें तीन-तीन नेत्र थे। अनेकानेक सिद्धोंने उन्हें घेर रखा था। वे योगीन्द्रगणसे सेवित थे और कौतूहलपूर्वक गन्धर्वोंका संगीत सुन रहे थे। साथ ही अपनी ओर देखती हुई पार्वतीकी ओर प्रेमपूर्वक तिरछी नजरसे देख लेते थे। अपने पाँच मुखोंद्वारा श्रीहरिके एकमात्र मङ्गल नामका जप करते थे। गङ्गाजीमें उत्पन्न कमलोंके बीजोंकी मालासे जप करते समय उनके शरीरमें रोमाञ्च हो आता था। इसी समय ब्रह्माजी पृथ्वी तथा नतमस्तक देवसमूहोंके साथ महादेवजीके सामने जा खड़े हुए। जगद्गुरुको आया देख भगवान् शंकर शीघ्र ही भक्तिभावसे उठकर खड़े हो गये। उन्होंने प्रेमपूर्वक मस्तक झुकाकर उन्हें प्रणाम किया और उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। तत्पश्चात् सब देवताओंने तथा पृथ्वीने भी

भक्तिभावसे चन्द्रशेखर शिवको प्रणाम किया और शिवने उन सबको आशीर्वाद दिया। प्रजापति ब्रह्माने पार्वतीनाथ शिवसे सारा वृत्तान्त कहा। वह सब सुनकर भक्तवत्सल शंकरने तुरंत ही मुँह नीचा कर लिया। भक्तोंपर कष्ट आया सुनकर पार्वती और परमेश्वर शिवको बड़ा दुःख हुआ। तदनन्तर ब्रह्मा और शिवने देवसमूहों तथा वसुधाको यत्नपूर्वक सान्त्वना देकर घरको लौटा दिया। फिर वे दोनों देवेश्वर तुरंत धर्मके घर आये और उनके साथ विचार-विमर्श करके वे तीनों श्रीहरिके धामको चल दिये। भगवान्‌के उस परम धामका नाम वैकुण्ठ है। वह जरा और मृत्युको दूर भगानेवाला है। ब्रह्माण्डसे ऊपर उसकी स्थिति है। वह उत्तम लोक मानो वायुके आधारपर स्थित है। (वास्तवमें वह चिन्मय लोक श्रीहरिसे भिन्न न होनेके कारण अपने-आपमें ही स्थित है। उसका दूसरा कोई आधार नहीं है।) उस सनातन धामकी स्थिति ब्रह्मलोकसे एक करोड़ योजन ऊपर है। दिव्य रत्नोंद्वारा निर्मित विचित्र वैकुण्ठधामका वर्णन कर पाना कवियोंके लिये असम्भव है। पद्मराग और नीलमणिके बने हुए राजमार्ग उस धामकी शोभा बढ़ाते हैं। मनके समान तीव्र गतिसे जानेवाले वे ब्रह्मा, शिव और धर्म सब-के-सब उस मनोहर वैकुण्ठधाममें जा पहुँचे। श्रीहरिके अन्तःपुरमें पहुँचकर उन सबने वहाँ उनके दर्शन किये। वे श्रीहरि दिव्य रत्नमय अलङ्कारोंसे विभूषित हो रत्नसिंहासनपर बैठे थे। रत्नोंके बाजूबंद, कंगन और नूपुर उनके हाथ-पैरोंकी शोभा बढ़ाते थे। दिव्य रत्नोंके बने हुए दो कुण्डल उनके दोनों गालोंपर झलमला रहे थे। उन्होंने पीताम्बर पहन रखा था तथा आजानुलम्बिनी वनमाला उनके अग्रभागको विभूषित कर रही थी। सरस्वतीके प्राणवल्लभ श्रीहरि शान्तभावसे बैठे थे। लक्ष्मीजी उनके चरणारविन्दोंकी सेवा कर रही थीं। करोड़ों कन्दर्पोंकी लावण्यलीलासे

वे प्रकाशित हो रहे थे। उनके चार भुजाएँ थीं और मुखपर मन्द मुस्कानकी छटा छा रही थी। सुनन्द, नन्द और कुमुद आदि पार्षद उनकी सेवामें जुटे थे। उनका सम्पूर्ण अङ्ग चन्दनसे चर्चित था तथा उनका मस्तक रत्नमय मुकुटसे जगमगा रहा था। वे परमानन्द-स्वरूप भगवान् भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये व्याकुल दिखायी देते थे। मुने! ब्रह्मा आदि देवेश्वरोंने भक्तिभावसे उनके चरणोंमें प्रणाम किया और श्रद्धापूर्वक मस्तक झुकाकर बड़ी भक्तिके साथ उनकी स्तुति की। उस समय वे परमानन्दके भारसे दबे हुए थे। उनके अङ्गोंमें रोमाञ्च हो आया था।

**ब्रह्माजी बोले—**मैं शान्त, सर्वेश्वर तथा अच्युत उन कमलाकान्तको प्रणाम करता हूँ, जिनकी हम तीनों विभिन्न कलाएँ हैं तथा समस्त देवता जिनकी कलाकी भी अंशकलासे उत्पन्न हुए हैं। निरञ्जन! मनु, मुनीन्द्र, मानव तथा चराचर प्राणी आपसे ही आपके कलाकी अंशकलाद्वारा प्रकट हुए हैं।

**भगवान् शंकरने कहा—**आप अविनाशी तथा अविकारी हैं। योगीजन आपमें रमण करते हैं। आप अव्यक्त ईश्वर हैं। आपका आदि नहीं है; परंतु आप सबके आदि हैं। आपका स्वरूप आनन्दमय है। आप सर्वरूप हैं। अणिमा आदि सिद्धियोंके कारण तथा सबके कारण हैं। सिद्धिके ज्ञाता, सिद्धिदाता और सिद्धिरूप हैं। आपकी स्तुति करनेमें कौन समर्थ है?

**धर्म बोले—**जिस वस्तुका वेदमें निरूपण किया गया है, उसीका विद्वान् लोग वर्णन कर सकते हैं। जिनको वेदमें ही अनिर्वचनीय कहा गया है, उनके स्वरूपका निरूपण कौन कर सकता है? जिसके लिये जिस वस्तुकी सम्भावना की जाती है, वह गुणरूप होती है। वही उसका स्तवन है। जो निरञ्जन (निर्मल) तथा गुणोंसे पृथक्—निर्गुण हैं; उन परमात्माकी मैं क्या स्तुति करूँ?



महामुने! ब्रह्मा आदिका किया हुआ यह स्तोत्र जो छः श्लोकोंमें वर्णित है, पढ़कर मनुष्य दुर्गम संकटसे मुक्त होता और मनोवाञ्छित फलको पाता है।\*

देवताओंकी स्तुति सुनकर साक्षात् श्रीहरिने उनसे कहा—तुम सब लोग गोलोकको जाओ। पीछेसे मैं भी लक्ष्मीके साथ आऊँगा। श्वेतद्वीपनिवासी वे नर और नारायण मुनि तथा सरस्वतीदेवी—ये गोलोकमें जायँगे। अनन्तशेषनाग, मेरी माया, कार्तिकेय, गणेश तथा वेदमाता सावित्री—ये सब पीछेसे निश्चित ही वहाँ जायँगे। वहाँ मैं गोपियों तथा राधाके साथ द्विभुज श्रीकृष्णरूपसे निवास करता हूँ। यहाँ सुनन्द आदि पार्षदों तथा लक्ष्मीके साथ रहता हूँ। नारायण, श्रीकृष्ण तथा श्वेतद्वीपनिवासी विष्णु मैं ही हूँ। ब्रह्मा आदि अन्य सम्पूर्ण देवता मेरी ही कलाएँ हैं। देव, असुर और मनुष्य आदि प्राणी मेरी कलाकी कलाकी अंशकलासे उत्पन्न हुए हैं। तुमलोग गोलोकको जाओ। वहाँ तुम्हारे अभीष्ट कार्यकी सिद्धि होगी। फिर हमलोग भी सबकी इष्टसिद्धिके लिये वहाँ आ जायँगे।

इतना कहकर श्रीहरि उस सभामें चुप हो गये। तब उन सब देवताओंने उन्हें प्रणाम किया और वहाँसे अद्भुत गोलोककी यात्रा की। वह उत्कृष्ट एवं विचित्र परम धाम जरा एवं मृत्युको हर लेनेवाला है। वह अगम्य लोक वैकुण्ठसे

पचास करोड़ योजन ऊपर है और भगवान् श्रीकृष्णकी इच्छासे निर्मित है। उसका कोई बाह्य आधार नहीं है। श्रीकृष्ण ही वायुरूपसे उसे धारण करते हैं। वे ब्रह्मा आदि देवता उस अनिर्वचनीय लोककी ओर जानेके लिये उन्मुख हो चल दिये। उन सबकी गति मनके समान तीव्र थी। अतः वे सब-के-सब विरजाके तटपर जा पहुँचे। सरिताके तटका दर्शन करके उन देवताओंको बड़ा आश्चर्य हुआ। विरजा नदीका वह तटप्रान्त शुद्ध स्फटिकमणिके समान उज्ज्वल, अत्यन्त विस्तृत और मनोहर था, मोती-माणिक्य तथा उत्कृष्ट मणिरत्नोंकी खानोंसे सुशोभित था। काले, उज्ज्वल, हरे तथा लाल रत्नोंकी श्रेणियोंसे उद्भासित होता था। उस तटपर कहीं तो मूँगोंके अङ्कुर प्रकट हुए हैं, जो अत्यन्त मनोहर दिखायी देते हैं। कहीं बहुमूल्य उत्तम रत्नोंकी अनेक खानें उसकी शोभा बढ़ाती हैं। कहीं श्रेष्ठ निधियोंके आकर उपलब्ध होते हैं, जिनसे वहाँकी छटा आश्चर्यमें डाल देती है। वह दृश्य विधाताके भी दृष्टिपथमें आनेवाला नहीं है। मुने! विरजाके किनारे कहीं तो पद्मराग और इन्द्रनील मणियोंकी खानें हैं, कहीं मरकतमणिकी खानें श्रेणीबद्ध दिखायी देती हैं, कहीं स्यमन्तकमणिकी तथा कहीं स्वर्णमुद्राओंकी खानें शोभा पाती हैं। कहीं बहुमूल्य पीले रंगकी मणिश्रेणियोंके आकर विरजातटको अलंकृत करते

\* ब्रह्मोवाच

नमामि कमलाकान्तं शान्तं सर्वेशमच्युतम् । वर्यं यस्य कलाभेदाः कलाशकलया सुराः ॥  
मनवश्च मुनीन्द्राश्च मानुषाश्च चराचराः । कलाकलाशकलया भूतास्त्वत्तो निरञ्जन ॥

शंकर उवाच

त्वामक्षयमक्षरं वा राममव्यक्तमीश्वरम् । अनादिमादिमानन्दरूपिणं सर्वरूपिणम् ॥  
अणिमादिकसिद्धीनां कारणं सर्वकारणम् । सिद्धिज्ञं सिद्धिदं सिद्धिरूपं कः स्तोतुमीश्वरः ॥

धर्म उवाच

वेदे निरूपितं वस्तु वर्णनीयं विषयक्षैः । वेदेऽनिर्वचनीयं यत्तन्निर्वक्तुं च कः क्षमः ॥  
यस्य सम्भावनीयं यद् गुणरूपं निरञ्जनम् । तदतिरिक्तं स्तवनं किमहं स्तौमि निर्गुणम् ॥  
ब्रह्मादीनामिदं स्तोत्रं षट्श्लोकोक्तं महामुने । पठित्वा मुच्यते दुर्गाद्वाञ्छितं च लभेन्नरः ॥

(श्रीकृष्णजन्मखण्ड ४। ६२—६८)



हैं। कहीं रत्नोंके, कहीं कौस्तुभमणिके और कहीं अनिर्वचनीय मणियोंके उत्तम आकर हैं। विरजाके उस तट-प्रान्तमें कहीं-कहीं उत्तम रमणीय विहारस्थल उपलब्ध होते हैं।

उस परम आश्चर्यजनक तटको देखकर वे देवेश्वर नदीके उस पार गये। वहाँ जानेपर उन्हें पर्वतोंमें श्रेष्ठ शतशृंग दिखायी दिया, जो अपनी शोभासे मनको मोहे लेता था। दिव्य पारिजात-वृक्षोंकी वनमालाएँ उसकी शोभा बढ़ा रही थीं। वह पर्वत कल्पवृक्षों तथा कामधेनुओंद्वारा सब ओरसे घिरा था। उसकी ऊँचाई एक करोड़ योजन थी और लंबाई दस करोड़ योजन। उसके ऊपरकी चौरस भूमि पचास करोड़ योजन विस्तृत थी। वह पर्वत चहारदीवारीकी भाँति गोलोकके चारों ओर फैला हुआ था। उसीके शिखरपर उत्तम गोलाकार रासमण्डल है, जिसका विस्तार दस योजन है। वह रासमण्डल सुगन्धित पुष्पोंसे भरे हुए सहस्रों उद्यानोंसे सुशोभित है और उन उद्यानोंमें भ्रमर-समूह छाये रहते हैं। सुन्दर रत्नों और द्रव्योंसे सम्पन्न अगणित क्रीडाभवन तथा कोटि सहस्र रत्नमण्डप उसकी शोभा बढ़ाते हैं। रत्नमयी सीढ़ियों, श्रेष्ठ रत्ननिर्मित कलशों तथा इन्द्रनीलमणिके शोभाशाली खम्भोंसे उस मण्डलकी शोभा और बढ़ गयी है। उन खम्भोंमें सिन्दूरके समान रंगवाली मणियाँ सब ओर जड़ी गयी हैं तथा बीच-बीचमें लगे हुए मनोहर इन्द्रनील नामक रत्नोंसे वे मण्डित हैं। रत्नमय परकोटोंमें जटित भाँति-भाँतिके मणिरत्न उस रासमण्डलकी श्रीवृद्धि करते हैं। उसमें चारों दिशाओंकी ओर चार दरवाजे हैं, जिनमें सुन्दर किंवाड़ लगे हुए हैं। उन दरवाजोंपर रस्सियोंमें गुँथे हुए आम्रपल्लव बन्दनवारके रूपमें शोभा दे रहे हैं। वहाँ दोनों ओर झुंड-के-झुंड केलेके खम्भे आरोपित हुए हैं। श्वेतधान्य, पल्लवसमूह, फल तथा दूर्वादल आदि मङ्गलद्रव्य उस मण्डलकी शोभा बढ़ाते

हैं। चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और कुंकुमयुक्त जलका वहाँ सब ओर छिड़काव हुआ है।

मुने! रत्नमय अलंकारों तथा रत्नोंकी मालाओंसे अलंकृत करोड़ों गोपकिशोरियोंके समूहसे रासमण्डल घिरा हुआ है। वे गोपकुमारियाँ रत्नोंके बने हुए कंगन, बाजूबंद और नूपुरोंसे विभूषित हैं। रत्ननिर्मित युगल कुण्डल उनके गण्डस्थलकी शोभा बढ़ाते हैं। उनके हाथोंकी अंगुलियाँ रत्नोंकी बनी हुई अँगूठियोंसे विभूषित हो बड़ी सुन्दर दिखायी देती हैं। रत्नमय पाशकसमूहों (बिछुओं)-से उनके पैरोंकी अंगुलियाँ उद्भासित होती हैं। वे गोपकिशोरियाँ रत्नमय आभूषणोंसे विभूषित हैं। उनके मस्तक उत्तम रत्नमय मुकुटोंसे जगमगा रहे हैं। नासिकाके मध्यभागमें गजमुक्ताकी बुलाकें बड़ी शोभा दे रही हैं। उनके भालदेशमें सिन्दूरकी बेंदी लगी हुई है। साथ ही आभूषण पहननेके स्थानोंमें दिव्य आभूषण धारण करनेके कारण उनकी दिव्य प्रभा और भी उद्दीप्त हो उठी है। उनकी अङ्गकान्ति मनोहर चम्पाके समान जान पड़ती है। वे सब-की-सब चन्दन-द्रवसे चर्चित हैं। उनके अङ्गोंपर पीले रंगकी रेशमी साड़ी शोभा देती है। बिम्बफलके समान अरुण अधर उनकी मनोहरता बढ़ा रहे हैं। शरत्कालकी पूर्णिमाके चन्द्रमाओंकी चटकीली चाँदनी-जैसी प्रभासे सेवित मुख उनके उद्दीप्त सौन्दर्यको और भी उज्ज्वल बना रहे हैं। उनके नेत्र शरत्कालके प्रफुल्ल कमलोंकी शोभाको छीने लेते हैं। उनमें कस्तूरी-पत्रिकासे युक्त काजलकी रेखा शोभा-वृद्धि कर रही है। उनके केशपाश प्रफुल्ल मालती-पुष्पकी मालाओंसे सुशोभित हैं, जिनपर मधुलोलुप भ्रमरोंके समूह मँडरा रहे हैं। उनकी मनोहर मन्दगति गजराजके गर्वका गंजन करनेवाली है। बाँकी भीहोंके साथ मन्द मुस्कानकी शोभासे वे मनको मोह लेती हैं। पके हुए अनारके दानोंकी भाँति चमकीली दन्तपंक्ति उनके मुखकी शोभाको



बढ़ा देती है। पक्षिराज गरुड़की चोंचकी शोभासे सम्पन्न उन्नत नासिकासे वे सब-की-सब विभूषित हैं। गजराजके युगल गण्डस्थलकी भाँति उन्नत उरोजोंके भारसे वे झुकी-सी जान पड़ती हैं। उनका हृदय श्रीकृष्णविषयक अनुरागके देवता कन्दर्पके बाण-प्रहारसे जर्जर हुआ रहता है। वे दर्पणोंमें पूर्ण चन्द्रमाके समान अपने मनोहर मुखके सौन्दर्यको देखनेके लिये उत्सुक रहती हैं। श्रीराधिकाके चरणारविन्दोंकी सेवामें निरन्तर संलग्न रहनेका सौभाग्य सुलभ हो, यही उनका मनोरथ है। ऐसी गोपकिशोरियोंसे भरा-पूरा वह रासमण्डल श्रीराधिकाकी आज्ञासे सुन्दरियोंके समुदायद्वारा रक्षित है—असंख्य सुन्दरियाँ उसकी रक्षामें नियुक्त रहती हैं।

श्वेत, रक्त एवं लोहित वर्णवाले कमलोंसे व्याप्त एवं सुशोभित लाखों क्रीड़ा-सरोवर रासमण्डलको सब ओरसे घेरे हुए हैं, जिनमें असंख्य भ्रमरोंके समुदाय गुँजते रहते हैं। सहस्रों पुष्पित उद्यान तथा फूलोंकी शय्याओंसे संयुक्त असंख्य कुञ्ज-कुटीर रासमण्डलकी सीमामें यत्र-तत्र शोभा पा रहे हैं। उन कुटीरोंमें भोगोपयोगी द्रव्य, कर्पूर, ताम्बूल, वस्त्र, रत्नमय प्रदीप, श्वेत चैवर, दर्पण तथा विचित्र पुष्पमालाएँ सब ओर सजाकर रखी गयी हैं। इन समस्त उपकरणोंसे रासमण्डलकी शोभा बहुत बढ़ गयी है। उस रासमण्डलको देखकर जब वे पर्वतकी सीमासे बाहर हुए तो उन्हें विलक्षण, रमणीय और सुन्दर वृन्दावनके दर्शन हुए। वृन्दावन राधा-माधवको बहुत प्रिय है। वह उन्हीं दोनोंका क्रीडास्थल है। उसमें कल्पवृक्षोंके समूह शोभा पाते हैं। विरजा-तीरके नीरसे भीगे हुए मन्द समीर उस वनके वृक्षोंको शनैः-शनैः आन्दोलित करते रहते हैं। कस्तूरीयुक्त पल्लवोंका स्पर्श करके चलनेवाली मन्द वायुका सम्पर्क पाकर वह सारा वन सुगन्धित बना रहता है। वहाँके वृक्षोंमें नये-नये

पल्लव निकले रहते हैं। वहाँ सर्वत्र कोकिलोंकी काकली सुनायी देती है। वह वनप्रान्त कहीं तो केलिकदम्बोंके समूहसे कमनीय और कहीं मन्दार, चन्दन, चम्पा तथा अन्यान्य सुगन्धित पुष्पोंकी सुगन्धसे सुवासित देखा जाता है। आम, नारंगी, कटहल, ताड़, नारियल, जामुन, बेर, खजूर, सुपारी, आमड़ा, नीबू, केला, बेल और अनार आदि मनोहर वृक्ष-समूहों तथा सुपक्व फलोंसे लदे हुए दूसरे-दूसरे वृक्षोंद्वारा उस वृन्दावनकी अपूर्व शोभा हो रही है। प्रियाल, शाल, पीपल, नीम, सेमल, इमली तथा अन्य वृक्षोंके शोभाशाली समुदाय उस वनमें सब ओर सदा भरे रहते हैं। कल्पवृक्षोंके समूह उस वनकी शोभा बढ़ाते हैं। मल्लिका (मोतिया या बेला), मालती, कुन्द, केतकी, माधवी लता और जूही इत्यादि लताओंके समूह वहाँ सब ओर फैले हैं। मुने! वहाँ रत्नमय दीपोंसे प्रकाशित तथा धूपकी गन्धसे सुवासित असंख्य कुञ्ज-कुटीर उस वनमें शोभा पाते हैं। उनके भीतर शृङ्गारोपयोगी द्रव्य संगृहीत हैं। सुगन्धित वायु उन्हें सुवासित करती रहती है। वहाँ चन्दनका छिड़काव हुआ है। उन कुटीरोंके भीतर फूलोंकी शय्याएँ बिछी हैं, जो पुष्पमालाओंकी जालीसे सुशोभित हैं। मधु-लोलुप मधुपोंके मधुर गुञ्जारवसे वृन्दावन मुखरित रहता है। रत्नमय अलंकारोंकी शोभासे सम्पन्न गोपाङ्गनाओंके समूहसे वह वन आवेष्टित है। करोड़ों गोपियाँ श्रीराधाकी आज्ञासे उसकी रक्षा करती हैं। उस वनके भीतर सुन्दर-सुन्दर और मनोहर बत्तीस कानन हैं। वे सभी उत्तम एवं निर्जन स्थान हैं। मुने! वृन्दावन सुपक्व, मधुर एवं स्वादिष्ट फलोंसे सम्पन्न तथा गोष्ठों और गौओंके समूहोंसे परिपूर्ण है। वहाँ सहस्रों पुष्पोद्यान सदा खिले और सुगन्धसे भरे रहते हैं, उनमें मधुलोभी भ्रमरोंके समुदाय मधुर गुञ्जन करते फिरते हैं। श्रीकृष्णके तुल्य रूपवाले तथा उत्तम रत्न-

मुने! वहाँसे थोड़ी ही दूरपर उन्हें एक मनोहर राजमार्ग दिखायी दिया, जिसके दोनों पार्श्वमें लाल मणियोंसे अद्भुत रचना की गयी थी। इन्द्रनील, पद्मराग, हीरे और सुवर्णकी बनी हुई वेदियाँ उस राजमार्गके उभय पार्श्वको सुशोभित कर रही थीं। दोनों ओर रत्नमय विश्राम-मण्डप शोभा पाते थे। उस मार्गपर चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और कुंकुमके द्रवसे मिश्रित जलका छिड़काव किया गया था। पल्लव, लाजा, फल, पुष्प, दूर्वा तथा सूक्ष्म सूत्रमें गुँथे हुए चन्दन-पल्लवोंकी बन्दनवारसे युक्त सहस्रों कदली-स्तम्भोंके समूह

उस राजमार्गके तटप्रान्तकी शोभा बढ़ाते थे। उन सबपर कुंकुम-केसर छिड़के गये थे। जगह-जगह उत्तम रत्नोंके बने हुए मङ्गलघट स्थापित थे, उनमें फल और शाखाओंसहित पल्लव शोभा पाते थे। सिन्दूर, कुंकुम, गन्ध और चन्दनसे उनकी अर्चना की गयी थी। पुष्पमालाओंसे विभूषित हुए वे मङ्गलकलश उभयपार्श्वमें उस राजमार्गकी शोभावृद्धि करते थे। क्रीडामें तत्पर हुई झुंड-की-झुंड गोपिकाएँ उस मार्गको घेरे खड़ी थीं।

उपर्युक्त मनोरम प्रदेश चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और कुंकुमके द्रवसे चर्चित थे। बहुमूल्य रत्नोंसे वहाँ मणिमय सोपानोंका निर्माण किया गया था। कुल मिलाकर सोलह द्वार थे, जो अग्निशुद्ध रमणीय चिन्मय वस्त्रों, श्वेत चामरों, दर्पणों, रत्नमयी शय्याओं तथा विचित्र पुष्पमालाओंसे शोभायमान थे। बहुत-से द्वारपाल उन प्रदेशोंकी रक्षा करते थे। उनके चारों ओर खाइयाँ थीं और लाल रंगके परकोटोंसे वे घिरे हुए थे। इन मनोरम प्रदेशोंका दर्शन करके देवता वहाँसे आगे बढ़नेको उद्यत हुए। वे जल्दी-जल्दी कुछ दूरतक गये। तब वहाँ उन्हें राशेश्वरी श्रीराधाका आश्रम दिखायी दिया। नारद! देवताओंकी आदिदेवी गोपीशिरोमणि श्रीकृष्णप्राणाधिका राधिकाका वह निवासस्थान बड़ा ही सुन्दर बनाया गया था। रमणीय द्रव्योंके कारण उसकी मनोहरता बहुत बढ़ गयी थी। वहाँका सब कुछ सबके लिये अनिर्वचनीय था। बड़े-से-बड़े विद्वान् भी उस स्थानका सम्यक् वर्णन नहीं कर सके हैं। वह मनोहर आश्रम गोलाकार बना है तथा उसका विस्तार बारह कोसका है। उसमें सौ मन्दिर बने हुए हैं। वह अद्भुत आश्रम दिव्य रत्नोंके तेजसे जगमगाता रहता है। बहुमूल्य रत्नोंके सार-समूहसे उसकी रचना हुई है। वह दुर्लभ एवं गहरी खाइयोंसे सुशोभित है। कल्पवृक्ष उस आश्रमको सब ओरसे घेरे हुए हैं। उसके भीतर सैकड़ों पुष्पोद्यान शोभा पाते

हैं। बहुमूल्य रत्नोंद्वारा निर्मित परकोटोंसे वह आश्रममण्डल घिरा हुआ है। उसमें सात दरवाजे हैं, जो सभी उत्तम रत्नोंकी बनी हुई वेदिकाओंसे युक्त हैं। उन दरवाजोंमें विचित्र रत्न जड़े गये हैं और नाना प्रकारके चित्र बने हैं। क्रमशः बने हुए इन सातों द्वारोंको पार करनेपर वह आश्रम सोलह द्वारोंसे युक्त है। देवताओंने देखा—उसकी चहारदीवारी सहस्र धनुष ऊँची है। उत्तम रत्नोंके बने हुए अत्यन्त मनोहर छोटे-छोटे कलशोंके समुदाय अपने तेजसे उस परकोटेको उद्भासित कर रहे हैं। उसे देखकर देवताओंको बड़ा विस्मय हुआ। वे उसकी परिक्रमा करते हुए बड़ी प्रसन्नताके साथ कुछ दूर और आगे गये। सामने चलते हुए वे इतने आगे बढ़ गये कि वह आश्रम उनसे पीछे हो गया। मुने! तदनन्तर उन्होंने गोपों और गोपिकाओंके उत्तम आश्रम देखे, जिनमें बहुमूल्य रत्न जड़े हुए हैं। उनकी संख्या सौ करोड़ है। इस प्रकार सब ओर गोपों और गोपिकाओंके सम्पूर्ण आश्रमको तथा अन्य नये-नये रमणीय स्थलोंको देखते-देखते उन देवेश्वरोंने समस्त गोलोकका निरीक्षण किया। वह सब देखकर उनके शरीरमें रोमाञ्च हो आया। तदनन्तर फिर वही गोलाकार रम्य वृन्दावन, शतशृंग पर्वत तथा उसके बाहर विरजा नदी दिखायी दी। विरजा नदीके बाद देवताओंने सब कुछ सूना ही देखा। वह अद्भुत गोलोक उत्तम रत्नोंसे निर्मित तथा वायुके आधारपर स्थित था। श्रीराधिकाकी आज्ञाका अनुसरण करते हुए परमेश्वर श्रीकृष्णकी इच्छासे उसका निर्माण हुआ है। वह केवल मङ्गलका धाम है और सहस्रों सरोवरोंसे सुशोभित है।

मुने! देवताओंने वहाँ अत्यन्त मनोहर नृत्य तथा सुन्दर तालसे युक्त रमणीय संगीत देखा, जहाँ श्रीराधा-कृष्णके गुणोंका अनुवाद हो रहा था। उस अमृतोपम गीतको सुनते ही वे देवता मूर्च्छित हो गये। फिर क्षणभरमें सचेत हो मन-



ही-मन श्रीकृष्णका चिन्तन करते हुए उन्होंने स्थान-स्थानपर परम आश्चर्यमय मनोहर दृश्य देखे। नाना प्रकारके वेश धारण किये समस्त गोपिकाएँ उनके दृष्टिपथमें आयीं। कोई अपने हाथोंसे मृदंग बजा रही थीं तो किन्हींके हाथोंसे वीणा-वादन हो रहा था। किन्हींके हाथमें चँवर थे तो किन्हींके करताल। किन्हींके हाथोंमें यन्त्रवाद्य शोभा पा रहे थे। कितनी ही रत्नमय नूपुरोंकी झनकार फैला रही थीं। बहुतोंकी रत्नमयी काञ्ची बज रही थी, जिसमें क्षुद्रघंटिकाओंके शब्द गूँज रहे थे। किन्हींके माथेपर जलसे भरे घड़े थे, जो भौति-भौतिके नृत्यके प्रदर्शनका मनोरथ लिये खड़ी थीं। नारद! कुछ दूर और आगे जानेपर उन्होंने बहुत-से आश्रम देखे, जो राधाकी प्रधान सखियोंके आवासस्थान थे। वे रूप, गुण, वेष, यौवन, सौभाग्य और अवस्थामें एक-दूसरीके समान थीं। श्रीराधाकी समवयस्का सखियाँ तैंतीस गोपियाँ हैं, जिनकी वेशभूषा अनिर्वचनीय है।

उनके नाम सुनो—सुशीला, शशिकला, यमुना, माधवी, रति, कदम्बमाला, कुन्ती, जाह्नवी, स्वयंप्रभा, चन्द्रमुखी, पद्ममुखी, सावित्री, सुधामुखी, शुभा, पद्मा, पारिजाता, गौरी, सर्वमङ्गला, कालिका, कमला, दुर्गा, भारती, सरस्वती, गङ्गा, अम्बिका, मधुमती, चम्पा, अपर्णा, सुन्दरी, कृष्णप्रिया, सती, नन्दिनी और नन्दना—ये सब-की-सब समान रूपवाली हैं। इनके शुभ्र आश्रम रत्नों और धातुओंसे चित्रित हैं। नाना प्रकारके चित्रोंसे चित्रित होनेके कारण वे अत्यन्त मनोहर प्रतीत होते हैं। उनके शिखर बहुमूल्य रत्नमय कलश-समूहोंसे जाज्वल्यमान हैं। उत्तम रत्नोंद्वारा उनकी रचना हुई है। गोलोक ब्रह्माण्डसे बाहर और ऊपर है। उससे ऊपर दूसरा कोई लोक नहीं है। ऊपर सब कुछ शून्य ही है। वहीँतक सृष्टिकी अन्तिम सीमा है। सात रसातलोंसे भी नीचे सृष्टि नहीं है, रसातलोंसे नीचे जल और अन्धकार है, जो अगम्य और अदृश्य है। (अध्याय ४)

~~~~~

श्रीराधाके विशाल भवन एवं अन्तःपुरकी शोभाका वर्णन, ब्रह्मा आदिको दिव्य तेजःपुञ्जके दर्शन तथा उनके द्वारा उन तेजोमय परमेश्वरकी स्तुति

भगवान् नारायण कहते हैं—सम्पूर्ण गोलोकका दर्शन करके उन तीनों देवताओंके मनमें बड़ा हर्ष हुआ। वे फिर श्रीराधाके प्रधान द्वारपर आये। उस द्वारका निर्माण उत्तम रत्नों और मणियोंसे हुआ था। वहाँ दो वेदिकाएँ थीं। हल्दीके रंगकी उत्तम मणिसे, जिसमें हीरेका भी सम्मिश्रण था, बनाये गये श्रेष्ठ रत्न-मणिनिर्मित किवाड़ उस द्वारकी शोभा बढ़ाते थे। देवताओंने देखा, उस द्वारपर रक्षाके लिये परम उत्तम वीरभानुकी नियुक्ति हुई है। वे रत्नोंके बने हुए सिंहासनपर बैठे हैं, पीताम्बर पहने हैं तथा रत्नमय आभूषणोंसे विभूषित हैं। उनके मस्तकपर रत्नमय मुकुट उद्भासित हो रहा है। विचित्र चित्रोंसे

अलंकृत उस अद्भुत एवं विचित्र द्वारकी रक्षा करते हुए द्वारपाल वीरभानुके पास जा देवताओंने प्रसन्नतापूर्वक अपना सारा अभिप्राय निवेदन किया। तब द्वारपालने निःशंक होकर उन देवेश्वरोंसे कहा—‘देवगण! मैं इस समय आज्ञा लिये बिना आपलोगोंको भीतर नहीं जाने दूँगा’।

मुने! यह कहकर द्वारपालने श्रीकृष्णके स्थानपर सेवकोंको भेजा और उनकी आज्ञा पाकर देवताओंको अंदर जानेकी अनुमति दी। उससे पूछकर वे तीनों देवता दूसरे उत्तम द्वारपर गये, जो पहलेसे अधिक विचित्र, सुन्दर और मनोहर था। नारद! उस द्वारपर नियुक्त हुए चन्द्रभानु नामक द्वारपाल दिखायी दिये, जिनकी अवस्था

किशोर थी। शरीरकी कान्ति सुन्दर एवं श्याम थी। वे सोनेका बेंत हाथमें लिये रत्नमय आभूषणोंसे विभूषित हो रत्नमय सिंहासनपर विराजमान थे। पाँच लाख गोपोंका समूह उनकी शोभा बढ़ा रहा था। उनसे पूछकर देवतालोग तीसरे उत्तम द्वारपर गये, जो दूसरेसे भी अधिक सुन्दर, विचित्र तथा मणियोंके तेजसे प्रकाशित था। नारद! वहाँ द्वारकी रक्षामें नियुक्त सूर्यभानु नामक द्वारपाल दिखायी दिये, जो दो भुजाओंसे युक्त, मुरलीधारी, किशोर, श्याम एवं सुन्दर थे। उनके दोनों गालोंपर दो मणिमय कुण्डल झलमला रहे थे। रत्नकुण्डलधारी सूर्यभानु श्रीराधा और श्रीकृष्णके परम प्रिय एवं श्रेष्ठ सेवक थे। वे सम्राट्की भाँति नौ लाख गोपोंसे घिरे रहते थे। उनसे पूछकर देवतालोग चौथे द्वारपर गये, जो उन सभी द्वारोंसे विलक्षण, रमणीय तथा मणियोंकी दिव्य दीप्तिसे उद्दीप्त दिखायी देता था। अद्भुत एवं विचित्र रत्नसमूहसे जटित होनेके कारण उस द्वारकी मनोहरता और बढ़ गयी थी। उसकी रक्षाके लिये व्रजराज वसुभानु नियुक्त थे। देवतालोग उनसे मिले। वे किशोर-अवस्थाके सुन्दर एवं श्रेष्ठ पुरुष थे। हाथमें मणिमय दण्ड लिये हुए थे। रमणीय आभूषणोंसे विभूषित हो रत्नसिंहासनपर बैठे थे। पके बिम्बफलके समान लाल ओष्ठ और मन्द-मन्द मुस्कानसे वे अत्यन्त मनोहर दिखायी देते थे।

देवतालोग उनसे पूछकर पाँचवें द्वारपर गये। वह हरिकी दीवारोंपर अङ्कित विचित्र चित्रोंसे अत्यन्त प्रकाशमान दिखायी देता था। वहाँ देवभानु नामक द्वारपाल मिले, जो रत्नमय आभूषण धारण करके मनोहर सिंहासनपर आसीन थे। उनके मस्तकपर मोरपंखका मुकुट शोभा दे रहा था और वे रत्नोंके हारसे अलंकृत थे। कदम्बोंके पुष्पसे सुशोभित, उत्तम रत्नमय कुण्डलोंसे प्रकाशित तथा चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और कुंकुमके द्रवसे चर्चित

थे। सम्राटोंके समान दस लाख प्रजा उनके साथ थी। हाथमें बेंत धारण करनेवाले द्वारपाल देवभानुसे पूछकर देवतालोग प्रसन्नतापूर्वक आगे बढ़े। सामने छठा द्वार था। उसकी विलक्षण शोभा थी। चित्रोंकी श्रेणियोंसे वह द्वार उद्भासित हो रहा था। उसकी दोनों दीवारें वज्रमणि (हरि)- की बनी थीं और फूलोंकी मालाओंसे सजायी गयी थीं। उस द्वारपर व्रजराज शक्रभानु नियुक्त थे। देवतालोग उनसे मिले। वे नाना प्रकारके अलंकारोंकी शोभासे सम्पन्न थे। उनके साथ दस लाख प्रजाएँ थीं। चन्दन-पल्लवसे युक्त उनके कपोल कुण्डलोंकी प्रभासे उद्भासित थे। उनसे आज्ञा लेकर देवतालोग तुरंत ही सातवें द्वारपर जा पहुँचे। उसमें नाना प्रकारके चित्र अङ्कित थे। वह पिछले छहों द्वारोंसे अत्यन्त विलक्षण था। वहाँ द्वारपालके पदपर श्रीहरिके परम प्रिय रत्नभानु नियुक्त थे, जिनका सारा अङ्ग चन्दनसे अभिषिक्त था। वे पुष्पोंकी मालासे विभूषित थे। मणि-रत्ननिर्मित मनोहर एवं रमणीय भूषण उनकी शोभा बढ़ाते थे। बारह लाख गोप आज्ञाके अधीन रहकर राजाधिराजकी भाँति उनकी शोभा बढ़ाते थे। उनका मुखारविन्द प्रसन्नतासे खिला था। वे रत्नमय सिंहासनपर विराजमान थे। उनके हाथमें बेंतकी छड़ी शोभा पाती थी।

वे तीनों देवेश्वर उनसे बातचीत करके प्रसन्नतापूर्वक आठवें द्वारपर गये। वह पूर्वोक्त सातों द्वारोंसे विलक्षण एवं विचित्र शोभाशाली था। वहाँ उन्होंने सुपार्थ नामक मनोहर द्वारपालको देखा, जो मन्द मुस्कराहटके साथ बड़े सुन्दर दिखायी देते थे। वे भालदेशमें धारित चन्दनके तिलकसे अत्यन्त उद्भासित दिखायी देते थे। उनके ओठ बन्धुजीवपुष्प (दुपहरिया)-के समान लाल थे। रत्नोंके कुण्डल उनके गण्डस्थलको अलंकृत किये हुए थे। वे समस्त अलंकारोंकी शोभासे सम्पन्न थे। रत्नमय दण्ड धारण करते थे और उनके साथ बारह लाख गोप थे। वहाँसे

अनुमति मिलनेपर वे देवता शीघ्र ही नवें अभीष्ट द्वारपर गये। वहाँ हीरे आदि उत्तम रत्नोंकी चार वेदियाँ बनी थीं। वह द्वार अपूर्व चित्रोंसे सज्जित तथा मालाओंकी जालीसे विभूषित था। वहाँ सुन्दर आकारवाले सुबल नामक द्वारपाल दृष्टिगोचर हुए, जो भौति-भौतिके आभूषणोंसे भूषित, भूषणके योग्य तथा मनोहर थे। उनके साथ बारह लाख ब्रजवासी थे। दण्डधारी सुबलसे पूछकर देवताओंने तत्काल दूसरे द्वारको प्रस्थान किया। उस विलक्षण दसवें द्वारको देखकर देवताओंको बड़ा विस्मय हुआ। मुने! वहाँका सब कुछ अनिर्वचनीय, अदृष्ट और अश्रुत था—वैसा दृश्य कभी देखने और सुननेमें भी नहीं आया था। वहाँ सुन्दर सुदामा नामक गोप द्वारपालके-पदपर प्रतिष्ठित थे। सुदामाका रूप श्रीकृष्णके समान ही मनोहर तथा अवर्णनीय था। उनके साथ बीस लाख गोपोंका समूह रहता था। दण्डधारी सुदामाका दर्शनमात्र करके देवतालोग दूसरे द्वारपर चले गये।

वह ग्यारहवाँ द्वार अत्यन्त विचित्र और अद्भुत था। वहाँ सुन्दर चित्र अङ्कित थे। वहाँके द्वारपाल ब्रजराज श्रीदामा थे, जिन्हें राधिकाजी अपने पुत्रके समान मानती थीं। वे पीताम्बरसे विभूषित थे, बहुमूल्य रत्नोंद्वारा रचित रम्य सिंहासनपर आसीन थे और अमूल्य रत्नाभरण उनकी शोभा बढ़ाते थे। उनका रूप बड़ा ही मनोहर था। चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और कुंकुमसे उनका शृङ्गार हुआ था। वे अपने कपोलोंके योग्य कानोंमें उत्तम रत्नमय कुण्डल धारण करके प्रकाशित हो रहे थे। श्रेष्ठ रत्नोंद्वारा रचित विचित्र मुकुट उनके मस्तककी शोभा बढ़ा रहा था। प्रफुल्ल मालती-पुष्पकी मालाओंसे उनके सारे अङ्ग विभूषित थे। करोड़ों गोपोंसे घिरे होनेके कारण राजाधिराजसे भी अधिक उनकी शोभा होती थी। उनकी अनुमति ले देवतालोग प्रसन्नतापूर्वक बारहवें द्वारपर गये, जहाँ बहुमूल्य रत्नोंकी बनी

हुई बहुत-सी वेदिकाएँ प्रकाशित हो रही थीं। वह विचित्र द्वार सबके लिये दुर्लभ, अदृश्य और अश्रुत था। वज्रमयी भीतोंपर अङ्कित चित्रोंके कारण उस द्वारकी सुन्दरता और मनोहरता बहुत बढ़ गयी थी। देवताओंने देखा बारहवें द्वारकी रक्षामें सुन्दरी गोपाङ्गनाएँ नियुक्त हुई हैं। वे सब-की-सब रूप-यौवनसे सम्पन्न, रत्नाभरणोंसे विभूषित, पीताम्बरधारिणी तथा बँधे हुए केश-कलापके भारसे सुशोभित थीं। उनके सारे अङ्ग सुस्निग्ध मालतीकी मालाओंसे अलंकृत थे। रत्नोंके बने हुए कंगन, बाजूबंद तथा नूपुर उन-उन अङ्गोंकी शोभा बढ़ाते थे। उनके दोनों कपोल दिव्य रत्नमय कुण्डलोंसे उद्भासित हो रहे थे। वे चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और कुंकुमके द्रवसे अपना शृङ्गार किये हुए थीं। वहाँ सौ कोटि गोपियोंमें एक श्रेष्ठ गोपी थी, जो श्रीहरिको भी परम प्रिय थी। उन करोड़ों गोपिकाओंको देखकर देवताओंको बड़ा विस्मय हुआ। मुने! उन सब गोपियोंसे अनुमति ले वे देवता प्रसन्नतापूर्वक दूसरे द्वारपर गये। इस तरह क्रमशः तीन द्वारोंपर उन्होंने देखा—श्रेष्ठ और अत्यन्त मनोहर गोपाङ्गनाएँ उनकी रक्षा कर रही हैं। वे सुन्दरियोंमें भी सुन्दरी, रमणीया, धन्या, मान्या और शोभाशालिनी हैं। सब-की-सब सौभाग्यमें बढ़ी-चढ़ी तथा श्रीराधिकाकी प्रिया हैं। सुरम्य भूषणोंसे भूषित हुई उन गोपसुन्दरियोंके अङ्गोंमें नूतन यौवनका अंकुर प्रकट हुआ है।

इस प्रकार वे तीनों द्वार स्वप्नकालिक अनुभवके समान अद्भुत, अश्रुत, अदृष्टपूर्व, अतिरमणीय और विद्वानोंके द्वारा भी अवर्णनीय थे। उन सबको देखकर और उन-उन गोपाङ्गनाओंसे बातचीत करके आश्चर्यचकित हुए वे तीनों देवेश्वर सोलहवें मनोहर द्वारपर गये, जो श्रीराधिकाके अन्तःपुरका द्वार था। वह सब द्वारोंमें प्रधान तथा केवल गोपाङ्गनागणोंद्वारा ही रक्षणीय था। श्रीराधाकी जो तैंतीस समवयस्का सखियाँ थीं, वे ही इस

द्वारका संरक्षण करती थीं। उन सबकी वेश-भूषा अवर्णनीय थी। वे नाना प्रकारके सद्गुणोंसे युक्त, रूप-यौवनसे सम्पन्न तथा रत्नमय अलंकारोंसे विभूषित थीं। रत्ननिर्मित कङ्कण, केयूर तथा नूपुर धारण किये हुए थीं। उनके कटिप्रदेश श्रेष्ठ रत्नोंकी बनी हुई क्षुद्र घण्टिकाओंसे अलंकृत थे। रत्ननिर्मित युगल कुण्डलोंसे उनके गण्डस्थलोंकी बड़ी शोभा हो रही थी। प्रफुल्ल मालतीकी मालाओंसे उनके वक्षःस्थलका मध्यभाग उद्भासित हो रहा था। उनके मुख-चन्द्र शरत्पूर्णमाके चन्द्रमाओंकी प्रभाको छीने लेते थे। पारिजातके पुष्पोंकी मालाओंसे उनके सुरम्य केशपाश आवेष्टित थे। वे भौति-भौतिके सुन्दर आभूषणोंसे विभूषित थीं। पके बिम्बफलके समान उनके लाल-लाल ओठ थे। मुखारविन्दोंपर मन्द मुस्कानकी छटा छा रही थी। पके अनारके दानोंकी भौति दन्तपंक्तियाँ उनकी शोभा बढ़ा रही थीं। मनोहर चम्पाके समान गौरवर्णवाली उन गोपकिशोरियोंके कटिभाग अत्यन्त कृश थे। उनकी नासिकाओंमें गजमुक्ताकी बुलाकें शोभा दे रही थीं। वे नासिकाएँ पक्षिराज गरुड़की सुन्दर चोंचकी शोभा धारण करती थीं। उनका चित्त नित्य मुकुन्दके चरणारविन्दोंमें लगा था। द्वारपर खड़े हुए निमेषरहित देवताओंने उन सबको देखा। वह द्वार श्रेष्ठ मणिरत्नोंकी वेदिकाओंसे सुशोभित था। इन्द्रनीलमणिके बहुत-से खम्भे उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। उनके बीच-बीचमें सिन्दूरी रंगकी लाल मणियाँ जड़ी थीं। उस द्वारको पारिजात-पुष्पोंकी मालाओंसे सजाया गया था। उन्हें छूकर बहनेवाली वायु वहाँ सर्वत्र सुगन्ध फैला रही थी। राधिकाके उस परम आश्चर्यमय अन्तःपुरके द्वारका अवलोकन करके देवताओंके मनमें श्रीकृष्ण-चरणारविन्दोंके दर्शनकी उत्कण्ठा जाग उठी। उन्होंने-उन सखियोंसे पूछकर शीघ्र ही द्वारके भीतर प्रवेश किया। उनके शरीरमें रोमाञ्च हो आया था।

भक्तिके उद्रेकसे उनकी आँखें भर आयी थीं। उनके मुख और कंधे कुछ-कुछ झुक गये थे। अब देवताओंने श्रीराधिकाके उस श्रेष्ठ अन्तःपुरको अत्यन्त निकटसे देखा। समस्त मन्दिरोंके मध्यभागमें एक मनोहर चतुःशाला थी, जिसकी रचना बहुमूल्य रत्नोंके सारभागसे की गयी थी। भौति-भौतिके हीरक-जटित मणिमय स्तम्भ उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। पारिजात-पुष्पोंकी मालाओंकी झालरोंसे उसे सजाया गया था। मोती, माणिक्य, श्वेत चँवर, दर्पण तथा बहुमूल्य रत्नोंके सारतत्त्वसे बने हुए कलश उस चतुःशालाको विभूषित कर रहे थे। रेशमी सूतमें गुँथे हुए चन्दन-पल्लवोंकी बन्दनवारसे विभूषित मणिमय स्तम्भ-समूह उसके प्राङ्गणको रमणीय बना रहे थे। चन्दन, अगुरु, कस्तूरी तथा कुंकुमके द्रवका वहाँ छिड़काव हुआ था। श्वेत धान्य, श्वेत पुष्प, मूँगा, फल, अक्षत, दूर्वादल और लाजा आदिके निर्मज्जन (निछावर)-से उसकी अपूर्व शोभा हो रही थी। फल, रत्न, रत्नकलश, सिन्दूर, कुंकुम और पारिजातकी मालाओंसे उसको सजाया गया था। फूलोंकी सुगन्धसे सुवासित वायु उस स्थानको सब ओरसे सौरभयुक्त बना रही थी। जो सर्वथा अनिर्वचनीय, अनिरूपित और ब्रह्माण्डमात्रमें दुर्लभ द्रव्य एवं वस्तुएँ थीं, उन्हींसे उस भव्य भवनको विभूषित किया गया था। वहाँ अत्यन्त सुन्दर रत्नमयी शय्या बिछी थी, जिसपर महीन एवं कोमल वस्त्रोंका बिछावन था। नारद! करोड़ों रत्नमय कलश तथा रत्ननिर्मित पात्र वहाँ सजाकर रखे गये थे, जो बहुमूल्य होनेके साथ ही बहुत सुन्दर थे। उनसे उस चतुःशालाकी बड़ी शोभा हो रही थी। नाना प्रकारके वाद्योंकी मधुर ध्वनि वहाँ गूँज रही थी। वीणा आदिके स्वर-यन्त्रोंके साथ गोपियोंका सुमधुर गीत सुनायी पड़ता था। मृदंग तथा अन्यान्य वाद्योंकी ध्वनिसे वह स्थान बड़ा मोहक जान पड़ता था। श्रीकृष्ण-तुल्य रूप, रंग और

वेश-भूषावाले गोपसमूहोंसे घिरे हुए उस अन्तः-पुरको झुंड-की-झुंड गोपाङ्गनाएँ, जो श्रीराधाकी सखियाँ थीं, सुशोभित कर रही थीं। श्रीराधा और श्रीकृष्णके गुणगानसम्बन्धी पदोंका संगीत वहाँ सब ओर सुनायी पड़ता था। ऐसे अन्तःपुरको देखकर वे देवता विस्मयसे विमुग्ध हो उठे। उन्होंने वहाँ मधुर गीत सुना और उत्तम नृत्य देखा। वे सब देवता वहाँ स्थिरभावसे खड़े हो गये। उन सबका चित्त ध्यानमें एकतान हो रहा था। उन देवेश्वरोंको वहाँ रमणीय रत्नसिंहासन दिखायी दिया, जो सौ धनुषके बराबर विस्तृत था। वह सब ओरसे मण्डलाकार दिखायी देता था। श्रेष्ठ रत्नोंके बने हुए छोटे-छोटे कलश-समूह उसमें जुड़े हुए थे। विचित्र पुतलियों, फूलों तथा चित्रमय काननोंसे उसकी बड़ी शोभा हो रही थी। ब्रह्मन्! वहाँ आपको एक अत्यन्त अद्भुत और आश्चर्यमय तेजःपुञ्ज दिखायी दिया, जो करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशमान था। वह दिव्य ज्योतिसे जाज्वल्यमान हो रहा था। ऊपर चारों ओर सात ताड़की दूरीमें उसका प्रकाश फैला हुआ था। सबके तेजको छीन लेनेवाला वह प्रकाशपुञ्ज सम्पूर्ण आश्रमको व्याप्त करके देदीप्यमान था। वह सर्वत्र व्यापक, सबका बीज तथा सबके नेत्रोंको अवरुद्ध कर देनेवाला था। उस तेजःस्वरूपको देखकर वे देवता ध्यानमग्न हो गये तथा भक्तिभावसे मस्तक एवं कंधे झुकाकर बड़ी श्रद्धाके साथ उसको प्रणाम करने लगे। उस समय परमानन्दकी प्राप्तिसे उनके नेत्रोंमें आँसू भर आये थे और सारे अङ्ग पुलकित हो गये थे। वे ऐसे जान पड़ते थे मानो उनके अभीष्ट मनोरथ पूर्ण हो गये हों। उन तेजःस्वरूप परमेश्वरको नमस्कार करके वे तीनों देवेश्वर उठकर खड़े हो गये और उन्हींका ध्यान करते हुए उस तेजके सामने गये। ध्यान करते-करते जगत्स्रष्टा ब्रह्माके दोनों हाथ जुड़ गये। नारद!

उन्होंने शिवको दाहिने और धर्मको बायें कर लिया तथा वे भक्तिके उद्रेकसे चित्तको ध्यानमग्न करके उन परात्पर, गुणातीत, परमात्मा जगदीश्वर श्रीकृष्णकी स्तुति करने लगे।

ब्रह्माजी बोले—जो वर, वरेण्य, वरद, वरदायकोंके कारण तथा सम्पूर्ण प्राणियोंकी उत्पत्तिके हेतु हैं; उन तेजःस्वरूप परमात्माको मैं नमस्कार करता हूँ। जो मङ्गलकारी, मङ्गलके योग्य, मङ्गलरूप, मङ्गलदायक तथा समस्त मङ्गलोंके आधार हैं; उन तेजोमय परमात्माको मैं प्रणाम करता हूँ। जो सर्वत्र विद्यमान, निर्लिप्त, आत्मस्वरूप, परात्पर, निरीह और अवितर्क्य हैं; उन तेजःस्वरूप परमेश्वरको नमस्कार है। जो सगुण, निर्गुण, सनातन, ब्रह्म, ज्योतिःस्वरूप, साकार एवं निराकार हैं; उन तेजोरूप परमात्माको मैं नमस्कार करता हूँ। प्रभो! आप अनिर्वचनीय, व्यक्त, अव्यक्त, अद्वितीय, स्वेच्छामय तथा सर्वरूप हैं। आप तेजःस्वरूप परमेश्वरको मैं नमस्कार करता हूँ। तीनों गुणोंका विभाग करनेके लिये आप तीन रूप धारण करते हैं; परंतु हैं तीनों गुणोंसे अतीत। समस्त देवता आपकी कलासे प्रकट हुए हैं। आप श्रुतियोंकी पहुँचसे भी परे हैं; फिर आपको देवता कैसे जान सकते हैं? आप सबके आधार, सर्वस्वरूप, सबके आदिकारण, स्वयं कारणरहित, सबका संहार करनेवाले तथा अन्तरहित हैं। आप तेजःस्वरूप परमात्माको नमस्कार है। जो सगुण रूप है, वही लक्ष्य होता है और विद्वान् पुरुष उसीका वर्णन कर सकते हैं। परंतु आपका रूप अलक्ष्य है; अतः मैं उसका वर्णन कैसे कर सकता हूँ? आप तेजोरूप परमात्माको मेरा प्रणाम है। आप निराकार होकर भी दिव्य आकार धारण करते हैं। इन्द्रियातीत होकर भी इन्द्रिययुक्त होते हैं। आप सबके साक्षी हैं; परंतु आपका साक्षी कोई नहीं है। आप तेजोमय परमेश्वरको मेरा नमस्कार

है। आपके पैर नहीं हैं तो भी आप चलनेकी योग्यता रखते हैं। नेत्रहीन होकर भी सबको देखते हैं। हाथ और मुखसे रहित होकर भी भोजन करते हैं। आप तेजोमय परमात्माको मेरा नमस्कार है। वेदमें जिस वस्तुका निरूपण है, विद्वान् पुरुष उसीका वर्णन कर सकते हैं। जिसका वेदमें भी निरूपण नहीं हो सका है, आपके उस तेजोमय स्वरूपको मैं नमस्कार करता हूँ।

जो सर्वेश्वर है, किंतु जिसका ईश्वर कोई नहीं है; जो सबका आदि है, परंतु स्वयं आदिसे रहित है तथा जो सबका आत्मा है, किंतु जिसका आत्मा दूसरा कोई नहीं है; आपके उस तेजोमय स्वरूपको मैं नमस्कार करता हूँ। मैं स्वयं जगत्का स्रष्टा और वेदोंको प्रकट करनेवाला हूँ। धर्मदेव जगत्के पालक हैं तथा महादेवजी संहारकारी हैं; तथापि हममेंसे कोई भी आपके उस तेजोमय स्वरूपका स्तवन करनेमें समर्थ नहीं है। आपकी सेवाके प्रभावसे वे धर्मदेव अपने रक्षककी रक्षा करते हैं। आपकी ही आज्ञासे आपके द्वारा निश्चित किये हुए समयपर महादेवजी जगत्का संहार करते हैं। आपके चरणारविन्दोंकी सेवासे ही सामर्थ्य पाकर मैं प्राणियोंके प्रारब्ध या भाग्यकी लिपिका लेखक तथा कर्म करनेवालोंके फलका दाता बना हुआ हूँ। प्रभो! हम तीनों आपके भक्त हैं और आप हमारे स्वामी हैं। ब्रह्माण्डमें बिम्बसदृश होकर हम विषयी हो रहे हैं। ब्रह्माण्ड अनन्त हैं और उनमें हम-जैसे सेवक कितने ही हैं। जैसे रेणु तथा उनके परमाणुओंकी गणना नहीं हो सकती, उसी प्रकार ब्रह्माण्डों और उनमें रहनेवाले ब्रह्मा आदिकी गणना असम्भव है। आप सबके उत्पादक परमेश्वर हैं। आपकी स्तुति करनेमें कौन समर्थ है? जिन

महाविष्णुके एक-एक रोम-कूपमें एक-एक ब्रह्माण्ड है, वे भी आपके ही सोलहवें अंश हैं। समस्त योगीजन आपके इस मनोवाञ्छित ज्योतिर्मय स्वरूपका ध्यान करते हैं। परंतु जो आपके भक्त हैं, वे आपकी दासतामें अनुरक्त रहकर सदा आपके चरणकमलोंकी सेवा करते हैं। परमेश्वर! आपका जो परम सुन्दर और कमनीय किशोर-रूप है, जो मन्त्रोक्त ध्यानके अनुरूप है, आप उसीका हमें दर्शन कराइये। जिसकी अङ्गकान्ति नूतन जलधरके समान श्याम है, जो पीताम्बरधारी तथा परम सुन्दर है, जिसके दो भुजाएँ हाथमें मुरली और मुखपर मन्द-मन्द मुसकान है, जो अत्यन्त मनोहर है, माथेपर मोरपंखका मुकुट धारण करता है, मालतीके पुष्पसमूहोंसे जिसका शृङ्गार किया गया है, जो चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और केसरके अङ्गरागसे चर्चित है, अमूल्य रत्नोंके सारतत्त्वसे निर्मित आभूषणोंसे विभूषित है, बहुमूल्य रत्नोंके बने हुए किरीट-मुकुट जिसके मस्तकको उद्भासित कर रहे हैं, जिसका मुखचन्द्र शरत्कालके प्रफुल्ल कमलोंकी शोभाको चुराये लेता है, जो पके बिम्बफलके समान लाल ओठोंसे सुशोभित है, परिपक्व अनारके बीजकी भाँति चमकीली दन्तपंक्ति जिसके मुखकी मनोरमताको बढ़ाती है, जो रास-रसके लिये उत्सुक हो केलि-कदम्बके नीचे खड़ा है, गोपियोंके मुखोंकी ओर देखता है तथा श्रीराधाके वक्षःस्थलपर विराजित है; आपके उसी केलि-रसोत्सुक रूपको देखनेकी हम सबकी इच्छा है। ऐसा कहकर विश्वविधाता ब्रह्मा उन्हें बारंबार प्रणाम करने लगे। धर्म और शंकरने भी इसी स्तोत्रसे उनका स्तवन किया तथा नेत्रोंमें आँसू भरकर बारंबार वन्दना की*।

* वरं वरेण्यं वरदं वरदानं च कारणम् । कारणं सर्वभूतानां तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥

मङ्गल्यं मङ्गलाहं च मङ्गलं मङ्गलप्रदम् । समस्तमङ्गलाधारं तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥

मुने! उन त्रिदशेश्वरोंने खड़े-खड़े पुनः स्तवन किया। वे सब-के-सब वहाँ भगवान् श्रीकृष्णके तेजसे व्याप्त हो रहे थे। धर्म, शिव और ब्रह्माजीके द्वारा किये गये इस स्तवराजको जो प्रतिदिन श्रीहरिके पूजाकालमें भक्तिपूर्वक पढ़ता है, वह उनकी अत्यन्त दुर्लभ और दुर्दुर्लभ भक्ति प्राप्त कर लेता है। देवता, असुर और मुनीन्द्रोंको श्रीहरिका दास्य दुर्लभ है; परंतु इस स्तोत्रका पाठ करनेवाला उसे पा लेता है। साथ ही अणिमा आदि सिद्धियों तथा सालोक्य आदि चार प्रकारकी मुक्तियोंको भी प्राप्त कर लेता है।

इस लोकमें भी वह भगवान् विष्णुके समान ही विख्यात एवं पूजित होता है; इसमें संशय नहीं है। निश्चय ही उसे वाक्सिद्धि और मन्त्रसिद्धि भी सुलभ हो जाती है। वह सम्पूर्ण सौभाग्य और आरोग्य लाभ करता है। उसके यशसे सारा जगत् पूर्ण हो जाता है। वह इस लोकमें पुत्र, विद्या, कविता, स्थिर लक्ष्मी, साध्वी सुशीला पतिव्रता पत्नी, सुस्थिर संतान तथा चिरकालस्थायिनी कीर्ति प्राप्त कर लेता है और अन्तमें उसे श्रीकृष्णके निकट स्थान प्राप्त होता है।

(अध्याय ५)

~~~~~

स्थितं सर्वत्र निर्लिप्तमात्मरूपं परात्परम् । निरीहमवितर्क्यं च तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥  
 सगुणं निर्गुणं ब्रह्म ज्योतीरूपं सनातनम् । साकारं च निराकारं तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥  
 त्वमनिर्वचनीयं च व्यक्तमव्यक्तमेककम् । स्वेच्छामयं सर्वरूपं तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥  
 गुणत्रयविभागाय रूपत्रयधरं परम् । कलया ते सुराः सर्वे किं जानन्ति श्रुतेः परम् ॥  
 सर्वाधारं सर्वरूपं सर्वबीजमबीजकम् । सर्वान्तकमनन्तं च तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥  
 लक्ष्यं यद् गुणरूपं च वर्णनीयं विचक्षणैः । किं वर्णयाम्यलक्ष्यं ते तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥  
 अशरीरं विग्रहवदिन्द्रियवदतीन्द्रियम् । यदसाक्षि सर्वसाक्षि तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥  
 गमनार्हमपादं यदचक्षुः सर्वदर्शनम् । हस्तास्यहीनं यद् भोक्तुं तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥  
 वेदे निरूपितं वस्तु सन्तः शक्ताश्च वर्णितुम् । वेदेऽनिरूपितं यत्ते तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥  
 सर्वेशं यदनीशं यत् सर्वादि यदनादि यत् । सर्वात्मकमनात्मं यत्ते तेजोरूपं नमाम्यहम् ॥  
 अहं विधाता जगतां वेदानां जनकः स्वयम् । पाता धर्मो हरो हर्ता स्तोतुं शक्नो न कोऽपि यत् ॥  
 सेवया तव धर्मोऽयं रक्षितारं च रक्षति । तवाज्ञया च 'संहर्ता' त्वया काले निरूपिते ॥  
 नियेकलिपिकर्ताहं त्वत्पादाम्भोजसेवया । कर्मिणां फलदाता च त्वं भक्तानां च नः प्रभुः ॥  
 ब्रह्माण्डे विम्बसदृशा भूत्वा विषयिणो वयम् । एवं कतिविधाः सन्ति तेष्वनन्तेषु सेवकाः ॥  
 यथा न संख्या रेणूनां तथा तेषामणीयसाम् । सर्वेषां जनकक्षेशो यस्त्वां स्तोतुं च कः क्षमः ॥  
 एकैकलोमविवरे ब्रह्माण्डमेकमेककम् । यस्यैव महतो विष्णोः षोडशांशस्तवैव सः ॥  
 ध्यायन्ति योगिनः सर्वे तवैतद्रूपमीप्सितम् । त्वद्भक्ता दास्यनिरताः सेवन्ते चरणाम्बुजम् ॥  
 किशोरं सुन्दरतरं यद्रूपं कमनीयकम् । मन्त्रध्यानानुरूपं च दर्शयास्माकमीश्वर ॥  
 नवीनजलदश्यामं पीताम्बरधरं परम् । द्विभुजं मुरलीहस्तं सस्मितं सुमनोहरम् ॥  
 मयूरपुच्छचूडं च मालतीजालमण्डितम् । चन्दनागुरुकस्तूरीकुङ्कुमद्रवचर्चितम् ॥  
 अमूल्यरत्नसाराणां भूषणैश्च विभूषितम् । अमूल्यरत्नरचितकिरीटमुकुटोज्ज्वलम् ॥  
 शरत्प्रफुल्लकमलप्रभामोघ्यास्यचन्द्रकम् । पक्वविम्बसमानेन ह्यधरीष्टेन राजितम् ॥  
 पक्वदाडिमबीजाभदन्तपङ्क्तिमनोरमम् । केलिकदम्बमूले च स्थितं रासरसोत्सुकम् ॥  
 गोपीवक्त्राणि पश्यन्तं राधावक्षःस्थलस्थितम् । एवं वाञ्छास्ति रूपं ते द्रष्टुं केलिरसोत्सुकम् ॥  
 इत्येवमुक्त्वा विश्वसृद् प्रणनाम पुनः पुनः । एवं स्तोत्रेण तुष्टाव धर्मोऽपि शंकरः स्वयम् ।  
 ननाम भूयो भूयश्च साश्रुपूर्णविलोचनः ॥

(श्रीकृष्णजन्मखण्ड ५। १४-१२०)

देवताओंद्वारा तेजःपुञ्जमें श्रीकृष्ण और राधाके दर्शन तथा स्तवन, श्रीकृष्णद्वारा देवताओंका स्वागत तथा उन्हें आश्वासन-दान, भगवद्भक्तके महत्त्वका वर्णन, श्रीराधासहित गोप-गोपियोंको व्रजमें अवतीर्ण होनेके लिये श्रीहरिका आदेश, सरस्वती और लक्ष्मीसहित वैकुण्ठवासी नारायणका तथा क्षीरशायी विष्णुका शुभागमन, नारायण और विष्णुका श्रीकृष्णके स्वरूपमें लीन होना, संकर्षण तथा पुत्रोंसहित पार्वतीका आगमन, देवताओं और देवियोंको पृथ्वीपर जन्म ग्रहण करनेके लिये प्रभुका आदेश, किस देवताका कहाँ और किस रूपमें जन्म होगा—इसका विवरण, श्रीराधाकी चिन्ता तथा श्रीकृष्णका उन्हें सान्त्वना देते हुए अपनी और उनकी एकताका प्रतिपादन करना, फिर श्रीहरिकी आज्ञासे राधा और गोप-गोपियोंका नन्द-गोकुलमें गमन

श्रीनारायण कहते हैं—मुने! उस तेजः-पुञ्जके सामने ध्यान और स्तुति करके खड़े हुए उन देवताओंने उस तेजोराशिके मध्यभागमें एक कमनीय शरीरको देखा, जो सजल जलधरके समान श्याम-कान्तिसे युक्त एवं परम मनोहर था। उसके मुखपर मन्द मुस्कानकी छटा छा रही थी। उसका रूप परमानन्दजनक तथा त्रिलोकीके चित्तको मोह लेनेवाला था। उसके दोनों गालोंपर मकराकार कुण्डल जगमगा रहे थे। उत्तम रत्नोंके बने हुए नूपुरोंसे उसके चरणारविन्दोंकी बड़ी शोभा हो रही थी। अग्निशुद्ध दिव्य पीताम्बरसे उस श्रीविग्रहकी अपूर्व शोभा हो रही थी। वह ऐसा जान पड़ता था, मानो स्वेच्छा और कौतूहलवश श्रेष्ठ मणियों और रत्नोंके सारतत्त्वसे रचा गया हो। मनोरञ्जनकी सामग्री मुरलीसे संलग्न बिम्बसदृश अरुण अधरोंके कारण उसके मुखकी मनोहरता बढ़ गयी थी। वह शुभ दृष्टिसे देखता और भक्तोंपर अनुग्रहके लिये कातर जान पड़ता था। उत्तम रत्नोंकी गुटिकासे युक्त किवाड़—जैसा विशाल वक्षःस्थल प्रकाशित हो रहा था। कौस्तुभमणिके कारण बढ़े हुए तेजसे वह देदीप्यमान दिखायी देता था।

उसी तेजःपुञ्जमें देवताओंने मनोहर अङ्गवाली श्रीराधाको भी देखा। वे मन्द मुस्कराहटके साथ अपनी ओर देखते हुए प्रियतमको तिरछी चितवनसे निहार रही थीं। मोतियोंकी पाँतको तिरस्कृत करनेवाली दन्तावली उनके मुखकी शोभा बढ़ा रही थी। उनका प्रसन्न मुखारविन्द मन्द हास्यकी छटासे सुशोभित था। नेत्र शरत्कालके प्रफुल्ल कमलोंकी छबिको लज्जित कर रहे थे। शरत्पूर्णिमाके चन्द्रमाकी आभाको निन्दित करनेवाले मुखके कारण वे बड़ी मनोहारिणी जान पड़ती थीं। दुपहरियाके फूलकी शोभाको चुरानेवाले उनके लाल-लाल अधर और ओष्ठ बड़े मनोहर थे तथा वे बहुत सुन्दर वस्त्र धारण किये हुए थीं। उनके युगल चरणारविन्दोंमें झनकारते हुए मञ्जीर शोभा दे रहे थे। नखोंकी पंक्ति श्रेष्ठ मणिरत्नोंकी प्रभाको छीने लेती थी। कुंकुमकी आभाको तिरस्कृत कर देनेवाले चरणतलके स्वाभाविक रागसे वे सुशोभित थीं। बहुमूल्य रत्नोंके सारतत्त्वसे बने हुए पाशकोंकी श्रेणी उन्हें विभूषित कर रही थी। अग्निशुद्ध दिव्य वस्त्र धारण करके वे अत्यन्त उद्भासित हो रही थीं। श्रेष्ठ महामणियोंके सारतत्त्वसे बनी हुई काञ्चीसे

उनका मध्यभाग अलंकृत था। उत्तम रत्नोंके हार, बाजूबंद और कंगनसे वे विभूषित थीं। उत्तम रत्नोंके द्वारा रचित कुण्डलोंसे उनके कपोल उड़ीस हो रहे थे। कानोंमें श्रेष्ठ मणियोंके कर्णभूषण उनकी शोभा बढ़ा रहे थे। पक्षिराज गरुड़की चोंचके समान नुकीली नासिकामें गजमुक्ताकी बुलाक शोभा दे रही थी। उनके घुँघराले बालोंकी वेणीमें मालतीकी माला लपेटी हुई थी। वक्षःस्थलमें अनेक कौस्तुभमणियोंकी प्रभा फैली हुई थी। पारिजातके फूलोंकी माला धारण करनेसे उनकी रूपराशि परम उज्ज्वल जान पड़ती थी। उनके हाथकी अंगुलियाँ रत्नोंकी अँगूठियोंसे विभूषित थीं। दिव्य शङ्खके बने हुए विचित्र रागविभूषित रमणीय भूषण उन्हें विभूषित कर रहे थे। वे शङ्खभूषण महीन रेशमी डोरेमें गुँथे हुए थे। उत्तम रत्नोंके सारतत्त्वकी बनी हुई गुटिकाको लाल डोरेमें गुँथकर उसके द्वारा उन्होंने अपने-आपको सज्जित किया था। तपाये हुए सुवर्णके समान अङ्गकान्तिको सुन्दर वस्त्रसे आच्छादित करके वे बड़ी शोभा पा रही थीं। उनका शरीर अत्यन्त मनोहर था। नितम्बदेश और श्रोणिभागके सौन्दर्यसे वे और भी सुन्दरी दिखायी देती थीं। वे समस्त आभूषणोंसे विभूषित थीं और समस्त आभूषण उनके सौन्दर्यसे विभूषित थे। उन श्रेष्ठ परमेश्वर और सुन्दरी परमेश्वरीका दर्शन करके सब देवताओंको बड़ा आश्चर्य हुआ। उनके सम्पूर्ण मनोरथ पूरे हो गये थे। अतः उन सब देवताओंने पुनः भगवान्की स्तुति आरम्भ की—

**ब्रह्मोवाच**

तव चरणसरोजे मन्मनश्चञ्चरीको

भ्रमत् सततमीश प्रेमभक्त्या सरोजे।

भवनमरणरोगात् पाहि शान्त्यौषधेन

सुदृढसुपरिपक्वां देहि भक्तिं च दास्यम्॥

ब्रह्माजी बोले—परमेश्वर! मेरा चित्तरूपी

चञ्चरीक (भ्रमर) आपके चरणारविन्दमें निरन्तर प्रेम-भक्तिपूर्वक भ्रमण करता रहे। शान्तिरूपी औषध देकर मेरी जन्म-मरणके रोगसे रक्षा कीजिये तथा मुझे सुदृढ़ एवं अत्यन्त परिपक्व भक्ति और दास्यभाव दीजिये।

**शङ्कर उवाच**

भवजलधिनिमग्नश्चित्तमीनो मदीयो

भ्रमति सततमस्मिन् घोरसंसारकूपे।

विषयमतिविनिन्द्यं सृष्टिसंहाररूप-

मपनय तव भक्तिं देहि पादारविन्दे॥

भगवान् शंकरने कहा—प्रभो! भवसागरमें डूबा हुआ मेरा चित्तरूपी मत्स्य सदा ही इस घोर संसाररूपी कूपमें चक्कर लगाता रहता है। सृष्टि और संहार यही इसका अत्यन्त निन्दनीय विषय है। आप इस विषयको दूर कीजिये और अपने चरणारविन्दोंकी भक्ति दीजिये।

**धर्म उवाच**

तव निजजनसाङ्गं संगमो मे मदीश

भवतु विषयबन्धच्छेदने तीक्ष्णखड्गः।

तव चरणसरोजे स्थानदानैकहेतु-

र्जनुषि जनुषि भक्तिं देहि पादारविन्दे॥

धर्म बोले—मेरे ईश्वर! आपके आत्मीयजनों (भक्तों)-के साथ मेरा सदा समागम होता रहे, जो विषयरूपी बन्धनको काटनेके लिये तीखी तलवारका काम देता है तथा आपके चरणारविन्दोंमें स्थान दिलानेका एकमात्र हेतु है। आप जन्म-जन्ममें मुझे अपने चरणारविन्दोंकी भक्ति प्रदान कीजिये।

भगवान् नारायण कहते हैं—इस प्रकार स्तुति करके पूर्णमनोरथ हुए वे तीनों देवता कामनाओंकी पूर्ति करनेवाले श्रीराधावल्लभके सामने खड़े हो गये। देवताओंकी यह स्तुति सुनकर कृपानिधान श्रीकृष्णके मुखारविन्दपर मन्द मुस्कान खिल उठी। वे उनसे हितकर एवं सत्य वचन बोले।

श्रीकृष्णने कहा—तुम सब लोग इस समय मेरे धाममें पधारे हो। यहाँ तुम्हारा स्वागत है, स्वागत है। शिवके आश्रयमें रहनेवाले लोगोंका तो कुशल पूछना उचित नहीं है। यहाँ आकर तुम निश्चिन्त हो जाओ। मेरे रहते तुम्हें क्या चिन्ता है? मैं समस्त जीवोंके भीतर विराजमान हूँ; परन्तु स्तुतिसे ही प्रत्यक्ष होता हूँ। तुम्हारा जो अभिप्राय है, वह सब मैं निश्चितरूपसे जानता हूँ। देवताओ! शुभ-अशुभ जो भी कर्म है, वह समयपर ही होगा। बड़ा और छोटा—सब कार्य कालसे ही सम्पन्न होता है। वृक्ष अपने-अपने समयपर ही सदा फूलते और फलते हैं। समयपर ही उनके फल पकते हैं और समयपर ही वे कच्चे फलोंसे युक्त होते हैं। सुख-दुःख, सम्पत्ति-विपत्ति, शोक-चिन्ता तथा शुभ-अशुभ—सब अपने-अपने कर्मोंके फल हैं और सभी समयपर ही उपस्थित होते हैं। तीनों लोकोंमें न तो कोई किसीका प्रिय है और न अप्रिय ही है। समय आनेपर कार्यवश सभी लोग अप्रिय अथवा प्रिय होते हैं। तुमलोगोंने देखा है, पृथ्वीपर बहुत-से राजा और मनु हुए और वे सभी अपने-अपने कर्मोंके फलके परिपाकसे कालके अधीन हो गये। तुमलोगोंका यहाँ गोलोकमें जो एक क्षण व्यतीत हुआ है, उतनेमें ही पृथ्वीपर सात मन्वन्तर बीत गये। सात इन्द्र समाप्त हो गये। इस समय आठवें इन्द्र चल रहे हैं। इस प्रकार मेरा कालचक्र दिन-रात भ्रमण करता रहता है। इन्द्र, मनु तथा राजा सभी लोग कालके वशीभूत हो गये। उनकी कीर्ति, पृथ्वी, पुण्य और पापकी कथामात्र शेष रह गयी है। इस समय भी भूमिपर बहुत-से राजा दुष्ट और भगवन्निन्दक हैं। उनके बल और पराक्रम महान् हैं। परन्तु समयानुसार वे सब-के-सब कालान्तक यमके ग्रास हो जायेंगे। यह काल इस समय भी मेरी आज्ञासे उपस्थित है। वायु मेरी आज्ञा मानकर ही निरन्तर

बहती रहती है। मेरी आज्ञासे ही आग जलती और सूर्य तपते हैं। देवताओ! मेरी आज्ञासे ही सब शरीरोंमें रोग निवास करते हैं। समस्त प्राणियोंमें मृत्युका संचार होता है तथा वे समस्त जलधर वर्षा करते हैं। मेरे शासनसे ही ब्राह्मण ब्राह्मणत्वमें, तपोधन तपस्यामें, ब्रह्मर्षि ब्रह्ममें और योगी योगमें निष्ठा रखते हैं। वे सब-के-सब मेरे भयसे भीत होकर ही स्वधर्म-कर्मके पालनमें तत्पर हैं। जो मेरे भक्त हैं वे सदा निःशङ्क रहते हैं; क्योंकि वे कर्मका निर्मूलन करनेमें समर्थ हैं।

देवताओ! मैं कालका भी काल हूँ। विधाताका भी विधाता हूँ। संहारकारीका भी संहारक तथा पालकका भी पालक परात्पर परमेश्वर हूँ। मेरी आज्ञासे ये शिव संहार करते हैं; इसलिये इनका नाम 'हर' है। तुम मेरे आदेशसे सृष्टिके लिये उद्यत रहते हो; इसलिये 'विश्वस्रष्टा' कहलाते हो और धर्मदेव रक्षाके कारण ही 'पालक' कहलाते हैं। ब्रह्मासे लेकर तृणपर्यन्त सबका ईश्वर मैं ही हूँ। मैं ही कर्मफलका दाता तथा कर्मोंका निर्मूलन करनेवाला हूँ। मैं जिनका संहार करना चाहूँ, उनकी रक्षा कौन कर सकता है? तथा मैं जिनका पालन करूँ, उनको मारनेवाला भी कोई नहीं है। मैं सबका सृजन, पालन और संहार करता हूँ। परन्तु मेरे भक्त नित्यदेही हैं। उनके संहारमें मैं भी समर्थ नहीं हूँ। भक्त सदा मेरे पीछे चलते हैं और मेरे चरणोंकी आराधनामें तत्पर रहते हैं; अतः मैं भी सदा भक्तोंके निकट उनकी रक्षाके लिये मौजूद रहता हूँ। ब्रह्माण्डमें सभी नष्ट होते और बारंबार जन्म लेते हैं; परन्तु मेरे भक्तोंका नाश नहीं होता है। वे सदा निःशङ्क और निरापद रहते हैं। इसीलिये समस्त विद्वान् पुरुष मेरे दास्यभावकी अभिलाषा रखते हैं; दूसरे किसी वरकी नहीं। जो मुझसे दास्यभावकी याचना करते हैं; वे धन्य हैं। दूसरे सब-के-सब वञ्चित हैं। जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि, भय और यमयातना—ये सारे कष्ट दूसरे-

दूसरे कर्मपरायण लोगोंको प्राप्त होते हैं; मेरे भक्तोंको नहीं। मेरे भक्त पाप या पुण्य किसी भी कर्ममें लिप्त नहीं होते हैं। मैं उनके कर्मभोगोंका निश्चय ही नाश कर देता हूँ। मैं भक्तोंका प्राण हूँ और भक्त भी मेरे लिये प्राणोंके समान हैं। जो नित्य मेरा ध्यान करते हैं, उनका मैं दिन-रात स्मरण करता हूँ\*। सोलह अरोंसे युक्त अत्यन्त तीखा सुदर्शन नामक चक्र महान् तेजस्वी है। सम्पूर्ण जीवधारियोंमें जितना भी तेज है, वह सब उस चक्रके तेजके सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं है। उस अभीष्ट चक्रको भक्तोंके निकट उनकी रक्षाके लिये नियुक्त करके भी मुझे प्रतीति नहीं होती; इसलिये मैं स्वयं भी उनके पास जाता हूँ। तुम सब देवता और प्राणाधिका लक्ष्मी भी मुझे भक्तसे बढ़कर प्यारी नहीं है। देवेश्वरो! भक्तोंका भक्तिपूर्वक दिया हुआ जो द्रव्य है, उसको मैं बड़े प्रेमसे ग्रहण करता हूँ, परन्तु अभक्तोंकी दी हुई कोई भी वस्तु मैं नहीं खाता। निश्चय ही उसे राजा बलि ही भोगते हैं। जो अपने स्त्री-पुत्र आदि स्वजनोंको त्यागकर दिन-रात मुझे ही याद करते हैं, उनका स्मरण मैं भी तुमलोगोंको त्यागकर अहर्निश किया करता हूँ। जो लोग भक्तों, ब्राह्मणों तथा गौओंसे द्वेष रखते हैं, यज्ञों और देवताओंकी हिंसा करते हैं, वे शीघ्र ही उसी तरह नष्ट हो जाते हैं, जैसे प्रज्वलित अग्निमें तिनके। जब मैं उनका घातक बनकर उपस्थित होता हूँ, तब कोई भी उनकी रक्षा नहीं कर पाता†। देवताओ! मैं पृथ्वीपर जाऊँगा। अब तुमलोग भी अपने स्थानको पधारो और शीघ्र ही

अपने अंशरूपसे भूतलपर अवतार लो।

ऐसा कहकर जगदीश्वर श्रीकृष्णने गोपों और गोपियोंको बुलाकर मधुर, सत्य एवं समयोचित बातें कहीं—‘गोपो और गोपियो! सुनो। तुम सब-के-सब नन्दरायजीका जो उत्कृष्ट व्रज है, वहाँ जाओ (उस व्रजमें अवतार ग्रहण करो)। राधिके! तुम भी शीघ्र ही वृषभानुके घर पधारो। वृषभानुकी प्यारी स्त्री बड़ी साध्वी हैं। उनका नाम कलावती है। वे सुबलकी पुत्री हैं और लक्ष्मीके अंशसे प्रकट हुई हैं। वास्तवमें वे पितरोंकी मानसी कन्या हैं तथा नारियोंमें धन्या और मान्या समझी जाती हैं। पूर्वकालमें दुर्वासाके शापसे उनका व्रजमण्डलमें गोपके घरमें जन्म हुआ है। तुम उन्हीं कलावतीकी पुत्री होकर जन्म ग्रहण करो। अब शीघ्र नन्दव्रजमें जाओ। कमलानने! मैं बालकरूपसे वहाँ आकर तुम्हें प्राप्त करूँगा। राधे! तुम मुझे प्राणोंसे भी अधिक प्यारी हो और मैं भी तुम्हें प्राणोंसे भी बढ़कर प्यारा हूँ। हम दोनोंका कुछ भी एक-दूसरेसे भिन्न नहीं है। हम सदैव एक-रूप हैं।’

मुने! यह सुनकर श्रीराधा प्रेमसे विह्वल होकर वहाँ रो पड़ी और अपने नेत्र-चकोरोंद्वारा श्रीहरिके मुखचन्द्रकी सौन्दर्य-सुधाका पान करने लगीं। ‘गोपो और गोपियो! तुम भूतलपर श्रेष्ठ गोपोंके शुभ घर-घरमें जन्म लो।’ श्रीकृष्णकी यह बात पूरी होते ही वहाँ सब लोगोंने देखा, एक उत्तम रथ (विमान) आ गया। वह श्रेष्ठ मणिरत्नोंके सारतत्त्व तथा हीरकसे विभूषित था। लाखों श्वेत चैवर तथा दर्पण उसकी शोभा बढ़ा

\* अहं प्राणाश्च भक्तानां भक्ताः प्राणा ममापि च । ध्यायन्ति ये च मां नित्यं तां स्मरामि दिवानिशम्॥

(श्रीकृष्णजन्मखण्ड ६। ५२)

† स्त्रीपुत्रस्वजनांस्त्यक्त्वा ध्यायन्ते मामहर्निशम् । युष्मान् विहाय तान् नित्यं स्मराम्यहमहर्निशम्॥  
द्वेष्टा सदा मे भक्तानां ब्राह्मणानां गवामपि । क्रतूनां देवतानां च हिंसां कुर्वन्ति निश्चितम्॥  
तदाऽचिरं ते नश्यन्ति यथा वह्नी तृणानि च । न कोऽपि रक्षिता तेषां मयि हन्तर्युपस्थिते॥

(श्रीकृष्णजन्मखण्ड ६। ५८—६०)



रहे थे। वह अग्रिशुद्ध सूक्ष्म गेरुए वस्त्रोंसे सजाया गया था। श्रेष्ठ रत्नोंके बने हुए सहस्रों कलश उसकी श्रीवृद्धि कर रहे थे। पारिजातपुष्पोंके हारोंसे उस विमानको सुसज्जित किया गया था। सोनेका बना हुआ वह सुन्दर विमान अनुपम तेजःपुञ्जमय दिखायी देता था। उससे सैकड़ों सूर्योंके समान प्रकाश फैल रहा था तथा उस विमानपर बहुत-से श्रेष्ठ पार्षद बैठे हुए थे। उस विमानमें एक श्यामसुन्दर कमनीय पुरुष दृष्टिगोचर हुए, जिनके चार हाथोंमें शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म शोभा पा रहे थे। उन श्रेष्ठ पुरुषने पीताम्बर पहन रखा था। उनके मस्तकपर किरीट, कानोंमें कुण्डल और वक्षःस्थलपर वनमाला शोभा दे रही थी। उनके श्रीअङ्ग चन्दन, अगुरु, कस्तूरी तथा केसरके अङ्गरागसे अलंकृत थे। चार भुजाएँ और मुस्कराता हुआ मनोहर मुख देखने ही योग्य थे। भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये वे आकुल दिखायी देते थे। श्रेष्ठ मणिरत्नोंके सारातिसार तत्त्वसे बने हुए आभूषण उनके अङ्गोंकी शोभा बढ़ा रहे थे। उनके वामभागमें सुरम्य शरीरवाली शुक्लवर्णा, मनोहरा, ज्ञानरूपा एवं विद्याकी अधिष्ठात्री देवी सरस्वती दिखायी दीं, जिनके हाथोंमें वेणु, वीणा और पुस्तकें थीं। वे भी भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये कातर जान पड़ती थीं। उन महानारायणके दाहिने भागमें शरत्कालके चन्द्रमाकी-सी प्रभा तथा तपाये हुए सुवर्णकी भाँति कान्तिसे प्रकाशमान परम मनोहरा और रमणीया देवी लक्ष्मी दृष्टिगोचर हुई, जिनके मुखारविन्दपर मन्द मुस्कान खेल रही थी। उनके सुन्दर कपोल उत्तम रत्नमय कुण्डलोंसे जगमगा रहे थे। बहुमूल्य रत्न, महामूल्यवान् वस्त्र उनके श्रीअङ्गोंकी शोभा बढ़ाते थे। अमूल्य रत्नोंद्वारा निर्मित बाजूबंद और कंगन उनकी भुजाओंकी श्रीवृद्धि कर रहे थे। श्रेष्ठ रत्नोंके सारतत्त्वके बने हुए मञ्जीर अपनी मधुर झनकार फैला रहे थे। पारिजातके फूलोंकी मालाओंसे

वक्षःस्थल उज्ज्वल दिखायी देता था। उनकी वेणी प्रफुल्ल मालतीकी मालाओंसे अलंकृत थी। सुन्दरी रमाका मनोहर मुख शरत्कालके चन्द्रमाकी प्रभाको छीने लेता था। उनके भालदेशमें कस्तूरीबिन्दुसे युक्त सिन्दूरका तिलक शोभा दे रहा था। शरत्कालके प्रफुल्ल कमलोंके समान नेत्रोंमें मनोहर काजलकी रेखा शोभायमान थी। उनके हाथमें सहस्र दलोंसे संयुक्त लीलाकमल सुशोभित होता था। वे अपनी ओर देखनेवाले नारायणदेवको तिरछी चितवनसे निहार रही थीं। पत्नियों और पार्षदोंके साथ शीघ्र ही विमानसे उतरकर वे नारायणदेव गोप-गोपियोंसे भरी हुई उस रमणीय सभामें जा पहुँचे। उन्हें देखते ही ब्रह्मा आदि देवता, गोप और गोपी सब-के-सब सानन्द उठकर खड़े हो गये। सबके हाथ जुड़े हुए थे। देवर्षिगण सामवेदोक्त स्तोत्रद्वारा उनकी स्तुति करने लगे। उनकी स्तुति समाप्त होनेपर नारायणदेव आगे जाकर श्रीकृष्णविग्रहमें विलीन हो गये। यह परम आश्चर्यकी बात देखकर सबको बड़ा विस्मय हुआ।

इसी समय वहाँ एक दूसरा सुवर्णमय रथ आ पहुँचा। उससे जगत्का पालन करनेवाले त्रिलोकीनाथ विष्णु स्वयं उतरकर उस सभामें आये। उनके चार भुजाएँ थीं। वनमालासे विभूषित पीताम्बरधारी सम्पूर्ण अलंकारोंकी शोभासे सम्पन्न तथा करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशमान श्रीमान् विष्णु बड़े मनोहर दिखायी देते थे। वे मन्द-मन्द मुस्करा रहे थे। मुने! उन्हें देखते ही सब लोग उठकर खड़े हो गये। सबने प्रणाम करके उनका स्तवन किया। तत्पश्चात् वे भी वहाँ श्रीराधिकावल्लभ श्रीकृष्णके शरीरमें लीन हो गये। यह दूसरा महान् आश्चर्य देखकर उन सबको बड़ा विस्मय हुआ।

श्वेतद्वीपनिवासी श्रीविष्णुके श्रीकृष्णविग्रहमें विलीन हो जानेके बाद वहाँ तुरंत ही शुद्ध

स्फटिकमणिके समान गौरवर्णवाले संकर्षण नामक पुरुष पधारे। वे बड़ी उतावलीमें थे। उनके सहस्रों मस्तक थे तथा वे सौ सूर्योंके समान देदीप्यमान हो रहे थे। उनको आया देख सबने उन विष्णुस्वरूप संकर्षणका स्तवन किया। नारद! उन्होंने भी वहाँ आकर मस्तक झुकाकर राधिकेश्वरकी स्तुति की तथा सहस्रों मस्तकोंद्वारा भक्तिभावसे उनको प्रणाम किया। तत्पश्चात् धर्मके पुत्र-स्वरूप हम दोनों भाई नर और नारायण वहाँ गये। मैं तो श्रीकृष्णके चरणारविन्दमें लीन हो गया। किंतु नर अर्जुनके रूपमें दृष्टिगोचर हुआ। फिर ब्रह्मा, शिव, शेष और धर्म—ये चारों वहाँ एक स्थानपर खड़े हो गये।

इस बीचमें देवताओंने वहाँ दूसरा उत्तम रथ देखा, जो सुवर्णके सारतत्त्वका बना हुआ था और नाना प्रकारके रत्ननिर्मित उपकरणोंसे अलंकृत था। वह श्रेष्ठ मणियोंके सारतत्त्वसे संयुक्त, अग्निशुद्ध दिव्य वस्त्रसे सुसज्जित, श्वेत चँवर तथा दर्पणोंसे अलंकृत, सद्म-सारनिर्मित कलश-समूहसे विराजमान, पारिजात-पुष्पोंके मालाजालसे सुशोभित, सहस्र पहिर्योंसे युक्त, मनके समान तीव्रगामी और मनोहर था। ग्रीष्म-ऋतुके मध्याह्नकालिक मार्तण्डकी प्रभाको तिरस्कृत करनेवाला वह श्रेष्ठ विमान मोती, माणिक्य और हीरोंके समूहसे जाज्वल्यमान जान पड़ता था। उसमें विचित्र पुतलियों, पुष्प, सरोवरों और काननोंसे उसकी अद्भुत शोभा हो रही थी। मुने! वह देवताओं और दानवोंके रथोंसे बहुत बड़ा था। भगवान् शंकरकी प्रसन्नताके लिये विश्वकर्माने यत्नपूर्वक उस दिव्य रथका निर्माण किया था। वह पचास योजन ऊँचा और चार योजन विस्तृत था। रतिशय्यासे युक्त सैकड़ों प्रासाद उसकी शोभा बढ़ाते थे। उस विमानमें बैठी हुई मूलप्रकृति ईश्वरी देवी दुर्गाको भी देवताओंने देखा, जो रत्नमय अलंकारोंसे विभूषित थीं और अपनी दिव्य दीप्तिसे तपाये हुए सुवर्णके

सारभागकी प्रभाका अपहरण कर रही थीं। उन अनुपम तेजःस्वरूपा देवीके सहस्रों भुजाएँ थीं और उनमें भौति-भौतिके आयुध शोभा पा रहे थे। उनके प्रसन्न मुखपर मन्द हासकी छटा छा रही थी। वे भक्तोंपर कृपा करनेके लिये कातर दिखायी देती थीं। उनके गण्डस्थल और कपोल उत्तम रत्नमय कुण्डलोंसे उद्भासित हो रहे थे। रत्नेन्द्रसाररचित तथा मधुर झनकारसे युक्त मञ्जीरोंके कारण उनके चरणोंकी अपूर्व शोभा हो रही थी। श्रेष्ठ मणिनिर्मित मेखलासे मण्डित मध्यदेश अत्यन्त मनोहर दिखायी देता था। हाथोंमें श्रेष्ठ रत्नसारके बने हुए केयूर और कङ्कण शोभा दे रहे थे। मन्दार-पुष्पोंकी मालाओंसे अलंकृत वक्षःस्थल अत्यन्त उज्ज्वल जान पड़ता था। शरत्कालके सुधाकरकी आभाको तिरस्कृत करनेवाले सुन्दर मुखसे उनकी मनोहरता और बढ़ गयी थी। काजलकी काली रेखासे युक्त नेत्र शरत्कालके प्रफुल्ल नील कमलोंकी शोभाको लज्जित कर रहे थे। चन्दन, अगुरु तथा कस्तूरीद्वारा रचित चित्रपत्रक उनके भाल और कपोलको विभूषित कर रहे थे। नूतन बन्धुजीव-पुष्पके समान आभावाले लाल-लाल ओठके कारण उनके मुखकी शोभा और भी बढ़ गयी थी। उनकी दन्तावली मोतियोंकी पाँतकी प्रभाको लूटे लेती थी। प्रफुल्ल मालतीकी मालासे अलंकृत वेणी धारण करनेवाली वे देवी बड़ी ही सुन्दर थीं। गरुड़की चोंचके समान नुकीली नासिकाके अग्रभागमें लटकती हुई गजमुक्ताकी बुलाक अपूर्व छटा बिखेर रही थी। अग्निशुद्ध एवं अत्यन्त दीप्तिमान् वस्त्रसे वे उद्भासित हो रही थीं और दोनों पुत्रोंके साथ सिंहकी पीठपर बैठी थीं। उस रथसे उतरकर पुत्रोंसहित देवीने शीघ्रतापूर्वक श्रीकृष्णको प्रणाम किया। फिर वे एक श्रेष्ठ आसनपर बैठ गयीं। इसके बाद गणेश और कार्तिकेयने परात्पर श्रीकृष्ण, शंकर, धर्म, संकर्षण तथा ब्रह्माजीको नमस्कार किया।

उन दोनों देवेश्वरोंको निकट आया देख वे सब देवता उठकर खड़े हो गये। उन्होंने आशीर्वाद दिया और दोनोंको अपने पास बिठा लिया। देवता बड़ी प्रसन्नताके साथ गणेश और कार्तिकेयके साथ उत्तम वार्तालाप करने लगे। उस समय देवता और देवी उस सभामें श्रीहरिके सामने बैठ गये। उन्हें देख बहुसंख्यक गोप और गोपियाँ आश्चर्यसे चकित हो रही थीं। तदनन्तर श्रीकृष्णके मुखारविन्दपर मुस्कराहट खेलने लगी। वे लक्ष्मीसे बोले—‘सनातनी देवि! तुम नाना रत्नोंसे सम्पन्न भीष्मकके राजभवनमें जाओ और वहाँ विदर्भदेशकी महारानीके उदरसे जन्म धारण करो। साध्वी देवि! मैं स्वयं कुण्डिनपुरमें जाकर तुम्हारा पाणिग्रहण करूँगा।’

वे रमा आदि देवियाँ पार्वतीको देखकर शीघ्र ही उठकर खड़ी हो गयीं। उन्होंने ईश्वरीको रमणीय रत्न-सिंहासनपर बिठाया। विप्रवर नारद! पार्वती, लक्ष्मी और सरस्वती—ये तीनों देवियाँ परस्पर यथोचित कुशल-प्रश्न करके वहाँ एक आसनपर बैठीं। वे प्रेमपूर्वक गोप-कन्याओंसे वार्तालाप करने लगीं। कुछ गोपियाँ बड़ी प्रसन्नताके साथ उनके निकट बैठ गयीं। इसी समय जगदीश्वर श्रीकृष्णने वहाँ पार्वतीसे कहा—‘सृष्टि और संहार करनेवाली कल्याणमयी महामायास्वरूपिणी देवि! शुभे! तुम अंशरूपसे नन्दके व्रजमें जाओ और वहाँ नन्दके घर यशोदाके गर्भमें जन्म धारण करो। मैं भूतलपर गाँव-गाँवमें तुम्हारी पूजा करवाऊँगा। समस्त भूमण्डलमें, नगरों और वनोंमें मनुष्य वहाँकी अधिष्ठात्री देवीके रूपमें भक्तिभावसे तुम्हारी पूजा करेंगे और आनन्दपूर्वक नाना प्रकारके द्रव्य तथा दिव्य उपहार तुम्हें अर्पित करेंगे। शिवे! तुम ज्यों ही भूतलका स्पर्श करोगी, त्यों ही मेरे पिता वसुदेव यशोदाके सूतिकागारमें जाकर मुझे वहाँ स्थापित कर देंगे और तुम्हें लेकर चले

जायेंगे। कंसका साक्षात्कार होनेमात्रसे तुम पुनः शिवके समीप चली आओगी और मैं भूतलका भार उतारकर अपने धाममें आ जाऊँगा।’

ऐसा कहकर श्रीकृष्ण तुरंत ही छः मुखवाले स्कन्दसे बोले—वत्स सुरेश्वर! तुम अंशरूपसे भूतलपर जाओ और जाम्बवतीके गर्भसे जन्म ग्रहण करो। सब देवता अपने अंशसे पृथ्वीपर जायें और जन्म लें। मैं निश्चय ही पृथ्वीका भार हरण करूँगा।

नारद! ऐसा कहकर राधिकानाथ श्रेष्ठ सिंहासनपर बैठे। फिर देवता, देवियाँ, गोप और गोपियाँ भी बैठ गयीं। इसी बीचमें ब्रह्माजी श्रीहरिके सामने उठकर खड़े हो गये और हाथ जोड़कर विनयपूर्वक उन जगदीश्वरसे बोले।

ब्रह्माजीने कहा—प्रभो! इस सेवकके निवेदनपर ध्यान दीजिये। महाभाग! आज्ञा कीजिये कि भूतलपर किसके लिये कहाँ स्थान होगा। स्वामी ही सदा सेवकोंका भरण-पोषण और उद्धार करनेवाला है। सेवक वही है जो सदा भक्तिभावसे प्रभुकी आज्ञाका पालन करता है। कौन देवता किस रूपसे अवतार लेंगे? देवियाँ भी किस कलासे अवतीर्ण होंगी? भूतलपर कहाँ किसका निवास-स्थान होगा? और वह किस नामसे ख्याति प्राप्त करेगा?

ब्रह्माजीकी यह बात सुनकर जगदीश्वर श्रीकृष्णने इस प्रकार उत्तर दिया।

श्रीकृष्ण बोले—ब्रह्मन्! जिसके लिये जहाँ स्थान होगा, वह विधिवत् बता रहा हूँ, सुनो। कामदेव रुक्मिणीके पुत्र होंगे तथा शम्बरासुरके घरमें जो छायारूपसे स्थित है, वह सती मायावतीके नामसे प्रसिद्ध रति उनकी पत्नी होगी। तुम उन्हीं रुक्मिणीनन्दन प्रद्युम्नके पुत्र होओगे और तुम्हारा नाम अनिरुद्ध होगा। भारती शोणितपुरमें जाकर बाणासुरकी पुत्री होगी। जगदीश्वर अनन्त देवकीके गर्भसे आकृष्ट हो

रोहिणीके गर्भसे जन्म लेंगे। मायाद्वारा उस गर्भका संकर्षण होनेसे उनका नाम 'संकर्षण' होगा। सूर्यतनया यमुना गङ्गाके अंशके साथ भूतलपर कालिन्दी नामवाली पटरानी होंगी। तुलसी आधे अंशसे राजकन्या लक्ष्मणाके रूपमें अवतीर्ण होंगी। वेदमाता सावित्री नग्नजित्की पुत्री सती सत्याके नामसे प्रसिद्ध होंगी। वसुधा सत्यभामा और देवी सरस्वती शैव्या होंगी। रोहिणी राजकन्या मित्रविन्दा होंगी। सूर्यपत्नी संज्ञा अपनी कलासे जगद्गुरुकी पत्नी रत्नमाला होंगी। स्वाहा एक अंशसे सुशीलाके रूपमें अवतीर्ण होंगी। ये रुक्मिणी आदि नौ स्त्रियाँ हुईं। इसके अतिरिक्त पार्वती अपने आधे अंशसे जाम्बवती होंगी। ये दस पटरानियाँ बतायी गयी हैं।

समस्त देवताओंके अंश भूतलपर जायें। ब्रह्मन्! वे राजकुमार होकर युद्धमें मेरे सहायक बनेंगे। कमलाकी कलासे सोलह हजार राजकन्याएँ प्रकट होंगी, वे सब-की-सब मेरी रानियाँ बनेंगी। वे धर्मदेव अंशरूपसे पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर होंगे। वायुके अंशसे भीमसेनका और इन्द्रके अंशसे साक्षात् अर्जुनका प्रादुर्भाव होगा। अश्विनीकुमारोंके अंशसे नकुल और सहदेव प्रकट होंगे। सूर्यका अंश वीरवर कर्ण होगा और साक्षात् यमराज विदुर होंगे। कलिका अंश दुर्योधन, समुद्रका अंश शान्तनु, शंकरका अंश अश्वत्थामा और अग्रिका अंश द्रोण होगा। चन्द्रमाका अंश अभिमन्युके रूपमें प्रकट होगा। स्वयं वसु देवता भीष्म होंगे। कश्यपके अंशसे वसुदेव और अदितिके अंशसे देवकी होंगी। वसुके अंशसे नन्द-गोपका प्रादुर्भाव होगा। वसुकी पत्नी यशोदा होंगी। कमलाके अंशसे द्रौपदी होंगी, जिनका प्रादुर्भाव यज्ञकुण्डसे होगा। अग्रिके अंशसे महाबली धृष्टद्युम्नका जन्म होगा। शतरूपाके अंशसे सुभद्रा होंगी, जिनका जन्म देवकीके गर्भसे होगा। देवतालोग भारहारी होकर अपने अंशसे पृथ्वीपर अवतीर्ण हों। इसी

प्रकार देवपत्नियाँ भी अपनी कलासे भूतलपर पधारें।

नारद! ऐसा कहकर भगवान् श्रीकृष्ण चुप हो गये। वह सारा विवरण सुनकर प्रजापति ब्रह्मा वहाँ अपने स्थानपर जा बैठे। देवर्षे! श्रीकृष्णके वामभागमें वाग्देवी सरस्वती थीं। दाहिने भागमें लक्ष्मी थीं। अन्य सब देवता और पार्वतीदेवी सामने थीं। गोप और गोपियाँ भी उनके सम्मुख ही बैठी थीं। श्रीराधा श्यामसुन्दरके वक्षःस्थलमें विराजमान थीं। इसी समय ब्रजेश्वरी राधा अपने प्रियतमसे बोलीं।

राधिकाने कहा—नाथ! मैं कुछ कहना चाहती हूँ। प्रभो! इस दासीकी बात सुनो। मेरे प्राण चिन्तासे निरन्तर जल रहे हैं, चित्त चञ्चल हो रहा है। तुम्हारी ओर देखते समय मैं पलभरके लिये आँख बंद करने या पलक मारनेमें भी असमर्थ हो जाती हूँ। फिर प्राणनाथ! तुम्हारे बिना भूतलपर अकेली कैसे जाऊँगी? प्राणेश्वर! जीवनबन्धो! सच बताओ, वहाँ गोकुलमें कितने कालके पश्चात् तुम्हारे साथ मेरा अवश्य मिलन होगा। तुम्हें देखे बिना एक निमेष भी मेरे लिये सौ युगोंके समान प्रतीत होगा। वहाँ मैं किसे देखूँगी? कहाँ जाऊँगी? और कौन मेरी रक्षा करेगा? प्राणेश! तुम्हारे सिवा दूसरे किसी पिता, माता, भाई, बन्धु, बहिन अथवा पुत्रका मैं क्षणभर भी चिन्तन नहीं करती हूँ। मायापते! यदि तुम भूतलपर मुझे भेजकर मायासे आच्छन्न कर देना चाहते हो, वैभव देकर भुलाना चाहते हो तो मेरे समक्ष सच्ची प्रतिज्ञा करो। मधुसूदन! मेरा मनरूपी मधुप तुम्हारे मकरन्दयुक्त चरणारविन्दमें ही नित्य-निरन्तर भ्रमण करता रहे। जहाँ-जहाँ जिस योनिमें भी मेरा यह जन्म हो, वहाँ-वहाँ तुम मुझे अपना स्मरण एवं मनोवाञ्छित दास्यभाव प्रदान करोगे। मैं भूतलपर कभी भी इस बातको न भूलूँ कि तुम मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण हो, मैं



तुम्हारी प्रेयसी राधिका हूँ तथा हम दोनोंका प्रेमसौभाग्य शाश्वत है। प्रभो! यह उत्तम वर मुझे अवश्य दो। जैसे शरीर छायाके साथ और प्राण शरीरके साथ रहते हैं, उसी प्रकार हम दोनोंका जन्म एवं जीवन एक-दूसरेके साथ बीते। विभो! यह श्रेष्ठ वर मुझे दे दो। भगवन्! भूतलपर पहुँचकर भी कहीं हम दोनोंका पलभरके लिये भी वियोग न हो। यह वर मुझे दो। हेरे! मेरे प्राणोंसे ही तुम्हारा शरीर निर्मित हुआ है—मेरे प्राण तुम्हारे श्रीअङ्गोंसे विलग नहीं हैं। मेरी इस धारणाका कौन निवारण कर सकता है? मेरे शरीरसे ही तुम्हारी मुरली बनी है और मेरे मनसे ही तुम्हारे चरणोंका निर्माण हुआ है। तात्पर्य यह है कि मैं तुम्हारी मुरलीको अपना शरीर मानती हूँ और मेरा मन तुम्हारे चरणोंसे कभी विलग नहीं होता है। संसारमें कितने ही ऐसे स्त्री-पुरुष हैं, जो सामने एक-दूसरेकी स्तुति करते हैं; परंतु कहीं भी अपने प्रियतममें निरन्तर आसक्त रहनेवाली मुझ-जैसी प्रेयसी नहीं है। तुम्हारे शरीरके आधे भागसे किसने मेरा निर्माण किया है? हम दोनोंमें भेद है ही नहीं। अतः मेरा मन निरन्तर तुम्हींमें लगा रहता है। मेरी आत्मा, मेरा मन और मेरे प्राण जिस तरह तुममें स्थापित हैं, उसी तरह तुम्हारे मन, प्राण और आत्मा भी मुझमें ही स्थापित हैं। अतः विरहकी बात कानमें पड़ते ही आँखोंका पलक गिरना बंद हो गया है और हम दोनों आत्माओंके मन, प्राण निरन्तर दग्ध हो रहे हैं।

**श्रीकृष्ण बोले—**देवि! उत्तम आध्यात्मिक योग शोकका उच्छेद करनेवाला होता है। अतः उसे बताता हूँ, सुनो। यह योग योगीन्द्रोंके लिये भी दुर्लभ है। सुन्दरि! देखो, सारा ब्रह्माण्ड आधार और आधेयके रूपमें विभक्त है। इनमें भी आधारसे पृथक् आधेयकी सत्ता सम्भव नहीं है।

फलका आधार है फूल, फूलका आधार है पल्लव, पल्लवका आधार है तना या डाली तथा उसका भी आधार स्वयं वृक्ष है। वृक्षका आधार अंकुर है, जो बीजकी शक्तिसे सम्पन्न होता है। उस अंकुरका आधार बीज है, बीजका आधार पृथ्वी है, पृथ्वीके आधार शेषनाग हैं। शेषके आधार कच्छप हैं, कच्छपका आधार वायु है और वायुका आधार मैं हूँ। मेरी आधारस्वरूपा तुम हो; क्योंकि मैं सदा तुममें ही स्थित रहता हूँ। तुम शक्तियोंका समूह और मूलप्रकृति ईश्वरी हो। शरीररूपिणी तथा त्रिगुणाधार-स्वरूपिणी भी तुम्हीं हो। मैं तुम्हारा आत्मा निरीह हूँ। तुम्हारा संयोग प्राप्त करके ही चेष्टावान् होता हूँ। शरीरके बिना आत्मा कहाँ? और आत्माके बिना शरीर कहाँ? देवि! शरीर और आत्मा दोनोंकी प्रधानता है। बिना दोके संसार कैसे चल सकता है? राधे! हम दोनोंमें कहीं भेद नहीं है; जहाँ आत्मा है, वहाँ शरीर है। वे दोनों एक-दूसरेसे अलग नहीं हैं।

जैसे दूधमें धवलता, अग्निमें दाहिका शक्ति, पृथ्वीमें गन्ध और जलमें शीतलता है, उसी तरह तुममें मेरी स्थिति है। धवलता और दुग्धमें, दाहिका शक्ति और अग्निमें, पृथ्वी और गन्धमें तथा जल और शीतलतामें जैसे ऐक्य (भेदाभाव) है, उसी तरह हम दोनोंमें भेद नहीं है। मेरे बिना तुम निर्जीव हो और तुम्हारे बिना मैं अदृश्य हूँ। सुन्दरि! तुम्हारे बिना मैं संसारकी सृष्टि नहीं कर सकता, यह निश्चित बात है। ठीक उसी तरह, जैसे कुम्हार मिट्टीके बिना घड़ा नहीं बना सकता और सुनार सोनेके बिना आभूषणोंका निर्माण नहीं कर सकता। स्वयं आत्मा जैसे नित्य है, उसी प्रकार साक्षात् प्रकृतिस्वरूपा तुम नित्य हो। तुममें सम्पूर्ण शक्तियोंका समाहार सञ्चित है। तुम सबकी आधारभूता और सनातनी हो\*।

\*यथा क्षीरे च धावल्यं दाहिका च हुताग्नेः । भूमौ गन्धो जले शैत्यं तथा त्वयि मम स्थितिः ॥

धावल्यदुग्धयोरैक्यं दाहिकानलयोर्यथा । भूगन्धजलशैत्यानां नास्ति भेदस्तथाऽऽवयोः ॥

लक्ष्मी, सरस्वती, पार्वती, ब्रह्मा, शिव, शेषनाग और धर्म—ये सब मेरे प्राणोंके समान हैं; परंतु तुम मुझे प्राणोंसे भी बढ़कर प्यारी हो। राधिके! ये सब देवता और देवियाँ मेरे निकट हैं; परंतु तुम यदि इनसे अधिक न होती तो मेरे वक्षः-स्थलमें कैसे विराजमान हो सकती थीं? सुशीले राधे! आँसू बहाना छोड़ो। साथ ही इस निष्फल भ्रमका परित्याग करो। शङ्का छोड़कर निर्भीक-भावसे वृषभानुके घरमें पधारो। सुन्दरि! नौ मासतक कलावतीके पेटमें स्थित गर्भको मायाद्वारा वायुसे भरकर रोके रहो। दसवाँ महीना आनेपर तुम भूतलपर प्रकट हो जाना। अपने दिव्य रूपका परित्याग करके शिशुरूप धारण कर लेना। जब गर्भसे वायुके निकलनेका समय हो, तब कलावतीके समीप पृथ्वीपर नग्न शिशुके रूपमें गिरकर निश्चय ही रोना। साध्वि! तुम गोकुलमें अयोनिजा-रूपसे प्रकट होओगी। मैं भी अयोनिज-रूपसे ही अपने आपको प्रकट करूँगा; क्योंकि हम दोनोंका गर्भमें निवास होना सम्भव नहीं है। मेरे भूमिपर स्थित होते ही पिताजी मुझे गोकुलमें पहुँचा देंगे। वास्तवमें कंसके भयका बहाना लेकर मैं तुम्हारे लिये ही गोकुलमें जाऊँगा। कल्याणि! तुम वहाँ यशोदाके मन्दिरमें मुझ नन्दनन्दनको प्रतिदिन आनन्दपूर्वक देखोगी और हृदयसे लगाओगी। राधिके! मेरे वरदानसे तुम्हें समयपर मेरी स्मृति होगी और मैं तुम्हारे साथ वृन्दावनमें नित्य स्वच्छन्द विहार करूँगा। सुशीला आदि जो तैत्तिरीय तुम्हारी सखियाँ हैं, उनके तथा अन्यान्य बहुसंख्यक गोपियोंके साथ तुम गोकुलको पधारो। असंख्य गोपियोंको अपने अमृतोपम एवं परिमित वाणीद्वारा समझा-बुझाकर आश्वासन दे गोलोकमें ही रखकर

तुम्हें गोकुलमें जाना है। राधिके! मैं भी इन असंख्य गोपोंको यहीं स्थापित करके पीछेसे वसुदेवके निवासस्थान मथुरापुरीमें पदार्पण करूँगा। मेरे प्रिय-से-प्रिय गोप बहुत बड़ी संख्यामें मेरे साथ क्रीडाके लिये व्रजमें चलें और वहाँ गोपोंके घरमें जन्म लें।

नारद! यों कहकर श्रीकृष्ण चुप हो गये। देवता, देवियाँ, गोप और गोपियाँ वहाँ ठहर गयीं। ब्रह्मा, शिव, धर्म, शेषनाग, पार्वती, लक्ष्मी और सरस्वतीने बड़ी प्रसन्नताके साथ परात्पर श्रीकृष्णका स्तवन किया। उस समय उनके विरहज्वरसे व्याकुल तथा प्रेम-विह्वल गोपों और गोपियोंने भी भक्तिभावसे वहाँ श्रीकृष्णकी स्तुति करके उनके चरणोंमें मस्तक झुकाया। विरह-ज्वरसे कातर हुई पूर्णमनोरथा राधाने भी अपने प्राणाधिक प्रियतम हृदयवल्लभ श्रीकृष्णका भक्तिभावसे स्तवन किया। उस समय श्रीराधाके नेत्रोंमें आँसू भरे हुए थे। वे अत्यन्त दीन और भयसे व्याकुल दिखायी देती थीं। उन्हें इस अवस्थामें देख स्वयं श्रीहरिने सान्त्वना देनेके लिये यह सच्ची बात कही।

**श्रीकृष्ण बोले—**प्राणाधिके महादेवि! सुस्थिर होओ। भयका त्याग करो। जैसी तुम हो वैसा ही मैं हूँ। मेरे रहते तुम्हें क्या चिन्ता है? श्रीदामके शापकी सत्यताके लिये कुछ समयतक (बाह्यरूपमें) मेरे साथ तुम्हारा वियोग रहेगा। तदनन्तर मैं मथुरामें आ जाऊँगा। वहाँ भूतलका भार उतारना, माता-पिताको बन्धनसे छुड़ाना, माली, दर्जी और कुब्जाका उद्धार करना, कालयवनको मरवाकर मुचुकुन्दको मोक्ष देना, द्वारकाका निर्माण, राजसूय-यज्ञका दर्शन, सोलह हजार एक सौ दस राजकन्याओंके साथ विवाह करना, शत्रुओंका दमन, मित्रोंका

मया विना त्वं निर्जीवा चादृश्योऽहं त्वया विना । त्वया विना भवं कर्तुं नालं सुन्दरि निश्चितम् ॥

विना मृदा घटं कर्तुं यथा नालं कुलालकः । विना स्वर्णं स्वर्णकारोऽलंकारं कर्तुमक्षमः ॥

स्वयमात्मा यथा नित्यस्तथा त्वं प्रकृतिः स्वयम् । सर्वशक्तिसमायुक्ता सर्वाधारा सनातनी ॥

(श्रीकृष्णजन्मखण्ड ६। २१४—२१८)

उपकार, वाराणसीपुरीका दहन, महादेवजीको जृम्भणास्त्रसे बाँधना, बाणासुरकी भुजाओंको काटना, पारिजातका अपहरण, अन्यान्य कर्मोंका सम्पादन, प्रभासतीर्थकी यात्रामें जाना, वहाँ मुनिमण्डलीका दर्शन करना, व्रजके बन्धुजनोंसे वार्तालाप, पिताके यज्ञका सम्पादन, वहाँ शुभ बेलामें पुनः तुम्हारे साथ मिलन तथा गोपियोंका साक्षात्कार आदि कार्य मुझे करने हैं। फिर तुम्हें अध्यात्मज्ञानका उपदेश देकर वास्तवमें तुम्हारे साथ नित्य मिलनका सौभाग्य प्राप्त करूँगा। इसके बाद मेरे साथ दिन-रात तुम्हारा संयोग बना रहेगा। कभी क्षणभरके लिये भी वियोग न होगा। इतना ही नहीं, वहाँसे तुम्हारे साथ मेरा पुनः व्रजमें आगमन होगा। प्राणवल्लभे! वियोगकालमें भी स्वप्नमें तुम्हारे साथ मेरा सदैव मिलन होता रहेगा। तुमसे बिछुड़कर द्वारकामें जानेपर मेरे और मेरे नारायणांशके द्वारा उपर्युक्त कार्य सम्पादित होंगे। फिर वृन्दावनमें तुम्हारे साथ मेरा निवास होगा। फिर माता-पिता तथा गोपियोंके शोकका पूर्णतः निवारण होगा। भूतलका भार उतारकर तुम्हारे और गोप-गोपियोंके साथ मेरा पुनः गोलोकमें आगमन होगा। राधे! मेरे अंशभूत जो नित्य परमात्मा नारायण हैं, वे लक्ष्मी और सरस्वतीके साथ वैकुण्ठलोकका पधारेंगे। धर्म और मेरे अंशोंका निवासस्थान श्वेतद्वीपमें होगा। देवताओं और देवियोंके अंश भी अक्षय धामको पधारेंगे। फिर इसी गोलोकमें तुम्हारे साथ मेरा निवास होगा। कान्ते! इस प्रकार समस्त भावी शुभाशुभका वर्णन मैंने कर दिया। मेरे द्वारा जो निश्चय हो चुका है, उसका कौन निवारण कर सकता है?

तदनन्तर श्रीहरिने देवताओं और देवियोंसे समयोचित बात कही—देवताओ! अब तुमलोग भावी कार्यकी सिद्धिके लिये अपने-अपने स्थानको जाओ। पार्वति! तुम अपने दोनों पुत्रों तथा स्वामीके साथ कैलासको जाओ। मैंने जो कार्य

तुम्हारे जिम्मे लगाया है, वह सब यथासमय पूरा होगा। व्रजेश्वरि! राधे! गणेशजीको छोड़कर शेष छोटे-बड़े सभी देवताओं और देवियोंका कलाद्वारा भूतलपर अवतरण होगा।

तदनन्तर लक्ष्मी, सरस्वती तथा श्रीराधासहित पुरुषोत्तम श्रीहरिको भक्तिभावसे प्रणाम करके सब देवता आनन्दपूर्वक अपने-अपने स्थानको चले गये। श्रीहरिने जिस कार्यका आयोजन किया था, उसे सफल बनानेके लिये वे व्यग्रतापूर्वक भूतलपर पधारे; क्योंकि स्वामीका बताया हुआ स्थान देवताओंके लिये भी दुर्लभ था।

श्रीकृष्णने राधासे कहा—प्रिये! तुम पूर्वनिश्चित गोप-गोपियोंके समुदायके साथ वृषभानुके निवासगृहको पधारो। मैं मथुरापुरीमें वसुदेवके घर जाऊँगा। फिर कंसके भयका बहाना बनाकर गोकुलमें तुम्हारे समीप आ जाऊँगा।

लाल कमलके समान नेत्रोंवाली श्रीराधा श्रीकृष्णको प्रणाम करके प्रेमविच्छेदके भयसे कातर हो उनके सामने फूट-फूटकर रोने लगीं। वे ठहर-ठहरकर कभी कुछ दूरतक जातीं और जा-जाकर बार-बार लौट आती थीं। लौटकर पुनः श्रीहरिका मुँह निहारने लगती थीं। सती राधा शरत्कालकी पूर्णिमाके चन्द्रमाकी कान्तिसुधासे पूर्ण प्रभुके मुखचन्द्रकी सौन्दर्य-माधुरीका अपने निमेषरहित नेत्र-चकोरोंद्वारा पान करती थीं। तदनन्तर परमेश्वरी राधा प्रभुकी सात बार परिक्रमा करके सात बार प्रणाम करनेके अनन्तर पुनः श्रीहरिके सामने खड़ी हुई। इतनेमें ही करोड़ों गोप-गोपियोंका समूह वहाँ आ पहुँचा। उन सबके साथ श्रीराधाने पुनः श्रीकृष्णको प्रणाम किया। तत्पश्चात् तैंतीस सखीस्वरूपा गोपकिशोरियों और गोपसमूहोंके साथ सुन्दरी राधा श्रीहरिको मस्तक झुकाकर भूतलके लिये प्रस्थित हुई। वे सब-के-सब श्रीहरिके बताये हुए स्थान नन्द-गोकुलको गये। फिर राधा वृषभानुके घरमें और

गोपियाँ अन्यान्य गोपोंके घरोंमें गयीं। गोप-गोपियोंसहित श्रीराधाके भूतलपर चले जानेपर श्रीहरि भी शीघ्र ही वहाँ पहुँचनेके लिये उत्सुक हुए। गोलोकके गोपों और गोपियोंसे बात करके उन्हें अपने-अपने कामोंमें लगाकर मनकी गतिसे चलनेवाले जगदीश्वर श्रीहरि मथुरामें जा पहुँचे। पहले देवकी और वसुदेवके जो-जो पुत्र हुए,

उन्हें कंसने तत्काल मार डाला। इस तरह उनके छः पुत्रोंको उसने कालके गालमें डाल दिया। देवकीका सातवाँ गर्भ शेषनागका अंश था, जिसे योगमायाने खींचकर गोकुलमें निवास करनेवाली रोहिणीजीके गर्भमें स्थापित कर दिया। फिर वह श्रीहरिकी आज्ञासे चली गयी।

(अध्याय ६)

~~~~~

श्रीकृष्णजन्म-वृत्तान्त—आकाशवाणीसे प्रभावित हो देवकीके वधके लिये उद्यत हुए कंसको वसुदेवजीका समझाना, कंसद्वारा उसके छः पुत्रोंका वध, सातवें गर्भका संकर्षण, आठवें गर्भमें भगवान्का आविर्भाव—देवताओंद्वारा स्तुति, भगवान्का दिव्य रूपमें प्राकट्य, वसुदेवद्वारा उनकी स्तुति, भगवान्का पूर्वजन्मके वरदानका प्रसङ्ग बताकर अपनेको व्रजमें ले जानेकी बात बता शिशुरूपमें प्रकट होना, वसुदेवजीका व्रजमें यशोदाके शयनगृहमें शिशुको सुलाकर नन्द-कन्याको ले आना, कंसका उसे मारनेको उद्यत होना, परंतु वसुदेवजी तथा आकाशवाणीके कथनपर विश्वास करके कन्याको दे देना, वसुदेव-देवकीका सानन्द घरको लौटना

नारदजीने पूछा—महाभाग! श्रीकृष्णका जन्म-वृत्तान्त महान् पुण्यप्रद और उत्तम है। वह जन्म, मृत्यु और जराका नाश करनेवाला है। अतः आप इस प्रसङ्गको कुछ विस्तारके साथ बतलाइये। वसुदेव किसके पुत्र थे और देवकी किसकी कन्या थीं? देवकी और वसुदेव पूर्वजन्ममें कौन थे? उनके विवाहका वृत्तान्त भी बताइये। अत्यन्त क्रूर-स्वभाववाले कंसने देवकीके छः पुत्रोंका वध क्यों किया? तथा श्रीहरिका जन्म किस दिन हुआ? यह सब मैं सुनना चाहता हूँ। आप कृपापूर्वक कहिये।

श्रीनारायणने कहा—महर्षि कश्यप ही वसुदेव हुए थे और देवमाता अदिति देवकीके रूपमें अवतीर्ण हुई थीं। पूर्वजन्मके पुण्यके

फलरूपसे ही उन्होंने श्रीहरिको पुत्ररूपसे प्राप्त किया था। देवमीढद्वारा मारिषाके गर्भसे महान् पुरुष वसुदेवका जन्म हुआ। उनके जन्मकालमें अत्यन्त हर्षसे भरे हुए देवसमुदायने आनक और दुन्दुभि नामक बाजे बजाये थे। इसलिये श्रीहरिके जनक वसुदेवको प्राचीन संत-महात्मा 'आनकदुन्दुभि' कहते हैं। यदुकुलमें आहुकके पुत्र श्रीमान् देवक हुए थे, जो ज्ञानके समुद्र कहे जाते हैं। उन्हींकी पुत्री देवकी थीं। यदुकुलके आचार्य गर्गने वसुदेवके साथ देवकीका विधिपूर्वक यथोचित विवाहसम्बन्ध कराया था। देवकने विवाहके लिये बहुत सामान एकत्र किये थे। उन्होंने उत्तम लग्नमें अपनी पुत्री देवकीको वसुदेवके हाथमें समर्पण कर दिया। नारद! देवकने दहेजमें सहस्रों घोड़े,

सहस्रों स्वर्णपात्र, वस्त्राभूषणोंसे विभूषित सैकड़ों सुन्दरी दासियाँ, नाना प्रकारके द्रव्य, भौति-भौतिके रत्न, उत्तम मणि, हीरे तथा रत्नमय पात्र दिये थे। देवकीकी कन्या श्रेष्ठ रत्नमय आभूषणोंसे विभूषित, सैकड़ों चन्द्रमाओंके समान कान्तिमती, त्रिभुवनमोहिनी, धन्य, मान्य तथा श्रेष्ठ युवती थी। रूप और गुणकी निधि थी। उसके मुखपर मन्द मुस्कानकी छटा छायी रहती थी। उसे रथपर बिठाकर वसुदेव जब प्रस्थान करने लगे, तब बहिनके विवाहमें हर्षसे भरा हुआ कंस भी उसके साथ चला। वह तत्काल देवकीके रथके निकट आ गया। इसी समय कंसको सम्बोधित करके आकाशवाणी हुई—‘राजेन्द्र! क्यों हर्षसे फूल उठे हो? यह सच्ची बात सुनो। देवकीका आठवाँ गर्भ तुम्हारी मृत्युका कारण होगा।’

यह सुनकर महाबली कंसने हाथमें तलवार ले ली। दैवी वाणीपर विश्वास करके भयभीत और कुपित हो वह महापापी नरेश देवकीका वध करनेके लिये उद्यत हो गया। वसुदेवजी बड़े भारी पण्डित, नीतिज्ञ तथा नीतिशास्त्रके ज्ञानमें निपुण थे। उन्होंने कंसको देवकीका वध करनेके लिये उद्यत देख उसे समझाना आरम्भ किया।



वसुदेवजी बोले—राजन्! जान पड़ता है तुम राजनीति नहीं जानते हो। मेरी बात सुनो। यह तुम्हारे लिये हितकर और यशस्कर है। सा ही कलङ्कको दूर करनेवाली, शास्त्रोंद्वारा प्रतिपादित तथा समयके अनुरूप भी है। भूपाल! यदि इसके आठवें गर्भसे ही तुम्हारी मृत्यु होनेवाली है तो इस बेचारीका वध करके क्यों अपयश लेते और अपने लिये नरकका मार्ग प्रशस्त करते हो? जीवमात्रके वधसे ही न्यूनाधिक पाप होता है; परंतु ब्रह्महत्या बहुत बड़ा पातक है। स्त्रीका वध करनेसे मनुष्यको ब्रह्महत्याके समान पाप लगता है। विशेषतः, यह तुम्हारी बहिन है। तुमसे पालित और पोषित होने योग्य है तथा तुम्हारी शरणमें आयी है। नरेश्वर! इसका वध करनेपर तुम्हें सौ स्त्रियोंकी हत्याका पाप लगेगा। मनुष्य जप, तप, दान, पूजा, तीर्थदर्शन, ब्राह्मणभोजन और होमयज्ञ आदिका अनुष्ठान स्वर्ग (दिव्य सुख)—की प्राप्तिके लिये ही करता है। साधुपुरुष समस्त संसारको पानीके बुलबुले और स्वप्नकी भाँति निस्सार एवं मिथ्या मानते और भयदायक समझते हैं। इसीलिये वे सदैव यज्ञपूर्वक धर्मका अनुष्ठान करते हैं। यदुकुल-कमल-दिवाकर धर्मिष्ठ नरेश्वर! अपनी इस बहिनको छोड़ दो; मारो मत। तुम्हारी राजसभामें कई प्रकारके विद्वान् हैं। तुम उन सबसे पूछो कि इसके विषयमें क्या करना चाहिये? भाई! इसके आठवें गर्भमें जो संतान होगी, उसे मैं तुम्हारे हाथमें दे दूँगा। उससे मेरा क्या प्रयोजन है? अथवा ज्ञानिशिरोमणे! जितनी भी संतानें होंगी, उन सबको मैं तुम्हारे हवाले कर दूँगा; क्योंकि उनमेंसे एक भी मुझे तुमसे अधिक प्रिय नहीं है। राजेन्द्र! बहिनको जीवित छोड़ दो। यह तुम्हें बेटीके समान प्यारी है। तुमने इस छोटी बहिनको सदा मीठे अन्न-पान देकर पाल-पोसकर बड़ा किया है।

वसुदेवजीकी यह बात सुनकर राजा कंसने बहिनको छोड़ दिया। वसुदेवजी प्यारी पत्नीको साथ लेकर अपने घर गये। नारद! देवकीके गर्भसे क्रमशः जो छः संतानें हुई, उन्हें वसुदेवजीने कंसको दे दिया; क्योंकि वे सत्यसे बँधे हुए थे। कंसने क्रमशः उन सबको मार डाला। देवकीके सातवें गर्भके आनेपर कंसने भयके कारण उसकी रक्षाकी ओर विशेष ध्यान दिया। परंतु योगमायाने उस गर्भको खींचकर रोहिणीके पेटमें रख दिया। रक्षकोंने राजाको यह सूचना दी कि देवकीका सातवाँ गर्भ गिर गया। उसी गर्भसे भगवान् अनन्त प्रकट हुए, जो 'संकर्षण' नामसे प्रसिद्ध हुए।

तदनन्तर देवकीका आठवाँ गर्भ प्रकट हुआ जो वायुसे भरा हुआ था। नवौं मास व्यतीत होनेके पश्चात् दसवाँ मास उपस्थित होनेपर सर्वदर्शी भगवान्ने उस गर्भपर दृष्टिपात किया। समस्त नारियोंमें श्रेष्ठ देवी देवकी स्वयं तो रूपवती थीं ही, भगवान्के दृष्टिपात करनेपर तत्काल ही उनका सौन्दर्य चौगुना बढ़ गया। कंसने देखा, देवकीके मुख और नेत्र खिल उठे हैं। वह तेजसे प्रज्वलित हो योगमायाके समान दसों दिशाओंको प्रकाशित कर रही है; मूर्तिमान् ज्योतिःपुञ्ज-सी दिखायी देती है। उसे देख असुरराज कंसको बड़ा विस्मय हुआ। उसने मन-ही-मन कहा—'इस गर्भसे जो संतान होगी, वही मेरी मृत्युका कारण है'—ऐसा कहकर कंस यत्नपूर्वक देवकी और वसुदेवकी रखवाली करने लगा। उसने सात द्वारवाले भवनमें उन दोनोंको रख छोड़ा था। दसवें मासके पूर्ण होनेपर जब वह गर्भ वायुसे पूर्ण हो गया। तब सबसे निर्लस रहनेवाले साक्षात् भगवान् श्रीकृष्णने देवकीके हृदय-कमलमें निवास किया। उस समय महामनस्वी वसुदेवने देवकीपर दृष्टिपात करके समझ लिया कि प्रसवकाल संनिकट आ गया है। फिर तो वे भगवान्

श्रीहरिका स्मरण करने लगे। रत्नमय प्रदीपसे युक्त उस परम मनोहर भवनमें उन्होंने तलवार, लोहा, जल और अग्निको लाकर रखा। मन्त्रज्ञ मनुष्य तथा भाई-बन्धुओंकी स्त्रियोंको भी बुला लिया। भयसे व्याकुल वसुदेवने विद्वान् ब्राह्मण तथा बन्धुओंको भी सादर बुला भेजा। इसी समय जब रातके दो पहर बीत गये, आकाशमें बादल घिर आये, बिजलियाँ चमकने लगीं, अनुकूल वायु चलने लगी तथा रक्षक निद्रित हो शय्यापर इस तरह निश्चेष्ट सो गये, मानो मरकर अचेत हो गये हों; तब धर्म, ब्रह्मा तथा शिव आदि देवेश्वरगण वहाँ



आये तथा गर्भस्थ परमेश्वरकी स्तुति करने लगे।

देवता बोले—भगवन्! आप समस्त संसारकी उत्पत्तिके स्थान हैं, किंतु आपकी उत्पत्तिका स्थान कोई नहीं है। आप अनन्त, अविनाशी, निष्पाप, सगुण, निर्गुण तथा महान् ज्योतिःस्वरूप हैं। आप निराकार होते हुए भी भक्तोंके अनुरोधसे साकार बन जाते हैं। आपपर किसीका अंकुश या नियन्त्रण नहीं है। आप सर्वथा स्वच्छन्द, सर्वेश्वर, सर्वरूप तथा समस्त गुणोंके आश्रय हैं। आप संतोंको सुख देनेवाले, दुष्टोंको दुःख प्रदान करनेवाले, दुर्गमस्वरूप एवं दुर्जनोंके नाशक हैं। आपतक

तर्ककी पहुँच नहीं होती है। आप सबके आधार हैं। शङ्का और उपद्रवसे शून्य हैं। उपाधिशून्य, निर्लिप्त और निरीह हैं। मृत्युकी भी मृत्यु हैं। अपनी आत्मा में रमण करनेवाले पूर्णकाम, निर्दोष और नित्य हैं। आप सौभाग्यशाली और दुर्भाग्यरहित हैं तथा प्रवचनकुशल हैं। आपको रिझाना या लाँघना कठिन ही नहीं, असम्भव है। आपके निःश्वाससे वेदोंका प्राकट्य हुआ है; इसलिये आप उनके प्रादुर्भाव में हेतु हैं। सम्पूर्ण वेद आपके स्वरूप हैं। छन्द आदि वेदाङ्ग भी आपसे भिन्न नहीं हैं। आप वेदवेत्ता और सर्वव्यापी हैं।

ऐसा कहकर देवताओं ने बारंबार उनको प्रणाम किया। उन सबके नेत्रों में हर्षके आँसू छलक रहे थे। उन सबने फूलोंकी वर्षा की। जो पुरुष प्रातःकाल उठकर (मूल श्लोक में कहे गये) बयालीस नामोंका पाठ करता है, वह श्रीहरिकी दृढभक्ति, दास्यभाव तथा मनोवाञ्छित फल पाता है*।

भगवान् नारायण कहते हैं—इस प्रकार स्तुति सुनाकर देवतालोग अपने-अपने धामको चले गये। फिर जलकी वृष्टि होने लगी। सारी मथुरा नगरी निश्चेष्ट होकर सो रही थी। मुने! वह रात्रि घोर अन्धकारसे व्याप्त थी। जब रातके सात मुहूर्त निकल गये और आठवाँ उपस्थित हुआ, तब आधी रातके समय सर्वोत्कृष्ट शुभ लग्न आया। वह वेदोंसे अतिरिक्त तथा दूसरोंके लिये दुर्ज्ञेय लग्न था। उस लग्नपर केवल शुभ ग्रहोंकी

दृष्टि थी। अशुभ ग्रहोंकी नहीं थी। रोहिणी नक्षत्र और अष्टमी तिथिके संयोगसे जयन्ती नामक योग सम्पन्न हो गया था। मुने! जब अर्धचन्द्रमाका उदय हुआ, उस समय लग्नकी ओर देख-देखकर भयभीत हुए सूर्य आदि सभी ग्रह आकाशमें अपनी गतिके क्रमको लाँघकर मीन लग्नमें जा पहुँचे। शुभ और अशुभ सभी वहाँ एकत्र हो गये। विधाताकी आज्ञासे एक मुहूर्तके लिये वे सभी ग्रह प्रसन्नतापूर्वक ग्यारहवें स्थानमें जाकर वहाँ सानन्द स्थित हो गये। मेघ वर्षा करने लगे। ठंढी-ठंढी हवा चलने लगी। पृथ्वी अत्यन्त प्रसन्न थी। दसों दिशाएँ स्वच्छ हो गयी थीं। ऋषि, मनु, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, देवता और देवियाँ सभी प्रसन्न थे। अप्सराएँ नृत्य करने लगीं। गन्धर्वराज और विद्याधरियाँ गीत गाने लगीं। नदियाँ सुखपूर्वक बहने लगीं। अग्निहोत्रकी अग्नियाँ प्रसन्नतापूर्वक प्रज्वलित हो उठीं। स्वर्गमें दुन्दुभियों और आनकोंकी मनोहर ध्वनि होने लगी। खिले हुए पारिजातके पुष्पोंकी झड़ी लग गयी। पृथ्वी नारीका रूप धारण करके स्वयं सूतिकागारमें गयी। वहाँ जय-जयकार, शङ्खनाद तथा हरिकीर्तनका शब्द गूँज रहा था। इसी समय सती देवकी वहाँ गिर पड़ीं। उनके पेटसे वायु निकल गयी और वहीं भगवान् श्रीकृष्ण दिव्यरूप धारण करके देवकीके हृदयकमलके कोशसे प्रकट हो गये। उनका शरीर अत्यन्त कमनीय और परम मनोहर था। दो भुजाएँ थीं। हाथमें मुरली शोभा पा रही थी। कानोंमें

* देवा ऊचुः—

जगद्योनिरयोनिस्त्वमनन्तोऽव्यय एव च । ज्योतिःस्वरूपो ह्यनघः सगुणो निर्गुणो महान् ॥
भक्तानुरोधात् साकारो निराकारो निरंकुशः । स्वेच्छामयश्च सर्वेशः सर्वः सर्वगुणाश्रयः ॥
सुखदो दुःखदो दुर्गो दुर्जनान्तक एव च । निर्व्यूहो निखिलाधारो निःशङ्को निरुपद्रवः ॥
निरुपाधिश्च निर्लिप्तो निरीहो निधनान्तकः । आत्मारामः पूर्णकामो निर्दोषो नित्य एव च ॥
सुभगो दुर्भगो वाग्मी दुराराध्यो दुरत्ययः । वेदहेतुश्च वेदाश्च वेदाङ्गो वेदविद् विभुः ॥
इत्येवमुक्त्वा देवाश्च प्रणेमुश्च मुहुर्मुहुः । हर्षाश्रुलोचनाः सर्वे ववृषुः कुसुमानि च ॥
द्विचत्वारिंशन्नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् । दृढां भक्तिं हरेर्दास्यं लभते वाञ्छितं फलम् ॥

(श्रीकृष्णजन्मखण्ड ७। ५५-६१)

मकराकृति कुण्डल झलमला रहे थे। मुख मन्द



हास्यकी छटासे प्रसन्न जान पड़ता था। वे भक्तोंपर कृपा करनेके लिये कातर-से दिखायी पड़ते थे। श्रेष्ठ मणि-रत्नोंके सारतत्त्वसे निर्मित आभूषण उनके शरीरकी शोभा बढ़ा रहे थे। पीताम्बरसे सुशोभित श्रीविग्रहकी कान्ति नूतन जलधरके समान श्याम थी। चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और कुंकुमके द्रवसे निर्मित अङ्गराग सब अङ्गोंमें लगा हुआ था। उनका मुखचन्द्र शरत्पूर्णिमाके शशधरकी शुभ्र ज्योत्स्नाको तिरस्कृत कर रहा था। बिम्बफलके सदृश लाल अधरके कारण उसकी मनोहरता और बढ़ गयी थी। माथेपर मोरपंखके मुकुट तथा उत्तम रत्नमय किरीटसे श्रीहरिकी दिव्य ज्योति और भी जाज्वल्यमान हो उठी थी। टेढ़ी कमर, त्रिभङ्गी झाँकी, वनमालाका शृङ्गार, वक्षमें श्रीवत्सकी स्वर्णमयी रेखा और उसपर मनोहर कौस्तुभमणिकी भव्य प्रभा अद्भुत शोभा दे रही थी। उनकी किशोर अवस्था थी। वे शान्तस्वरूप भगवान् श्रीहरि ब्रह्मा और महादेवजीके भी परम कान्त (प्राणवल्लभ) हैं। मुने! वसुदेव और देवकीने उन्हें अपने समक्ष देखा। उन्हें बड़ा विस्मय हुआ। वसुदेवजीने अपनी पत्नी देवकीके साथ अश्रुपूर्णनयन, पुलकितशरीर तथा नतमस्तक हो

हाथ जोड़ भक्तिभावसे उनकी स्तुति की।

वसुदेवजी बोले—भगवन्! आप श्रीमान् (सहज शोभासे सम्पन्न), इन्द्रियातीत, अविनाशी, निर्गुण, सर्वव्यापी, ध्यानसे भी किसीके वशमें न होनेवाले, सबके ईश्वर और परमात्मा हैं। स्वेच्छामय, सर्वस्वरूप, स्वच्छन्द रूपधारी, अत्यन्त निर्लिप्त, परब्रह्म तथा सनातन बीजरूप हैं। आप स्थूलसे भी अत्यन्त स्थूल, सर्वत्र व्याप्त, अतिशय सूक्ष्म, दृष्टिपथमें न आनेवाले, समस्त शरीरोंमें साक्षीरूपसे स्थित तथा अदृश्य हैं। साकार, निराकार; सगुण, गुणोंके समूह; प्रकृति, प्रकृतिके शासक तथा प्राकृत पदार्थोंमें व्याप्त होते हुए भी प्रकृतिसे परे विद्यमान हैं। विभो! आप सर्वेश्वर, सर्वरूप, सर्वान्तक, अविनाशी, सर्वाधार, निराधार और निर्व्यूह (तर्कके अविषय) हैं; मैं आपकी क्या स्तुति करूँ? भगवान् अनन्त (सहस्रों जिह्वावाले शेषनाग) भी आपका स्तवन करनेमें असमर्थ हैं। सरस्वतीदेवीमें भी वह शक्ति नहीं कि आपकी स्तुति कर सकें। पञ्चमुख महादेव और छः मुखवाले स्कन्द भी जिनकी स्तुति नहीं कर सकते, वेदोंको प्रकट करनेवाले चतुर्मुख ब्रह्मा भी जिनके स्तवनमें सर्वदा अक्षम हैं तथा योगीन्द्रोंके गुरुके भी गुरु गणेश भी जिनकी स्तुतिमें असमर्थ हैं; उन आपका स्तवन ऋषि, देवता, मुनीन्द्र, मनु और मानव कैसे कर सकते हैं? उनकी दृष्टिमें तो आप कभी आये ही नहीं हैं। जब श्रुतियाँ आपकी स्तुति नहीं कर सकती तो विद्वान् लोग क्या कर सकते हैं? मेरी आपसे इतनी ही प्रार्थना है कि आप ऐसे दिव्य शरीरको त्यागकर बालकका रूप धारण कर लें।

जो मनुष्य वसुदेवजीके द्वारा किये गये इस स्तोत्रका तीनों संध्याओंके समय पाठ करता है, वह श्रीकृष्णचरणारविन्दोंकी दास्य-भक्ति प्राप्त कर

लेता है। उसे विशिष्ट एवं हरिभक्त पुत्रकी प्राप्ति होती है। वह सारे संकटोंसे शीघ्र पार हो जाता और शत्रुके भयसे छूट जाता है*।

भगवान् नारायण कहते हैं—वसुदेवजीकी बात सुनकर भक्तोंपर अनुग्रहके लिये कातर रहनेवाले प्रसन्नवदन श्रीहरिने स्वयं इस प्रकार कहा।

श्रीकृष्ण बोले—मैं तपस्याओंके फलसे ही इस समय तुम्हारा पुत्र हुआ हूँ। तुम इच्छानुसार वर माँगो। तुम्हारा कल्याण होगा, इसमें संशय नहीं। पूर्वकालमें तुम तपस्वीजनोमें श्रेष्ठ प्रजापति कश्यप थे और ये सुतपा माता अदिति तुम्हारे साथ थीं। तुमने अपनी इन तपस्विनी पत्नी अदितिके साथ तपस्याद्वारा मेरी आराधना की थी। वहाँ मुझे देखकर तुमने मेरे समान पुत्र होनेका वर माँगा और मैंने भी तुम्हें यह वर दिया कि मेरे समान पुत्रकी प्राप्ति होगी। तात! तुम्हें वर देकर मैंने मन-ही-मन विचार किया। फिर यह बात ध्यानमें आयी कि मेरे समान तो कोई त्रिभुवनमें है ही नहीं। इसलिये मैं स्वयं ही तुम्हारे पुत्रभावको प्राप्त हुआ। आप स्वयं कश्यपजी हैं और तपस्याके प्रभावसे इस समय मेरे पिता वसुदेव हुए हैं। ये उत्तम तपस्यावाली पतिव्रता देवमाता अदिति ही इस समय अपने अंशसे मेरी

माता देवकीके रूपमें प्रकट हुई हैं। आप और माता अदितिसे ही मैं अंशतः वामनरूपमें अवतीर्ण हुआ था; किंतु इस समय आपके तपके फलसे मैं परिपूर्णतम परमात्मा ही पुत्ररूपमें प्रकट हुआ हूँ। महामते! तुम पुत्रभावसे या ब्रह्मभावसे जब मुझे पा गये हो तो अब निश्चय ही जीवन्मुक्त हो जाओगे। तात! अब तुम मुझे लेकर शीघ्र ही व्रजमें चलो और यशोदाके घरमें मुझे रखकर वहाँ उत्पन्न हुई मायाको ले आओ तथा यहाँ अपने पास उसे रख लो। ऐसा कहकर श्रीहरि वहाँ तुरंत शिशुरूप हो गये।

श्यामल पुत्रको पृथ्वीपर नग्नभावसे सोया देख विष्णुकी मायासे मोहित हो वसुदेवजी सूतिकागारमें अपनी स्त्रीसे तन्द्रामें बोले—‘प्रिये! यह कैसा तेजःपुञ्ज है?’ ऐसा कह वसुदेवने पत्नीके साथ कुछ विचार करके बालकको गोदमें उठा लिया और उसे लेकर वे नन्द-गोकुलमें जा पहुँचे। वहाँ नन्दगौवमें यशोदा नौदसे अचेत हो रही थीं। उन्होंने शय्यापर उन्हें निद्रित अवस्थामें देखा। साथ ही नन्दजी भी वहाँ नौदमें बेसुध हो रहे थे। वहाँ घरमें जो कोई भी प्राणी थे, सब सो गये थे। वसुदेवजीने देखा, तपाये हुए सुवर्णके समान गौर कान्तिवाली एक नग्न बालिका पड़ी-पड़ी घरकी छतकी ओर दृष्टिपात

* श्रीमन्तमिन्द्रियातीतमक्षरं निर्गुणं विभुम् । ध्यानासाध्यं च सर्वेषां परमात्मानमीश्वरम् ॥
स्वेच्छामयं सर्वरूपं स्वेच्छारूपधरं परम् । निर्लिप्तं परमं ब्रह्म बीजरूपं सनातनम् ॥
स्थूलात् स्थूलतरं व्याप्तमतिसूक्ष्मदर्शनम् । स्थितं सर्वशरीरेषु साक्षिरूपमदृश्यकम् ॥
शरीरवन्तं सगुणमशरीरं गुणोत्करम् । प्रकृतिं प्रकृतीशं च प्राकृतं प्रकृतेः परम् ॥
सर्वेशं सर्वरूपं च सर्वान्तकरमव्ययम् । सर्वाधारं निराधारं निर्व्यूहं स्तौमि किं विभो ॥
अनन्तः स्तवनेऽशक्तोऽशक्ता देवी सरस्वती । यं स्तोतुमसमर्थश्च पञ्चवक्त्रः षडाननः ॥
चतुर्मुखो वेदकर्ता यं स्तोतुमक्षमः सदा । गणेशो न समर्थश्च योगीन्द्राणां गुरोगुरुः ॥
ऋषयो देवताश्चैव मुनीन्द्रमनुमानवाः । स्वप्ने तेषामदृश्यं च त्वामेवं किं स्तुवन्ति ते ॥
श्रुतयः स्तवनेऽशक्ताः किं स्तुवन्ति विपश्चितः । विहायैवं शरीरं च बालो भवितुमर्हसि ॥
वसुदेवकृतं स्तोत्रं त्रिसंध्यं यः पठेन्नरः । भक्तिदास्यमवाप्नोति श्रीकृष्णचरणाम्बुजे ॥
विशिष्टपुत्रं लभते हरिदासं गुणान्वितम् । सङ्कटं निस्तरेत् तूर्णं शत्रुभीत्या प्रमुच्यते ॥

(श्रीकृष्णजन्मखण्ड ७। ८०-९०)

कर रही है। उसके प्रसन्न मुखपर मन्द मुस्कानकी छटा छा रही थी। उसे देखकर वसुदेवजीको बड़ा विस्मय हुआ। वे तुरंत ही पुत्रको वहाँ सुलाकर कन्याको गोदमें ले डरते-डरते मथुराकी ओर गये



और अपनी पत्नीके सूतिकागारमें जा पहुँचे। वहीं उन्होंने उस महामायास्वरूपिणी बालिकाको सुला दिया। बालिका जोर-जोरसे रोने लगी। उसे देखकर देवकी धरा उठी। उस बालिकाने अपने रोनेकी आवाजसे ही रक्षकोंको जगा दिया। रक्षक शीघ्र उठकर खड़े हो गये और उस बालिकाको छीनकर कंसके निकट जा पहुँचे। देवकी और वसुदेव भी शोकसे विह्वल हो पीछे-पीछे गये। महामुने! बालिकाको देखकर कंसको अधिक प्रसन्नता नहीं हुई। उस रोती हुई बच्चीपर भी उसे दया नहीं आयी। वह क्रूरकर्मा असुर उस बालिकाको लेकर पत्थरपर दे मारनेके लिये आगे बढ़ा। उस समय वसुदेव और देवकीने बड़े आदरके साथ उससे कहा—‘नृपश्रेष्ठ कंस! तुम नीतिशास्त्रमें निपुण विद्वान् हो; अतः हमारी सच्ची, नीतियुक्त तथा मनोहर बात सुनो। भैया! तुमने हमारे भाई-बन्धु होकर भी हम दोनोंके

छः पुत्रोंका वध कर डाला, फिर भी तुम्हें दया नहीं आती! अब इस आठवें गर्भमें यह अबला बालिका प्राप्त हुई है। हमारी इस बच्चीको मारकर तुम्हें भूतलपर कौन-सा महान् ऐश्वर्य प्राप्त हो जायगा? क्या एक अबला युद्धके मुहानेपर तुम्हारी राज्यलक्ष्मीका हनन करनेमें समर्थ हो सकती है?’ ऐसा कहकर वसुदेव और देवकी दोनों दुरात्मा कंसके सामने वहाँ फूट-फूटकर रोने लगे। कंस बड़ा ही निर्दय था। उसने उन दोनोंकी बातें सुनकर इस प्रकार उत्तर दिया।



कंस बोला—बहिन! मेरी बात सुनो। मैं तुम्हें समझाता हूँ। विधाता दैववश एक तिनकेके द्वारा पर्वतको धराशायी करनेमें समर्थ हैं। एक कीड़ेके द्वारा सिंह और व्याघ्रको तथा एक मच्छरके द्वारा विशालकाय हाथीको नष्ट कर सकते हैं। शिशुके द्वारा महान् वीरका, क्षुद्र जन्तुओंद्वारा विशालकाय प्राणीका, चूहेके द्वारा बिल्लीका और मेढकके द्वारा सर्पका वध करा सकते हैं। इस प्रकार विधाता जन्यके द्वारा जनकका, भक्ष्यके द्वारा भक्षकका, अग्निके द्वारा जलका और सूखे तिनकेके द्वारा अग्निका नाश करनेमें समर्थ हैं। एकमात्र द्विज जडुने सात

समुद्रोंको पी लिया था; अतः तीनों लोकोंमें विधाताकी विचित्र गतिको समझ पाना अत्यन्त कठिन है। दैवयोगसे यह बालिका ही मेरा नाश करनेमें समर्थ हो जायगी, अतः मैं बालिकाका भी वध कर डालूँगा। इस विषयमें विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है।

ऐसा कहकर कंस उस बालिकाको मारना ही चाहता था कि वसुदेवजीने पुनः उससे कहा—‘राजन्! तुमने अबतक व्यर्थ ही हिंसा की है। कृपानिधे! अब इस बालिकाको मुझे दे दो।’ महामुने! उनकी बात सुनकर विचारज्ञ कंस संतुष्ट हो गया। इसी समय उसे बोध कराती हुई आकाशवाणी प्रकट हुई। ‘ओ मूढ़ कंस! तू विधाताकी गतिको न जानकर किसे मारने जा रहा है? तेरा वध करनेवाला बालक कहीं उत्पन्न हो गया है। समय आनेपर प्रकट होगा।’ यह

दैववाणी सुनकर राजा कंसने बालिकाको त्याग दिया। वसुदेव और देवकी उसे पाकर बड़े प्रसन्न हुए। वे उस बालिकाको छातीसे लगाये घरको लौट आये। मरी हुई कन्या मानो पुनः जी गयी हो, इस प्रकार उसे पाकर वसुदेवजीने ब्राह्मणोंको बहुत धन दिया। विप्रवर! वह कन्या परमात्मा श्रीकृष्णकी बड़ी बहिन हुई। पार्वतीके अंशसे उसका आविर्भाव हुआ था। लोकमें वह ‘एकानंशा’ नामसे विख्यात हुई। द्वारकामें रुक्मिणीके विवाहके अवसरपर वसुदेवजीने उस कन्याको भगवान् शंकरके अंशावतार महर्षि दुर्वासाके हाथमें भक्तिपूर्वक दे दिया था। मुने! इस प्रकार श्रीकृष्ण-जन्मके विषयमें सारी बातें बतायी गयीं। इसका बारंबार कीर्तन जन्म, मृत्यु और जराके कष्टको नष्ट करनेवाला, सुखदायक और पुण्यदायक है*।

(अध्याय ७)



जन्माष्टमी-व्रतके पूजन, उपवास तथा महत्त्व आदिका निरूपण

नारदजी बोले—भगवन्! जन्माष्टमी-व्रत समस्त व्रतोंमें उत्तम कहा गया है। अतः आप उसका वर्णन कीजिये। जिस जन्माष्टमी-व्रतमें जयन्ती नामक योग प्राप्त होता है, उसका फल क्या है? तथा सामान्यतः जन्माष्टमी-व्रतका अनुष्ठान करनेसे किस फलकी प्राप्ति होती है? इस समय इन्हीं बातोंपर प्रकाश डालिये। महामुने! यदि व्रत न किया जाय अथवा व्रतके दिन भोजन कर लिया जाय तो क्या दोष होता है? जयन्ती अथवा सामान्य जन्माष्टमीमें उपवास करनेसे कौन-सा अभीष्ट फल प्राप्त होता है? प्रभो! उक्त व्रतमें पूजनका विधान क्या है? कैसे

संयम करना चाहिये? उपवास अथवा पारणामें पूजन एवं संयमका नियम क्या है? इस विषयमें भलीभाँति विचार करके कहिये।

भगवान् नारायणने कहा—मुने! सप्तमी तिथिको तथा पारणाके दिन व्रती पुरुषको हविष्यान्न भोजन करके संयमपूर्वक रहना चाहिये। सप्तमीकी रात्रि व्यतीत होनेपर अरुणोदयकी वेलामें उठकर व्रती पुरुष प्रातःकालिक कृत्य पूर्ण करनेके अनन्तर स्नानपूर्वक संकल्प करे। ब्रह्मन्! उस संकल्पमें यह उद्देश्य रखना चाहिये कि आज मैं श्रीकृष्णप्रीतिके लिये व्रत एवं उपवास करूँगा। मन्वादि तिथि प्राप्त होनेपर स्नान और पूजन करनेसे जो फल मिलता

* श्रीमद्भागवतके वर्णनके साथ इसका मेल नहीं खाता। उसमें चतुर्भुजरूपसे भगवान् प्रकट होते हैं। कन्याको कंस पृथ्वीपर पटक देता है और वह आकाशमें जाकर कंसको सावधान करती है। कल्पभेदसे दोनों ही वर्णन सत्य हो सकते हैं।

है, भाद्रपदमासकी अष्टमी तिथिको स्नान और पूजन करनेसे वही फल कोटिगुना अधिक होता है। उस तिथिको जो पितरोंके लिये जलमात्र अर्पण करता है, वह मानो लगातार सौ वर्षोंतक पितरोंकी तृप्तिके लिये गयाश्राद्धका सम्पादन कर लेता है; इसमें संशय नहीं है।

स्नान और नित्यकर्म करके सूतिकागृहका निर्माण करे। वहाँ लोहेका खड्ग, प्रज्वलित अग्नि तथा रक्षकोंका समूह प्रस्तुत करे। अन्यान्य अनेक प्रकारकी आवश्यक सामग्री तथा नाल काटनेके लिये कैची लाकर रखे। विद्वान् पुरुष यज्ञपूर्वक एक ऐसी स्त्रीको भी उपस्थित करे, जो धायका काम करे। सुन्दर षोडशोपचार पूजनकी सामग्री, आठ प्रकारके फल, मिठाइयाँ और द्रव्य—इन सबका संग्रह कर ले। नारदजी! जायफल, कङ्गोल, अनार, श्रीफल, नारियल, नीबू और मनोहर कूष्माण्ड आदि फल संग्रहणीय हैं। आसन, वसन, पाद्य, मधुपर्क, अर्घ्य, आचमनीय, स्नानीय, शय्या, गन्ध, पुष्प, नैवेद्य, ताम्बूल, अनुलेपन, धूप, दीप और आभूषण—ये सोलह उपचार हैं।

पैर धोकर स्नानके पश्चात् दो धुले हुए वस्त्र धारण करके आसनपर बैठे और आचमन करके स्वस्तिवाचनपूर्वक कलश-स्थापन करे। कलशके समीप पाँच देवताओंकी पूजा करे। कलशपर परमेश्वर श्रीकृष्णका आवाहन करके वसुदेव-देवकी, नन्द-यशोदा, बलदेव-रोहिणी, षष्ठीदेवी, पृथ्वी, ब्रह्मनक्षत्र—रोहिणी, अष्टमी तिथिकी अधिष्ठात्री देवी, स्थानदेवता, अश्वत्थामा, बलि, हनुमान्, विभीषण, कृपाचार्य, परशुराम, व्यासदेव तथा मार्कण्डेय मुनि—इन सबका आवाहन करके श्रीहरिका ध्यान करे। मस्तकपर फूल चढ़ाकर विद्वान् पुरुष फिर ध्यान करे। नारद! मैं सामवेदोक्त ध्यान बता रहा हूँ, सुनो। इसे ब्रह्माजीने सबसे पहले महात्मा सनत्कुमारको बताया था।

ध्यान

मैं श्याम-मेघके समान अभिराम आभावाले साक्षिस्वरूप बालमुकुन्दका भजन करता हूँ, जो अत्यन्त सुन्दर हैं तथा जिनके मुखारविन्दपर मन्द-मुस्कानकी छटा छा रही है। ब्रह्मा, शिव, शेषनाग और धर्म—ये कई-कई दिनोंतक उन परमेश्वरकी स्तुति करते रहते हैं। बड़े-बड़े मुनीश्वर भी ध्यानके द्वारा उन्हें अपने वशमें नहीं कर पाते हैं। मनु, मनुष्यगण तथा सिद्धोंके समुदाय भी उन्हें रिझा नहीं पाते हैं। योगीश्वरोंके चिन्तनमें भी उनका आना सम्भव नहीं हो पाता है। वे सभी बातोंमें सबसे बढ़कर हैं; उनकी कहीं तुलना नहीं है।

इस प्रकार ध्यान करके मन्त्रोच्चारणपूर्वक पुष्प चढ़ावे और समस्त उपचारोंको क्रमशः अर्पित करके व्रती पुरुष व्रतका पालन करे। अब प्रत्येक उपचारका क्रमशः मन्त्र सुनो।

आसन

हरे! उत्तम रत्नों एवं मणियोंद्वारा निर्मित, सम्पूर्ण शोभासे सम्पन्न तथा विचित्र बेलबूटोंसे चित्रित यह सुन्दर आसन सेवामें अर्पित है। इसे ग्रहण कीजिये।

वसन

श्रीकृष्ण! यह विश्वकर्माद्वारा निर्मित वस्त्र अग्निमें तपाकर शुद्ध किया गया है। इसमें तपे हुए सुवर्णके तार जड़े गये हैं। आप इसे स्वीकार करें।

पाद्य

गोविन्द! आपके चरणोंको पखारनेके लिये सोनेके पात्रमें रखा हुआ यह जल परम पवित्र और निर्मल है। इसमें सुन्दर पुष्प डाले गये हैं। आप इस पाद्यको ग्रहण करें।

मधुपर्क या पञ्चामृत

भगवन्! मधु, घी, दही, दूध और शक्कर—इन सबको मिलाकर तैयार किया गया मधुपर्क या

पञ्चामृत सुवर्णके पात्रमें रखा गया है। इसे आपकी सेवामें निवेदन करना है। आप स्नानके लिये इसका उपयोग करें।

अर्घ्य

हरे! दुर्वा, अक्षत, श्वेत पुष्प और स्वच्छ जलसे युक्त यह अर्घ्य सेवामें समर्पित है। इसमें चन्दन, अगुरु और कस्तूरीका भी मेल है। आप इसे ग्रहण करें।

आचमनीय

परमेश्वर! सुगन्धित वस्तुसे वासित यह शुद्ध, सुस्वादु एवं स्वच्छ जल आचमनके योग्य है। आप इसे ग्रहण करें।

स्नानीय

श्रीकृष्ण! सुगन्धित द्रव्यसे युक्त एवं सुवासित विष्णुतैल तथा आँवलेका चूर्ण स्नानोपयोगी द्रव्यके रूपमें प्रस्तुत है। इसे स्वीकार करें।

शय्या

श्रीहरे! उत्तम रत्न एवं मणियोंके सारभागसे रचित, अत्यन्त मनोहर तथा सूक्ष्म वस्त्रसे आच्छादित यह शय्या सेवामें समर्पित है। इसे ग्रहण कीजिये।

गन्ध

गोविन्द! विभिन्न वृक्षोंके चूर्णसे युक्त, नाना प्रकारके वृक्षोंकी जड़ोंके द्रवसे पूर्ण तथा कस्तूरीरससे मिश्रित यह गन्ध सेवामें समर्पित है। इसे स्वीकार करें।

पुष्प

परमेश्वर! वृक्षोंके सुगन्धित तथा सम्पूर्ण देवताओंको अत्यन्त प्रिय लगनेवाले पुष्प आपकी सेवामें अर्पित हैं। इन्हें ग्रहण कीजिये।

नैवेद्य

गोविन्द! शर्करा, स्वस्तिक नामवाली मिठाई तथा अन्य मीठे पदार्थोंसे युक्त यह नैवेद्य सेवामें समर्पित है। यह सुन्दर पके फलोंसे संयुक्त है।

आप इसे स्वीकार करें। हरे! शक्कर मिलाया हुआ ठंडा और स्वादिष्ट दूध, सुन्दर पकवान, लड्डू, मोदक, घी मिलायी हुई खीर, गुड़, मधु, ताजा दही और तक्र—यह सब सामग्री नैवेद्यके रूपमें आपके सामने प्रस्तुत है। आप इसे आरोगें।

ताम्बूल

परमेश्वर! यह भोगोंका सारभूत ताम्बूल कर्पूर आदिसे युक्त है। मैंने भक्तिभावसे मुखशुद्धिके लिये निवेदन किया है। आप कृपापूर्वक इसे ग्रहण करें।

अनुलेपन

परमेश्वर! चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और कुंकुमके द्रवसे संयुक्त सुन्दर अबीर-चूर्ण अनुलेपनके रूपमें प्रस्तुत है। कृपया ग्रहण कीजिये।

धूप

हरे! विभिन्न वृक्षोंके उत्कृष्ट गोंद तथा अन्य सुगन्धित पदार्थोंके संयोगसे बना हुआ यह धूप अग्निका साहचर्य पाकर सम्पूर्ण देवताओंके लिये अत्यन्त प्रिय हो जाता है। आप इसे स्वीकार करें।

दीप

गोविन्द! अत्यन्त प्रकाशमान एवं उत्तम प्रभाका प्रसार करनेवाला यह सुन्दर दीप घोर अन्धकारके नाशका एकमात्र हेतु है। आप इसे ग्रहण करें।

जलपान

हरे! कर्पूर आदिसे सुवासित यह पवित्र और निर्मल जल सम्पूर्ण जीवोंका जीवन है। आप पीनेके लिये इसे ग्रहण करें।

आभूषण

गोविन्द! नाना प्रकारके फूलोंसे युक्त तथा महीन डोरेमें गुँथा हुआ यह हार शरीरके लिये श्रेष्ठ आभूषण है। इसे स्वीकार कीजिये।

पूजोपयोगी दातव्य द्रव्योंका दान करके व्रतके स्थानमें रखा हुआ द्रव्य श्रीहरिको ही

समर्पित कर देना चाहिये। उस समय इस प्रकार कहे—‘परमेश्वर! वृक्षोंके बीजस्वरूप ये स्वादिष्ट और सुन्दर फल वंशकी वृद्धि करनेवाले हैं। आप इन्हें ग्रहण कीजिये।’ आवाहित देवताओंमेंसे प्रत्येकका व्रती पुरुष पूजन करे। पूजनके पश्चात् भक्तिभावसे उन सबको तीन-तीन बार पुष्पाञ्जलि दे। सुनन्द, नन्द और कुमुद आदि गोप, गोपी, राधिका, गणेश, कार्तिकेय, ब्रह्मा, शिव, पार्वती, लक्ष्मी, सरस्वती, दिक्पाल, ग्रह, शेषनाग, सुदर्शनचक्र तथा श्रेष्ठ पार्षदगण—इन सबका पूजन करके समस्त देवताओंको पृथ्वीपर दण्डवत् प्रणाम करे। तदनन्तर ब्राह्मणोंको नैवेद्य देकर दक्षिणा दे तथा जन्माध्यायमें बतायी गयी कथाका भक्तिभावसे श्रवण करे। उस समय व्रती पुरुष रातमें कुशासनपर बैठकर जागता रहे। प्रातःकाल नित्यकर्म सम्पन्न करके श्रीहरिका सानन्द पूजन करे तथा ब्राह्मणोंको भोजन कराकर भगवन्नामोंका कीर्तन करे।

नारदजीने पूछा—वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ नारायण-देव! व्रतकालकी सर्वसम्मत वेदोक्त व्यवस्था क्या है? यह बताइये। साथ ही वेदार्थ तथा प्राचीन संहिताका विचार करके यह भी बतानेकी कृपा कीजिये कि व्रतमें उपवास एवं जागरण करनेसे क्या फल मिलता है अथवा उसमें भोजन कर लिया जाय तो कौन-सा पाप लगता है?

भगवान् नारायणने कहा—यदि आधी रातके समय अष्टमी तिथिका एक चौथाई अंश भी दृष्टिगोचर होता हो तो वही व्रतका मुख्य काल है। उसीमें साक्षात् श्रीहरिने अवतार ग्रहण किया है। वह जय और पुण्य प्रदान करती है; इसलिये ‘जयन्ती’ कही गयी है। उसमें उपवास-व्रत करके विद्वान् पुरुष जागरण करे। यह समय सबका अपवाद, मुख्य एवं सर्वसम्मत है, ऐसा वेदवेत्ताओंका कथन है। पूर्वकालमें ब्रह्माजीने भी ऐसा ही कहा था। जो अष्टमीको उपवास एवं जागरणपूर्वक व्रत करता है, वह करोड़ों जन्मोंमें

उपाजित पापोंसे छुटकारा पा जाता है; इसमें संशय नहीं है। सप्तमीविद्धा अष्टमीका यत्नपूर्वक त्याग करना चाहिये। रोहिणी नक्षत्रका योग मिलनेपर भी सप्तमीविद्धा अष्टमीको व्रत नहीं करना चाहिये; क्योंकि भगवान् देवकीनन्दन अविद्ध-तिथि एवं नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए थे। यह विशिष्ट मङ्गलमय क्षण वेदों और वेदाङ्गोंके लिये भी गुप्त है। रोहिणी नक्षत्र बीत जानेपर ही व्रती पुरुषको पारणा करनी चाहिये। तिथिके अन्तमें श्रीहरिका स्मरण तथा देवताओंका पूजन करके की हुई पारणा पवित्र मानी गयी है। वह मनुष्योंके समस्त पापोंका नाश करनेवाली होती है। सम्पूर्ण उपवास-व्रतोंमें दिनको ही पारणा करनेका विधान है। वह उपवास-व्रतका अङ्गभूत, अभीष्ट फलदायक तथा शुद्धिका कारण है। पारणा न करनेपर फलमें कमी आती है। रोहिणीव्रतके सिवा दूसरे किसी व्रतमें रातको पारणा नहीं करनी चाहिये। महारात्रिको छोड़कर दूसरी रात्रिमें पारणा की जा सकती है। ब्राह्मणों और देवताओंकी पूजा करके पूर्वाह्नकालमें पारणा उत्तम मानी गयी है।

रोहिणी-व्रत सबको सम्मत है। उसका अनुष्ठान अवश्य करना चाहिये। यदि बुध अथवा सोमवारसे युक्त जयन्ती मिल जाय तो उसमें व्रत करके व्रती पुरुष गर्भमें वास नहीं करता है। यदि उदयकालमें किञ्चिन्मात्र कुछ अष्टमी हो और सम्पूर्ण दिन-रातमें नवमी हो तथा बुध, सोम एवं रोहिणी नक्षत्रका योग प्राप्त हो तो वह सबसे उत्तम व्रतका समय है। सैकड़ों वर्षोंमें भी ऐसा योग मिले या न मिले, कुछ कहा नहीं जा सकता। ऐसे उत्तम व्रतका अनुष्ठान करके व्रती पुरुष अपनी करोड़ों पीढ़ियोंका उद्धार कर देता है। जो सम्पत्तिसे रहित भक्त मनुष्य हैं, वे व्रतसम्बन्धी उत्सवके बिना भी यदि केवल उपवासमात्र कर लें तो भगवान् माधव उनपर उतनेसे ही प्रसन्न हो जाते हैं। भक्तिभावसे भौति-भौतिके उपचार

चढ़ाने तथा रातमें जागरण करनेसे दैत्यशत्रु श्रीहरि जयन्ती-व्रतका फल प्रदान करते हैं। जो अष्टमी-व्रतके उत्सवमें धनका उपयोग करनेमें कंजूसी नहीं करता, उसे उत्तम फलकी प्राप्ति होती है। जो कंजूसी करता है, वह उसके अनुरूप ही फल पाता है। विद्वान् पुरुष अष्टमी और रोहिणीमें पारणा न करे; अन्यथा वह पारणा पूर्वकृत पुण्योंको तथा उपवाससे प्राप्त होनेवाले फलको भी नष्ट कर देती है, तिथि आठ गुने फलका नाश करती है और नक्षत्र चौगुने फलका। अतः प्रयत्नपूर्वक तिथि और नक्षत्रके अन्तमें पारणा करे। यदि महानिशा प्राप्त होनेपर तिथि और नक्षत्रका अन्त होता हो तो व्रती पुरुषको तीसरे दिन पारणा करनी चाहिये। आदि और अन्तके चार-चार दण्डको छोड़कर बीचकी तीन पहरवाली रात्रिको त्रियामा रजनी कहते हैं। उस रजनीके आदि और अन्तमें दो संध्याएँ होती हैं। जिनमेंसे एकको दिनादि या प्रातःसंध्या कहते हैं और दूसरीको दिनान्त या सायंसंध्या। शुद्धा जन्माष्टमी

तिथिको जागरणपूर्वक व्रतका अनुष्ठान करके मनुष्य सौ जन्मोंके किये हुए पापोंसे छुटकारा पा जाता है। इसमें संशय नहीं है। जो मनुष्य शुद्धा जन्माष्टमीमें केवल उपवासमात्र करके रह जाता है, व्रतोत्सव या जागरण नहीं करता, वह अश्वमेध-यज्ञके फलका भागी होता है। श्रीकृष्णजन्माष्टमीके दिन भोजन करनेवाले नराधम घोर पापों और उनके भयानक फलोंके भागी होते हैं। जो उपवास करनेमें असमर्थ हो, वह एक ब्राह्मणको भोजन करावे अथवा उतना धन दे दे, जितनेसे वह दो बार भोजन कर ले। अथवा प्राणायाम-मन्त्रपूर्वक एक सहस्र गायत्रीका जप करे। मनुष्य उस व्रतमें बारह हजार मन्त्रोंका यथार्थरूपसे जप करे तो और उत्तम है। वत्स नारद! मैंने धर्मदेवके मुखसे जो कुछ सुना था, वह सब तुम्हें कह सुनाया। व्रत, उपवास और पूजाका जो कुछ विधान है और उसके न करनेपर जो कुछ दोष होता है; वह सब यहाँ बता दिया गया। (अध्याय ८)

~~~~~

**श्रीकृष्णकी अनिर्वचनीय महिमा, धरा और द्रोणकी तपस्या, अदिति और कद्रूका पारस्परिक शापसे देवकी तथा रोहिणीके रूपमें भूतलपर जन्म, हलधर और श्रीकृष्णके जन्मका उत्सव**

नारदजीने पूछा—भगवन्! गोकुलमें यशोदाभवनके भीतर श्रीकृष्णको रखकर जब वसुदेवजीने अपने गृहको प्रस्थान किया, तब नन्दरायजीने किस प्रकार पुत्रोत्सव मनाया? श्रीहरिने वहाँ रहकर क्या किया? वे कितने वर्षोंतक वहाँ रहे? प्रभो! आप उनकी बालक्रीड़ाका क्रमशः वर्णन कीजिये। पूर्वकालमें गोलोकमें श्रीराधाके साथ भगवान्ने जो प्रतिज्ञा की थी, वृन्दावनमें उस प्रतिज्ञाका निर्वाह उन्होंने किस प्रकार किया? प्रभो! उस समय भूतलपर वृन्दावनका स्वरूप कैसा था? उनका रासमण्डल

कैसा था? यह सब बताइये। रासक्रीड़ा और जलक्रीड़ाका विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये। नन्दने कौन-सी तपस्या की थी? यशोदा और रोहिणीने कौन-सा तप किया था? श्रीहरिसे पहले हलधरका जन्म कहाँ हुआ था? श्रीहरिका अपूर्व आख्यान अमृतखण्डके समान माना गया है। विशेषतः कविके मुखमें श्रीहरिचरित्रमय काव्य पद-पदपर नूतन प्रतीत होता है। आप अपने रासमण्डलकी क्रीड़ाका स्वयं ही वर्णन कीजिये। काव्यमें परोक्ष वस्तुका वर्णन होता है। परंतु जहाँ प्रत्यक्ष देखी हुई वस्तुका वर्णन हो, उसे उत्तम कहा गया

है। साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण योगीन्द्रोंके गुरुके भी गुरु हैं। जो जिसका अंश होता है, वह उस अंशोंके सुखसे सुखी होता है। प्रभो! आपने ही यह वर्णन किया है कि आप दोनों नर और नारायण श्रीहरिके चरणोंमें विलीन हो गये थे। उनमें भी आप ही साक्षात् गोलोकके अंश हैं; अतः उनके समान ही महान् हैं (इसीलिये श्रीकृष्णलीलाएँ आपके प्रत्यक्ष अनुभवमें आयी हुई हैं; अतः आप उनका वर्णन कीजिये)।

**भगवान् नारायण बोले—**नारद! ब्रह्मा, शिव, शेष, गणेश, कूर्म, धर्म, मैं, नर तथा कार्तिकेय—ये नौ श्रीकृष्णके अंश हैं। अहो! उन गोलोकनाथकी महिमाका कौन वर्णन कर सकता है? जिन्हें स्वयं हम भी नहीं जानते और न वेद ही जानते हैं। फिर दूसरे विद्वान् क्या जान सकते हैं? शूकर, वामन, कल्कि, बुद्ध, कपिल और मत्स्य—ये भी श्रीकृष्णके अंश हैं तथा अन्य कितने ही अवतार हैं, जो श्रीकृष्णकी कलामात्र हैं। नृसिंह, राम तथा श्वेतद्वीपके स्वामी विराट् विष्णु पूर्ण अंशसे सम्पन्न हैं। श्रीकृष्ण परिपूर्णतम परमात्मा हैं। वे स्वयं ही वैकुण्ठ और गोकुलमें निवास करते हैं। वैकुण्ठमें वे कमलाकान्त कहे गये हैं और रूप-भेदसे चतुर्भुज हैं। गोलोक और गोकुलमें ये द्विभुज श्रीकृष्ण स्वयं ही राधाकान्त कहलाते हैं। योगी पुरुष इन्हींके तेजको सदा अपने चित्तमें धारण करते हैं। भक्त पुरुष इन्हीं भगवान्के तेजोमय चरणारविन्दका चिन्तन करते हैं। भला, तेजस्वीके बिना तेज कहाँ रह सकता है? ब्रह्मन्! सुनो। मैं तुमसे यशोदा, नन्द और रोहिणीके तपका वर्णन करता हूँ, जिसके कारण उन्होंने श्रीहरिका मुँह देखा था। वसुओंमें श्रेष्ठ तपोधन द्रोण नन्द नामसे इस धरातलपर अवतीर्ण हुए थे। उनकी पत्नी जो तपस्विनी धरा थीं, वे ही सती-साध्वी यशोदा हुई थीं। सपोंको जन्म देनेवाली नागमाता कद्रू ही रोहिणी बनकर

भूतलपर प्रकट हुई थीं। इनके जन्म और चरित्रका वर्णन करता हूँ, सुनो।

एक समयकी बात है, पुण्यदायक भारतवर्षमें गौतम-आश्रमके समीप गन्धमादन पर्वतपर धरा और द्रोणने तपस्या आरम्भ की। मुने! उनकी तपस्याका उद्देश्य था—भगवान् श्रीकृष्णका दर्शन। सुप्रभाके निर्जन तटपर दस हजार वर्षोंतक वे वसु-दम्पति तपस्यामें लगे रहे, परंतु उन्हें श्रीहरिके दर्शन नहीं हुए। तब वे दोनों वैराग्यवश अग्निकुण्डका निर्माण करके उसमें प्रवेश करनेको उद्यत हो गये। उन दोनोंको मरनेके लिये उत्सुक देख वहाँ आकाशवाणी हुई—‘वसुश्रेष्ठ! तुम दोनों दूसरे जन्ममें भूतलपर अवतीर्ण हो गोकुलमें अपने पुत्रके रूपमें श्रीहरिके दर्शन करोगे; योगियोंको भी उन भगवान्का दर्शन होना अत्यन्त कठिन है। बड़े-बड़े विद्वानोंके लिये भी ध्यानके द्वारा उन्हें वशमें कर पाना असम्भव है। वे ब्रह्मा आदि देवताओंके भी वन्दनीय हैं।’ यह सुनकर धरा और द्रोण सुखपूर्वक अपने घरको चले गये और भारतवर्षमें जन्म लेकर उन्होंने श्रीहरिके मुखारविन्दके दर्शन किये। इस प्रकार यशोदा और नन्दका चरित तुमसे कहा गया; अब देवताओंके लिये भी परम गोपनीय रोहिणीका चरित्र सुनो।

एक समय देवमाता अदितिने ऋतुमती होनेपर समस्त शृङ्गारोंसे सुसज्जित हो अपने पतिदेव श्रीकश्यपजीसे मिलना चाहा। उस समय कश्यपजी अपनी दूसरी पत्नी सर्पमाता कद्रूके पास थे। कश्यपजीके आनेमें विलम्ब होनेपर अदितिको बहुत क्षोभ हुआ और उन्होंने कद्रूको शाप दे दिया कि ‘वे स्वर्गलोकको त्यागकर मानव-योनिको प्राप्त हों।’ इस बातको सुनकर कद्रूने भी अदितिको शाप दिया कि ‘वे जरायुक्त होकर मर्त्यलोकमें मानव-योनिमें जायें।’

इस प्रकार दोनोंके शापग्रस्त होनेपर कश्यपजीने कद्रूको सान्त्वना देकर समझाया कि ‘तुम मेरे



साथ मर्त्यलोकमें जाकर श्रीहरिके मुखकमलका दर्शन प्राप्त करोगी।' तदनन्तर कश्यपजीने अदितिके घर जाकर उनकी इच्छा पूर्ण की। उसी ऋतुसे देवराजका जन्म हुआ। इसके बाद अदितिने देवकीके रूपमें, कद्रूने रोहिणीके रूपमें और कश्यपजीने श्रीकृष्णके पिता श्रीवसुदेवजीके रूपमें जन्म ग्रहण किया।

मुने! यह सारा गोपनीय रहस्य बताया गया। अब अनन्त, अप्रमेय तथा सहस्रों मस्तकवाले भगवान् बलदेवजीके जन्मका वृत्तान्त सुनो। साध्वि! रोहिणी वसुदेवजीकी प्रेयसी भार्या थीं। मुने! वे वसुदेवजीकी आज्ञासे संकर्षणकी रक्षाके लिये गोकुलमें चली गयीं। कंससे भयभीत होनेके कारण उन्हें वहाँसे पलायन करना पड़ा था। उन दिनों योगमायाने श्रीकृष्णकी आज्ञासे देवकीके सातवें गर्भको रोहिणीके उदरमें स्थापित कर दिया था। उस गर्भको स्थापित करके वे देवी तत्काल कैलासपर्वतको चली गयीं। कुछ दिनोंके बाद रोहिणी नन्दभवनमें श्रीकृष्णके अंशस्वरूप पुत्रको जन्म दिया। उसकी अङ्गकान्ति तपाये हुए सुवर्णके समान गौर थी। वह बालक साक्षात् ईश्वर था। उसके मुखपर मन्द हास्यकी मनोहर छटा एवं प्रसन्नता छा रही थी। वह ब्रह्मतेजसे प्रकाशित हो रहा था। उसके जन्ममात्रसे देवताओंमें आनन्द छा गया। स्वर्गलोकमें दुन्दुभि, आनक और मुरज आदि दिव्य वाद्य बज उठे। आनन्दमग्न हुए देवता शङ्खध्वनिके साथ जय-जयकार करने लगे। नन्दका हृदय हर्षसे उल्लसित हो उठा। उन्होंने ब्राह्मणोंको बहुत-सा धन दिया। धायने आकर बालककी नाल काटी और उसे नहलाया। समस्त आभूषणोंसे विभूषित गोपियाँ जय-जयकार करने लगीं। उस पराये पुत्रके लिये भी नन्दने बड़े आदरके साथ महान् उत्सव मनाया। यशोदाजीने गोपियों तथा ब्राह्मणियोंको प्रसन्नतापूर्वक धन दान किया। नाना प्रकारके द्रव्य, सिन्दूर एवं तैल प्रदान किये।

वत्स! इस प्रकार मैंने तुमसे नन्द और यशोदाके तपका प्रसङ्ग कहा, हलधरके जन्मकी कथा कही तथा रोहिणीजीके चरित्रको सुनाया है। अब तुम्हें जो अभीष्ट है, वह नन्दपुत्रोत्सवका प्रसङ्ग सुनो। वह सुखदायक, मोक्षदायक तथा जन्म, मृत्यु और जरावस्थाका निवारण करनेवाला सारतत्त्व है। श्रीकृष्णका मङ्गलमय चरित्र वैष्णवोंका जीवन है। वह समस्त अशुभोंका विनाशक तथा श्रीहरिके दास्यभावको देनेवाला है।

वसुदेवजीने श्रीकृष्णको नन्दभवनमें रख दिया और उनकी कन्याको गोदमें लेकर वे हर्षपूर्वक अपने घरको लौट आये। यह प्रसङ्ग तथा उस कन्याका श्रवणसुखद चरित्र पहले कहा जा चुका है। अब गोकुलमें जो श्रीकृष्णकी मङ्गलमयी लीला प्रकट हुई, उसे बताता हूँ, सुनो। जब वसुदेवजी अपने घरको लौट गये, तब जया तिथि अष्टमीसे युक्त उस विजयपूर्ण मङ्गलमय सूतिकागारमें नन्द और यशोदाने देखा—उनका पुत्र धरतीपर पड़ा हुआ है। उसके श्रीअङ्गोंसे नवीन मेघमालाके समान तेजःपुञ्जमयी श्यामकान्ति प्रस्फुटित हो रही है। वह नग्न बालक बड़ा सुन्दर दिखायी देता था। उसकी दृष्टि गृहके शिखरभागकी ओर लगी हुई थी। उसका मुख शरत्कालकी पूर्णिमाके चन्द्रमाको लज्जित कर रहा था। दोनों नेत्र नील कमलकी शोभाको छीने लेते थे। वह कभी रोता था और कभी हँसने लगता था। उसके श्रीअङ्गोंमें धूलिके कण लगे हुए थे। उसके दोनों हाथ धरतीपर टिके हुए थे और युगल चरणारविन्द प्रेमके पुञ्ज-से जान पड़ते थे। उस दिव्य बालक श्रीहरिको देखकर पत्नीसहित नन्दको बड़ी प्रसन्नता हुई। धायने ठंडे जलसे बालकको नहलाया और उसकी नाल काट दी। उस समय गोपियाँ हर्षसे जय-जयकार करने लगीं। व्रजकी सारी गोपिकाएँ, बालिका और युवतियाँ भी ब्राह्मणपत्नियोंके साथ सूतिकागारमें आयीं। उन सबने आकर बालकको

देखा और प्रसन्नतापूर्वक उसे आशीर्वाद दिया। नन्दनन्दनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करती हुई वे उन्हें अपनी गोदमें ले लेती थीं। उनमेंसे कितनी ही

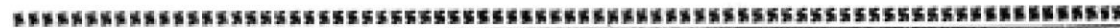


गोपियाँ रातमें वहीं रह गयीं।

नन्दने वस्त्रसहित स्नान करके धुली हुई धोती और चादर धारण की। फिर प्रसन्नचित्त हो वहाँ परम्परागत विधिक पालन किया। ब्राह्मणोंको भोजन कराया, उनसे मङ्गलपाठ करवाया, नाना प्रकारके बाजे बजवाये और वन्दीजनोंको धन-दान किया। तत्पश्चात् नन्दने आनन्दपूर्वक ब्राह्मणोंको धन दिया तथा उत्तम रत्न, मूँगे और हीरे भी आदरपूर्वक उन्हें दिये। मुने! तिलोंके सात पर्वत, सुवर्णके सौ ढेर, चाँदी, धान्यकी पर्वतोपम राशि, वस्त्र, सहस्रों मनोरम गौएँ, दही, दूध, शकर, माखन, घी, मधु, मिठाई, लड्डू, स्वादिष्ट मोदक, सब प्रकारकी खेतीसे भरी-पूरी भूमि, वायुके समान वेगशाली घोड़े, पान और तेल—इन सबका

दान करके नन्दजी बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने सूतिकागारकी रक्षाके लिये ब्राह्मणोंको नियुक्त किया। मन्त्रज्ञ मनुष्यों तथा बड़ी-बूढ़ी गोपियोंको लगाया। उन्होंने ब्राह्मणोंद्वारा वेदोंका पाठ कराया। एकमात्र मङ्गलमय हरिनामका कीर्तन कराया तथा देवताओंकी पूजा करवायी। युवती तथा बड़ी-बूढ़ी ब्राह्मणपत्नियाँ बालक-बालिकाओंको साथ ले मुस्कराती हुई नन्दभवनमें आयीं। नन्दरायजीने उनको भी नाना प्रकारके धन और रत्न दिये। रत्नमय अलंकारोंसे विभूषित बड़ी-बूढ़ी गोपियाँ भी मुस्कराती हुई तीव्र गतिसे नन्द-मन्दिरमें आयीं। उन्हें बहुत-से वस्त्र, चाँदी और सहस्रों गौएँ सादर अर्पित कीं। ज्यौतिष-शास्त्रके विशेषज्ञ विविध ज्यौतिषी, जिनकी वाणी सिद्ध थी, हाथमें पुस्तकें लिये नन्दमन्दिरमें पधारे। नन्दजीने उन्हें नमस्कार करके प्रसन्नतापूर्वक उनके सामने विनय प्रकट की। उन सबने आशीर्वाद दिये और उत्तम बालकको देखा। इस प्रकार ब्रजराज नन्दने सामग्री एकत्र करके पुत्रोत्सव मनाया और ज्यौतिषियोंद्वारा शुभाशुभ भविष्यका प्रकाशन कराया। तदनन्तर वह बालक नन्दभवनमें शुक्ल पक्षके चन्द्रमाकी भाँति दिनोंदिन बढ़ने लगा। श्रीकृष्ण और हलधर दोनों ही माताका स्तन-पान करते थे। मुने! वहाँ नन्दके पुत्रोत्सवमें प्रसन्न हुई रोहिणी देवीने आयी हुई स्त्रियोंको प्रसन्नतापूर्वक तैल, सिन्दूर और ताम्बूल प्रदान किये। वे सब बालकके सिरपर आशीर्वाद दे अपने-अपने घरको चली गयीं। केवल यशोदा, रोहिणी और नन्द—ये ही उस घरमें हर्षपूर्वक रहे।

(अध्याय ९)



**आकाशवाणी सुनकर कंसका पूतनाको गोकुलमें भेजना, पूतनाका श्रीकृष्णके मुखमें विषमिश्रित स्तन देना और प्राणोंसे हाथ धोकर श्रीकृष्णकी कृपासे माताकी गतिको प्राप्त हो गोलोकमें जाना**

भगवान् नारायण कहते हैं—नारद! एक दिन राजसभामें स्वर्णसिंहासनपर बैठे हुए कंसको बड़ी मधुर आकाशवाणी सुनायी दी—‘ओ महामूढ़ नरेश! क्या कर रहा है? अपने कल्याणका उपाय सोच। तेरा काल धरतीपर उत्पन्न हो चुका है। वसुदेवने मायासे तेरे शत्रुभूत बालकको नन्दके हाथमें दे दिया और उनकी कन्या लाकर तुझे सौंप दी। यह कन्या मायाका अंश है और वसुदेवके पुत्रके रूपमें साक्षात् श्रीहरि अवतीर्ण हुए हैं। वे ही तेरे प्राणहन्ता हैं। इस समय गोकुलके नन्द-मन्दिरमें उनका पालन-पोषण हो रहा है। देवकीका सातवाँ गर्भ भी स्थलित या मृत नहीं हुआ है। योगमायाने उस गर्भको रोहिणीके उदरमें स्थापित कर दिया था। उस गर्भसे शेषके अंशभूत महाबली बलदेवजी प्रकट हुए हैं। श्रीकृष्ण और बलभद्र—दोनों तेरे काल हैं और इस समय गोकुलके नन्दभवनमें पल रहे हैं।’

वह आकाशवाणी सुनकर राजा कंसका मस्तक झुक गया। उसे सहसा बड़ी भारी चिन्ता प्राप्त हुई। उसने अनमने होकर आहारको भी त्याग दिया और प्राणोंसे भी बढ़कर प्रेयसी बहिन सती-साध्वी पूतनाको बुलाकर उस नीतिज्ञ नरेशने भरी सभामें इस प्रकार कहा।

**कंस बोला—**पूतने! मेरे कार्यकी सिद्धिके लिये गोकुलके नन्द-मन्दिरमें जाओ और अपने एक स्तनको विषसे ओतप्रोत करके शीघ्र ही नन्दके नवजात शिशुके मुखमें दे दो। वत्से! तुम मनके समान वेगसे चलनेवाली मायाशास्त्रमें निपुण और योगिनी हो। अतः मायासे मानवी रूप धारण करके तुम वहाँ जाओ। सुप्रतिष्ठे! तुम दुर्वासासे महामन्त्रकी दीक्षा लेकर सर्वत्र जाने

और सब प्रकारका रूप धारण करनेमें समर्थ हो।

नारद! ऐसा कहकर महाराज कंस उस राजसभामें चुप हो रहा। इधर स्वेच्छाचारिणी पूतना कंसको प्रणाम करके वहाँसे चल दी। उसने परम सुन्दरी नारीका रूप धारण कर लिया। उसकी अङ्गकान्ति तपाये हुए सुवर्णके समान प्रकाशित हो रही थी। वह अनेक प्रकारके आभूषणोंसे विभूषित थी और मस्तकपर मालतीकी मालासे अलंकृत केशपाश धारण किये हुए थी। उसके ललाटमें कस्तूरीकी बेंदीसे युक्त सिन्दूरकी रेखा शोभा पा रही थी। पैरोंमें मञ्जीर और कटिभागमें करधनीकी मधुर झनकार फैल रही थी। व्रजमें पहुँचकर पूतनाने मनोहर नन्द-भवनपर दृष्टिपात किया। वह दुर्लङ्घ्य एवं गहरी खाइयोंसे घिरा हुआ था। साक्षात् विश्वकर्माने दिव्य प्रस्तरोंद्वारा उसका निर्माण किया था। इन्द्रनील, मरकत और पद्मराग मणियोंसे उस भव्य भवनकी बड़ी शोभा हो रही थी। सोनेके दिव्य कलश और चित्रित शुभ शिखर उस नन्द-मन्दिरकी शोभा बढ़ाते थे। चार द्वारोंसे समलंकृत गगनचुम्बी परकोटे उस भवनके आभूषण थे। उसमें लोहेके किवाड़ लगे हुए थे। द्वारोंपर द्वारपाल पहरा दे रहे थे। वह परम सुन्दर एवं रमणीय भवन सुन्दरी गोपाङ्गनाओंसे आवेष्टित था। मोती, माणिक्य, पारसमणि तथा रत्नादि वैभवोंसे भरे हुए उस भव्य भवनमें सुवर्णमय पात्र और घट भारी संख्यामें दिखायी दे रहे थे। करोड़ों गौएँ उस भवनके द्वारकी शोभा बढ़ा रही थीं। लाखों ऐसे गोपकिङ्कर वहाँ विद्यमान थे, जिनका भरण-पोषण नन्दभवनसे ही होता था। विभिन्न कार्योंमें लगी हुई सहस्रों दासियाँ उस भवनकी शोभा बढ़ा रही थीं। सुन्दरी

पूतनाने अत्यन्त मनोहर वेष धारण करके मन्द मुस्कानकी छटा बिखेरते हुए नन्द-मन्दिरमें प्रवेश किया। उसे महलमें प्रवेश करती देख वहाँकी गोपियोंने उसका बहुत आदर किया। वे सोचने लगीं—‘ये कमलालया लक्ष्मी अथवा साक्षात् दुर्गा ही तो नहीं हैं, जो साक्षात् श्रीकृष्णका दर्शन करनेके लिये यहाँ पधारी हैं।’ गोपियों और गोपोंने उसे प्रणाम किया और कुशल-समाचार पूछा। उसे बैठनेके लिये सिंहासन दिया और पैर धोनेके लिये जल अर्पित किया। पूतनाने भी गोपबालकोंका कुशल-मङ्गल पूछा। वह सुन्दरी वहाँ मुस्कराती हुई सिंहासनपर बैठ गयी। उसने बड़े आदरके साथ गोपियोंका दिया हुआ पाद्य-जल ग्रहण किया। तब सब गोपियोंने पूछा—‘स्वामिनि! तुम कौन हो? इस समय तुम्हारा निवास कहाँ है? तुम्हारा नाम क्या है? और यहाँ पधारनेका प्रयोजन क्या है? यह बताओ।’

उन गोपियोंका यह वचन सुनकर वह भी मनोहर वाणीमें बोली—“मैं मथुराकी रहनेवाली गोपी हूँ। इस समय एक ब्राह्मणकी भार्या हूँ। मैंने संदेशवाहकके मुखसे यह मङ्गलसूचक संवाद सुना है कि ‘वृद्धावस्थामें नन्दरायजीके यहाँ महान् पुत्रका जन्म हुआ है।’ यह सुनकर मैं उस पुत्रको देखने और उसे अभीष्ट आशीर्वाद देनेके लिये यहाँ आयी हूँ। अब तुमलोग नन्द-नन्दनको यहाँ ले आओ। मैं उसे देखूँगी और आशीर्वाद देकर चली जाऊँगी?”

ब्राह्मणीका यह वचन सुनकर यशोदाजीका हृदय हर्षसे खिल उठा। उन्होंने बेटेसे प्रणाम करवाकर उसे उस ब्राह्मणीकी गोदमें दे दिया। बालकको गोदमें लेकर उस सतीसाध्वी पुण्यवती पूतनाने बारंबार उसका मुँह चूमा और सुखपूर्वक बैठकर श्रीहरिके मुखमें उसने अपना स्तन दे

दिया। साथ ही वह बोली—‘गोपसुन्दरि! तुम्हारा यह सुन्दर बालक अत्यन्त अद्भुत है। यह गुणोंमें



साक्षात् भगवान् नारायणके समान है।’ श्रीकृष्ण उस विषैले स्तनको पीकर उसकी छातीपर बैठे-बैठे हँसने लगे। उन्होंने उस विषमिश्रित दूधको सुधाके समान मानकर पूतनाके प्राणोंके साथ ही पी लिया। साध्वी पूतनाने अपने प्राणोंके साथ ही बालकको त्याग दिया। मुने! वह प्राणोंका त्याग करके पृथ्वीपर गिर पड़ी। उसका आकार और मुख विकराल दिखायी देने लगे। वह उत्तान मुँह होकर पड़ी थी। उसने स्थूल शरीरको त्यागकर सूक्ष्म शरीरमें प्रवेश किया। फिर वह शीघ्र ही रत्नसारनिर्मित दिव्य रथपर आरूढ़ हो गयी। उस विमानको लाखों मनोहर दिव्य एवं श्रेष्ठ पार्षद सब ओरसे घेरकर बैठे थे। उनके हाथोंमें लाखों चँवर ढुल रहे थे। लाखों दिव्य दर्पण उस दिव्य रथकी शोभा बढ़ा रहे थे। अग्निशुद्ध सूक्ष्म दिव्य वस्त्रसे उस श्रेष्ठ विमानको सजाया गया था। उसमें नाना प्रकारके चित्र-विचित्र मनोहर रत्नमय कलश शोभा दे रहे थे। उस रथमें सौ पहिये लगे थे। वह सुन्दर विमान रत्नोंके तेजसे प्रकाशित हो रहा था। पूर्वोक्त पार्षद पूतनाको उस रथपर बिठाकर उसे उत्तम गोलोकधाममें



ले गये। उस अद्भुत दृश्यको देखकर गोप और गोपिकाएँ चकित हो गयीं। कंस भी वह सारा समाचार सुनकर बड़ा विस्मित हुआ। मुने! यशोदा मैया बालकको गोदमें उठाकर उसे स्तन पिलाने लगीं। उन्होंने ब्राह्मणोंके द्वारा बालकके कल्याणके लिये मङ्गल-पाठ करवाया। नन्दरायने बड़े आनन्दसे पूतनाके देहका दाह-संस्कार किया। उस समय उसकी चितासे चन्दन, अगुरु और कस्तूरीके समान सुगन्ध निकल रही थी।

**नारदजीने पूछा—**भगवन्! राक्षसी पूतनाके रूपमें वह कौन ऐसी पुण्यवती सती थी, जिसने श्रीहरिको अपना स्तन पिलाया? किस पुण्यसे भगवान्‌के दर्शन करके वह उनके परम धाममें गयी?

**नारायण बोले—**देवर्षे! बलिके यज्ञमें वामनका मनोहर रूप देखकर बलिकी कन्या रत्नमालाने उनके प्रति पुत्र-स्नेह प्रकट किया था।

उसने मन-ही-मन यह संकल्प किया कि यदि इस पुत्रके समान मेरे पुत्र होता तो मैं उसके मुखमें अपना स्तन देकर उसे वक्षःस्थलपर बिठाती। भगवान्‌से उसका यह मनोरथ छिपा न रहा। उन्होंने इस प्रकार जन्मान्तरमें उसका स्तन-पान किया। भक्तोंकी वाञ्छा पूर्ण करनेवाले उन कृपानिधानने पूतनाको माताकी गति प्रदान की। मुने! राक्षसी पूतनाने श्रीकृष्णको विष लिपटा हुआ स्तन देकर उस द्वेष-भक्तिके द्वारा भी माताके समान गति प्राप्त कर ली। ऐसे परम दयालु भगवान् श्रीकृष्णको छोड़कर मैं और किसका भजन करूँ? \* विप्रवर! इस प्रकार मैंने तुमसे श्रीकृष्णके गुणोंका वर्णन किया, जो पद-पदपर अत्यन्त मधुर हैं। इसके अतिरिक्त भी जो श्रीकृष्णकी मधुर लीलाएँ हैं, उनका तुम्हारे समक्ष वर्णन आरम्भ करता हूँ।

(अध्याय १०)

### तृणावर्तका उद्धार तथा उसके पूर्वजन्मका परिचय

**भगवान् नारायण कहते हैं—**नारद! एक दिन गोकुलमें सती साध्वी नन्दरानी यशोदा बालकको गोदमें लिये घरके कामकाजमें लगी हुई थीं। उस समय गोकुलमें बवंडरका रूप धारण करनेवाला तृणावर्त आ रहा था। मन-ही-मन उसके आगमनकी बात जानकर श्रीहरिने अपने शरीरका भार बढ़ा लिया। उस भारसे पीड़ित होकर मैया यशोदाने लालाको गोदसे उतार दिया और खाटपर सुलाकर वे यमुनाजीके किनारे चली गयीं। इसी बीचमें वह बवंडररूपधारी असुर वहाँ आ पहुँचा और उस बालकको लेकर घुमाता हुआ सौ योजन ऊपर जा पहुँचा। उसने वृक्षोंकी डालियाँ तोड़ दीं तथा इतनी धूल उड़ायी

कि गोकुलमें अँधेरा छा गया। उस मायावी असुरने तत्काल यह सब उत्पात किया। फिर वह स्वयं भी श्रीहरिके भारसे आक्रान्त हो वहीं पृथ्वीपर गिर पड़ा। श्रीहरिका स्पर्श प्राप्त करके वह असुर भी भगवद्धामको चला गया। अपने कर्मोंका नाश करके सुन्दर दिव्य रथपर आरूढ़ हो गोलोकमें जा पहुँचा। वह पाण्ड्यदेशका राजा था और दुर्वासाके शापसे असुर हो गया था। श्रीकृष्णके चरणोंका स्पर्श पाकर उसने गोलोकधाममें स्थान प्राप्त कर लिया।

मुने! बवंडरका रूप समाप्त होनेपर भयसे विह्वल गोप-गोपियोंने जब खोज की, तब बालकको शय्यापर न देखकर सब लोग शोकसे व्याकुल हो

\* दत्त्वा विषस्तनं कृष्णं पूतना राक्षसी मुने । मुक्तिं मातृगतिं प्राप कं भजामि विना हरिम् ॥

(श्रीकृष्णजन्मखण्ड १०। ४४)

इस प्रकार वे राजा सहस्राक्ष तृणावर्त नामक असुर होनेके पश्चात् श्रीहरिका स्पर्श पाकर उनके परमधाममें चले गये और उनकी रानियोंने भारतवर्षमें मनोवाञ्छित जन्म ग्रहण किया। इस तरह श्रीहरिका यह सारा उत्तम माहात्म्य कहा गया। साथ ही मुनिवर दुर्वासाके शापवश असुरयोनिमें पड़े हुए पाण्ड्यनरेशके उद्धारका प्रसङ्ग भी सुनाया गया। (अध्याय ११)

पिला रही थीं। इसी समय नन्द-मन्दिरमें बहुत-सी गोपियाँ आयीं, जिनमें कुछ बड़ी-बूढ़ी थीं और कुछ यशोदाजीकी सखियाँ थीं। इनके साथ

और भी बालक-बालिकाएँ थीं। उस दिन नन्दजीके यहाँ आभ्युदयिक कर्मका सम्पादन हुआ था। उस अवसरपर गोपियोंको आती देख सती यशोदाने अतृप्त बालक श्रीकृष्णको शीघ्र ही शय्यापर सुला दिया और स्वयं उठकर प्रसन्नतापूर्वक उनको प्रणाम किया। इतना ही नहीं, आनन्दित हुई गोपी यशोदाने उन सबको तेल, सिन्दूर, पान, मिष्ठान्न, वस्त्र और आभूषण भी दिये। इस बीचमें मायाके स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण मायासे भूखे बनकर दोनों चरण ऊपर फेंक-फेंककर रोने लगे। मुने! उनके पास ही गोरसके मटकोंसे भरा हुआ छकड़ा खड़ा था। श्रीकृष्णका एक पैर उससे जालगा। विश्वम्भरके पैरका आघात लगनेसे वह छकड़ा चूर-चूर हो गया। उस छकड़ेके टुकड़े-टुकड़े हो गये। उसके टूटे काठ वहीं बिखर गये। उसपर लदा हुआ दही, दूध, माखन, घी और मधु धरतीपर गिरकर बह चला। यह आश्चर्य देख भयसे व्याकुल हुई गोपियाँ बालकके पास दौड़ी हुई आयीं। उन्होंने देखा छकड़ा टूट चुका है और बालक उसकी बिखरी हुई लकड़ियोंके भीतर दबा है। टूटे-फूटे मटकोंका समूह तथा बहुत-सा गोरस भी वहाँ गिरा दिखायी दिया। लकड़ियोंको



दूर फेंककर भयसे व्याकुल हुई यशोदाने बालकको

गोदमें उठा लिया। योगमायाकी कृपासे उसके सारे अङ्ग सुरक्षित थे। वह भूखसे व्याकुल हो रो रहा था। यशोदाजीने उसके मुखमें स्तन दे दिया और स्वयं शोकसे व्याकुल हो फूट-फूटकर रोती रहीं। गोपोंने वहाँ खेलते हुए बालकोंसे पूछा 'छकड़ा कैसे टूटा है? इसके टूटनेका कोई कारण तो नहीं दिखायी देता है। सहसा यह अद्भुत काण्ड कैसे घटित हुआ?' उनकी बात सुनकर सब बालक बोले—'गोपगण! सुनो। अवश्य ही श्रीकृष्णके चरणोंका धक्का लगनेसे यह छकड़ा टूटा है।' बालकोंकी यह बात सुनकर गोप और गोपियाँ हँसने लगीं। उन्हें उनकी बातपर विश्वास नहीं हुआ। वे बोलीं—'बच्चोंकी बातें सत्य नहीं हैं।' तुरंत ही श्रेष्ठ ब्राह्मण आये और उन्होंने शिशुकी रक्षाके लिये स्वस्तिवाचन किया। एक ब्राह्मणने शिशुके शरीरपर हाथ रखकर कवच पढ़ा। विप्रवर! वह समस्त शुभ लक्षणोंसे युक्त कवच मैं तुम्हें बता रहा हूँ। यह वही कवच है, जिसे पूर्वकालमें श्रीविष्णुके नाभिकमलपर विराजमान ब्रह्माजीको भगवती योगमायाने दिया था। उस समय जलमें शयन करनेवाले त्रिलोकीनाथ विष्णु जलके भीतर नींद ले रहे थे और ब्रह्माजी मधु-कैटभके भयसे डरकर योगनिद्राकी स्तुति कर रहे थे। उसी अवसरपर योगनिद्राने उन्हें कवचका उपदेश दिया था।

योगनिद्रा बोली—ब्रह्मन्! तुम अपना भय दूर करो। जगत्पते! जहाँ श्रीहरि विराजमान हैं और मैं मौजूद हूँ, वहाँ तुम्हें भय किस बातका है? तुम यहाँ सुखपूर्वक रहो। श्रीहरि तुम्हारे मुखकी रक्षा करें। मधुसूदन मस्तककी, श्रीकृष्ण दोनों नेत्रोंकी तथा राधिकापति नासिकाकी रक्षा करें। माधव दोनों कानोंकी, कण्ठकी और कपालकी रक्षा करें। कपोलकी गोविन्द और केशोंकी स्वयं

केशव रक्षा करें। हृषीकेश अधरोष्ठकी, गदाग्रज दन्तपंक्तिकी, रासेश्वर रसनाकी और भगवान् वामन तालुकी रक्षा करें। मुकुन्द तुम्हारे वक्षःस्थलकी रक्षा करें। दैत्यसूदन उदरका पालन करें। जनार्दन नाभिकी और विष्णु तुम्हारी ठोड़ीकी रक्षा करें। पुरुषोत्तम तुम्हारे दोनों नितम्बों और गुह्य भागकी रक्षा करें। भगवान् जानकीश्वर तुम्हारे युगल जानुओं (घुटनों)- की सर्वदा रक्षा करें। नृसिंह सर्वत्र संकटमें दोनों हाथोंकी और कमलोद्भव वराह तुम्हारे दोनों चरणोंकी रक्षा करें। ऊपर नारायण और नीचे कमलापति तुम्हारी रक्षा करें। पूर्व दिशामें गोपाल तुम्हारा पालन करें। अग्निकोणमें दशमुखहन्ता श्रीराम तुम्हारी रक्षा करें। दक्षिण दिशामें वनमाली, नैऋत्यकोणमें वैकुण्ठ तथा पश्चिम दिशामें सत्पुरुषोंकी रक्षा करनेवाले स्वयं वासुदेव तुम्हारा पालन करें। वायव्यकोणमें अजन्मा विष्टरश्रवा श्रीहरि सदा तुम्हारी रक्षा करें। उत्तर दिशामें कमलासन ब्रह्मा अपने तेजसे सदा तुम्हारी रक्षा करें। ईशानकोणमें ईश्वर रक्षा करें। शत्रुजित् सर्वत्र पालन करें। जल, थल और आकाशमें तथा निद्रावस्थामें श्रीरघुनाथजी रक्षा करें।

ब्रह्मन्! इस प्रकार परम अद्भुत कवचका

वर्णन किया गया। पूर्वकालमें मेरे स्मरण करनेपर भगवान् श्रीकृष्णने कृपापूर्वक मुझे इसका उपदेश दिया था। शुम्भके साथ जब निर्लक्ष्य, घोर एवं दारुण संग्राम चल रहा था, उस समय आकाशमें खड़ी हो मैंने इस कवचकी प्राप्तिमात्रसे तत्काल उसे पराजित कर दिया था। इस कवचके प्रभावसे शुम्भ धरतीपर गिरा और मर गया। पहले सैकड़ों वर्षोंतक भयंकर युद्ध करके जब शुम्भ मर गया, तब कृपालु गोविन्द आकाशमें स्थित हो कवच और माल्य देकर गोलोकको चले गये।

मुने! इस प्रकार कल्पान्तरका वृत्तान्त कहा गया है। इस कवचके प्रभावसे कभी मनमें भय नहीं होता है। मैंने प्रत्येक कल्पमें श्रीहरिके साथ रहकर करोड़ों ब्रह्माओंको नष्ट होते देखा है। ऐसा कह कवच देकर देवी योगनिद्रा अन्तर्धान हो गयी और कमलोद्भव ब्रह्मा भगवान् विष्णुके नाभिकमलमें निःशंकभावसे बैठे रहे। जो इस उत्तम कवचको सोनेके यन्त्रमें मढ़ाकर कण्ठ या दाहिनी बाँहमें बाँधता है, उसकी बुद्धि सदा शुद्ध रहती है तथा उसे विष, अग्नि, सर्प और शत्रुओंसे कभी भय नहीं होता। जल, थल और अन्तरिक्षमें तथा निद्रावस्थामें भगवान् सदा उसकी रक्षा करते हैं\*।

\* हस्तं दत्त्वा शिशोर्गात्रे पपाठ कवचं द्विजः । वदामि तत्ते विप्रेन्द्र कवचं सर्वलक्षणम् ॥

यदत्तं मायया पूर्वं ब्रह्मणे नाभिपङ्कजे ।

निद्रिते जगतीनाथे जले च जलशायिनि । भीताय स्तुतिकर्त्रे च मधुकैटभयोर्भयात् ॥

योगनिद्रोवाच

दूरीभूतं कुरु भयं भयं किं ते हरौ स्थिते । स्थितायां मयि च ब्रह्मन् सुखं तिष्ठ जगत्पते ॥

श्रीहरिः पातु ते वक्त्रं मस्तकं मधुसूदनः । श्रीकृष्णश्चक्षुषी पातु नासिकां राधिकापतिः ॥

कर्णयुग्मं च कण्ठं च कपालं पातु माधवः । कपोलं पातु गोविन्दः केशांश्च केशवः स्वयम् ॥

अधरोष्ठं हृषीकेशो दन्तपंक्तिं गदाग्रजः । रासेश्वरश्च रसनां तालुकं वामनो विभुः ॥

वक्षः पातु मुकुन्दस्ते जठरं पातु दैत्यहा । जनार्दनः पातु नाभिं पातु विष्णुश्च ते हनुम् ॥

नितम्बयुग्मं गुह्यं च पातु ते पुरुषोत्तमः । जानुयुग्मं जानकीशः पातु ते सर्वदा विभुः ॥

हस्तयुग्मं नृसिंहश्च पातु सर्वत्र सङ्कटे । पादयुग्मं वराहश्च पातु ते कमलोद्भवः ॥

ऊर्ध्वं नारायणः पातु हृषधस्तात् कमलापतिः । पूर्वस्यां पातु गोपालः पातु वही दशास्यहा ॥

वनमाली पातु याम्यां वैकुण्ठः पातु नैऋती । वारुण्यां वासुदेवश्च सतो रक्षाकरः स्वयम् ॥

पातु ते सन्ततमजो वायव्यां विष्टरश्रवाः । उत्तरे च सदा पातु तेजसा जलजासनः ॥



ब्राह्मणने नन्दशिशुके कण्ठमें वह कवच बाँध दिया। इस प्रकार साक्षात् श्रीहरिने अपना ही कवच अपने कण्ठमें धारण किया। मुने! श्रीहरिके इस कवचका सम्पूर्ण प्रभाव बताया

गया। भगवान् अनन्त हैं। वे अपनी महिमासे कभी च्युत नहीं होते। उनके प्रभावकी कहीं तुलना नहीं है।

(अध्याय १२)

मुनि गर्गजीका आगमन, यशोदाद्वारा उनका सत्कार और परिचय-प्रश्न, गर्गजीका उत्तर, नन्दका आगमन, नन्द-यशोदाको एकान्तमें ले जाकर गर्गजीका श्रीराधा-कृष्णके नाम-माहात्म्यका परिचय देना और उनकी भावी लीलाओंका क्रमशः वर्णन करना, श्रीकृष्णके नामकरण एवं अन्नप्राशन-संस्कारका बृहद् आयोजन, ब्राह्मणोंको दान-मान, गर्गद्वारा श्रीकृष्णकी स्तुति तथा गर्ग आदिकी विदाई

भगवान् नारायण कहते हैं—महामुने! अब श्रीकृष्णका कुछ और माहात्म्य सुनो, जो विघ्नविनाशक, पापहारी, महान् पुण्य प्रदान करनेवाला तथा परम उत्तम है। एक दिनकी बात है। सोनेके सिंहासनपर बैठी हुई नन्दपत्नी यशोदा भूखे हुए श्रीकृष्णको गोदमें लेकर उन्हें स्तन पिला रही थीं। उसी समय एक श्रेष्ठ ब्राह्मण शिष्यसमूहसे घिरे हुए वहाँ आये। वे ब्रह्मतेजसे प्रकाशित हो रहे थे और शुद्ध स्फटिककी मालापर परब्रह्मका जप कर रहे थे। दण्ड और छत्र धारण किये श्वेत वस्त्र पहने वे महर्षि अपनी धवल दन्तपंक्तियोंके कारण बड़ी शोभा पा रहे थे। वेद

और वेदाङ्गोंके पारंगत तो वे थे ही, ज्योतिर्विद्याके मूर्तिमान् स्वरूप थे। उन्होंने अपने मस्तकपर तपाये हुए सुवर्णके समान पिङ्गल जटाभार धारण कर रखा था। उनका मुख शरत्पूर्णिमाके चन्द्रदेवकी कान्तिको लज्जित कर रहा था। गोरे-गोरे अङ्ग और कमल-जैसे नेत्रवाले वे योगिराज भगवान् शंकरके शिष्य थे तथा गदाधारी श्रीविष्णुके प्रति विशुद्ध भक्ति रखते थे। वे श्रीमान् महर्षि प्रसन्नतापूर्वक शिष्योंको पढ़ाते थे। उनके एक हाथमें व्याख्याकी मुद्रा सुस्पष्ट दिखायी देती थी। वे वेदोंकी अनेक प्रकारकी व्याख्या लीलापूर्वक करते थे। उन्हें देखकर ऐसा जान पड़ता था

ऐशान्यामीश्वरः पातु सर्वत्र पातु शत्रुजित् । जले स्थले चान्तरिक्षे निद्रायां पातु राघवः ॥  
इत्येवं कथितं ब्रह्मन् कवचं परमाद्भुतम् । कृष्णेन कृपया दत्तं स्मृतेनैव पुरा मया ॥  
शुम्भेन सह संग्रामे निर्लक्ष्ये घोरदारुणे । गगने स्थितया सद्यः प्राप्तिमात्रेण सो जितः ॥  
कवचस्य प्रभावेण धरण्यां पतितो मृतः । पूर्वं वर्षशतं खे च कृत्वा युद्धं भयावहम् ॥  
मृते शुम्भे च गोविन्दः कृपालुर्गगनस्थितः । माल्यं च कवचं दत्त्वा गोलोकं स जगाम ह ॥  
कल्पान्तरस्य वृत्तान्तं कृपया कथितं मुने । अभ्यन्तरभयं नास्ति कवचस्य प्रभावतः ॥  
कोटिशः कोटिशो नष्टा मया दृष्टाश्च वेधसः । अहं च हरिणा सार्द्धं कल्पे कल्पे स्थिरा सदा ॥  
इत्युक्त्वा कवचं दत्त्वा सान्त्वयन् चकार ह । निःशङ्को नाभिकमले तस्थौ स कमलोद्भवः ॥  
सुवर्णगुटिकायां तु कृत्वेदं कवचं परम् । कण्ठे वा दक्षिणे बाही बध्नीयाद् यः सुधीः सदा ॥  
विषाग्निस्पर्शशत्रुभ्यो भयं तस्य न विद्यते । जले स्थले चान्तरिक्षे निद्रायां रक्षतीश्वरः ॥

(श्रीकृष्णजन्मखण्ड १२। १५—३६)

मानो चारों वेदोंका तेज मूर्तिमान् हो गया हो। उनके कण्ठमें साक्षात् सरस्वतीका वास था। वे शास्त्रीय सिद्धान्तके एकमात्र विशेषज्ञ थे और दिन-रात श्रीकृष्णचरणारविन्दोंके ध्यानमें तत्पर रहते थे। उन्हें जीवन्मुक्त अवस्था प्राप्त थी। वे सिद्धोंके स्वामी, सर्वज्ञ और सर्वदर्शी थे।

उन्हें देखकर यशोदाजी खड़ी हो गयीं। उन्होंने मस्तक झुकाकर मुनिके चरणोंमें प्रणाम किया और उन्हें बैठनेके लिये सोनेका सिंहासन देकर आतिथ्यके लिये पाद्य, अर्घ्य, गौ तथा मधुपर्क निवेदन किया। मुस्कराती हुई नन्दरानीने अपने बालकसे मुनीन्द्रकी वन्दना करवायी। मुनिने भी मन-ही-मन श्रीहरिको सौ-सौ प्रणाम किये और प्रसन्नतापूर्वक वेदमन्त्रोंके अनुकूल आशीर्वाद दिया। यशोदाजीने मुनिके शिष्योंको भी प्रणाम किया तथा भक्तिभावसे उन सबके लिये पृथक्-पृथक् पाद्य आदि अर्पित किये। उन शिष्योंने यशोदाजीको आशीर्वाद दिया। मुनि अपने शिष्योंके साथ पैर धोकर जब सिंहासनपर बैठे, तब सती-साध्वी यशोदा बालकको गोदमें ले भक्तिभावसे मस्तक झुकाकर दोनों हाथ जोड़ मुनिके आगमनका कारण पूछनेको उद्यत हुई। वे बोलीं—‘मुने! आप स्वात्माराम महर्षि हैं, आपसे कुशल-मङ्गल पूछना यद्यपि उचित नहीं है, तथापि इस समय मैं आपका कुशल-समाचार पूछ रही हूँ। अबला बुद्धिहीन होती है। अतः आप मेरे इस दोषको क्षमा कर देंगे। साधुपुरुष सदा ही मूढ़ मनुष्योंके दोषोंको क्षमा करते रहते हैं।’

तदनन्तर अङ्गिरा, अत्रि, मरीचि और गौतम आदि बहुत-से ऋषि-मुनियोंके नाम लेकर यशोदाने पूछा—‘प्रभो! इन पुण्यश्लोक महात्माओंमेंसे आप कौन हैं। कृपया मुझे बताइये। यद्यपि आपसे उत्तर पानेके योग्य मैं नहीं हूँ, तथापि आप मुझे मेरी पूछी हुई बात बताइये। आप-जैसे महात्मा

पुरुष प्रसन्नमनसे शिशुको आशीर्वाद देने योग्य हैं। निश्चय ही ब्राह्मणोंका आशीर्वाद तत्काल पूर्ण मङ्गलकारी होता है।’



ऐसा कहकर नन्दरानी भक्तिभावसे मुनिके सामने खड़ी हो गयीं। उस सतीने नन्दरायजीको बुलानेके लिये चर भेजा। यशोदाजीकी पूर्वोक्त बातें सुनकर मुनिवर गर्ग हैंसने लगे। उनके शिष्य-समूह भी हास्यकी छटासे दसों दिशाओंको प्रकाशित करते हुए जोर-जोरसे हैंस पड़े। तब उन शुद्धबुद्धि महामुनि गर्गने यथार्थ हितकर, नीतियुक्त एवं अत्यन्त आनन्ददायक बात कही।

श्रीगर्गजी बोले—देवि! तुम्हारा यह समयोचित वचन अमृतके समान मधुर है। जिसका जिस कुलमें जन्म होता है, उसका स्वभाव भी वैसा ही होता है। समस्त गोपरूपी कमलवनोंके विकासके लिये गोपराज गिरिभानु सूर्यके समान हैं। उनकी पत्नीका नाम सती पद्यावती है, जो साक्षात् पद्मा (लक्ष्मी)-के समान हैं। उन्हींकी कन्या तुम यशोदा हो, जो अपने यशकी वृद्धि करनेवाली हो। भद्रे! नन्द और तुम जो कुछ भी हो, वह मुझे ज्ञात है। यह बालक जिस प्रयोजनसे भूतलपर अवतीर्ण हुआ है, वह सब मैं जानता हूँ। निर्जन स्थानमें नन्दके समीप मैं सब बातें बताऊँगा। मेरा नाम गर्ग है। मैं

चिरकालसे यदुकुलका पुरोहित हूँ। वसुदेवजीने मुझे यहाँ ऐसे कार्यके लिये भेजा है, जिसे दूसरा कोई नहीं कर सकता।

इसी बीचमें गर्गजीका आगमन सुनते ही नन्दजी वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने दण्डकी भाँति पृथ्वीपर माथा टेक उन मुनीश्वरको प्रणाम किया। साथ ही उनके शिष्योंको भी मस्तक झुकाया। उन सबने उन्हें आशीर्वाद दिये। इसके बाद गर्गजी आसनसे उठे और नन्द-यशोदाको साथ ले सुरम्य अन्तःपुरमें गये। उस निर्जन स्थानमें गर्ग, नन्द और पुत्रसहित यशोदा इतने ही लोग रह गये थे। उस समय गर्गजीने यह गूढ़ बात कही।

**श्रीगर्गजी बोले—**नन्द! मैं तुम्हें मङ्गलकारी वचन सुनाता हूँ। वसुदेवजीने जिस प्रयोजनसे मुझे यहाँ भेजा है, उसे सुनो। वसुदेवने सूतिकागारमें आकर अपना पुत्र तुम्हारे यहाँ रख दिया है और तुम्हारी कन्या वे मथुरा ले गये हैं। ऐसा उन्होंने कंसके भयसे किया है। यह पुत्र वसुदेवका है और जो इससे ज्येष्ठ है, वह भी उन्हींका है। यह निश्चित बात है। इस बालकका अन्नप्राशन और नामकरण-संस्कार करनेके लिये वसुदेवने गुप्तरूपसे मुझे यहाँ भेजा है। अतः तुम व्रजमें इन बालकोंके संस्कारकी तैयारी करो। तुम्हारा यह शिशु पूर्ण ब्रह्मस्वरूप है और मायासे इस भूतलपर अवतीर्ण हो पृथ्वीका भार उतारनेके लिये उद्यमशील है। ब्रह्माजीने इसकी आराधना की थी। अतः उनकी प्रार्थनासे यह भूतलका भार हरण करेगा। इस शिशुके रूपमें साक्षात् राधिकावल्लभ गोलोकनाथ भगवान् श्रीकृष्ण पधारे हैं। वैकुण्ठमें जो कमलाकान्त नारायण हैं तथा श्वेतद्वीपमें जो जगत्पालक विष्णु निवास करते हैं, वे भी इन्हींमें अन्तर्भूत हैं। महर्षि कपिल तथा इनके अन्यान्य अंश ऋषि नर-नारायण भी इनसे भिन्न नहीं हैं। ये सबके तेजोंकी राशि हैं।

वह तेजोराशि ही मूर्तिमान् होकर उनके यहाँ अवतीर्ण हुई है। भगवान् श्रीकृष्ण वसुदेवको अपना रूप दिखाकर शिशुरूप हो गये और सूतिकागारसे इस समय तुम्हारे घरमें आ गये हैं। ये किसी योनिसे प्रकट नहीं हुए हैं; अयोनिज रूपमें ही भूतलपर प्रकट हुए हैं। इन श्रीहरिने मायासे अपनी माताके गर्भको वायुसे पूर्ण कर रखा था। फिर स्वयं प्रकट हो अपने उस दिव्य रूपका वसुदेवजीको दर्शन कराया और फिर शिशुरूप हो वे यहाँ आ गये।

गोपराज! युग-युगमें इनका भिन्न-भिन्न वर्ण और नाम है; ये पहले श्वेत, रक्त और पीतवर्णके थे। इस समय कृष्णवर्ण होकर प्रकट हुए हैं। सत्ययुगमें इनका वर्ण श्वेत था। ये तेजःपुञ्जसे आवृत होनेके कारण अत्यन्त प्रसन्न जान पड़ते थे। त्रेतामें इनका वर्ण लाल हुआ और द्वापरमें ये भगवान् पीतवर्णके हो गये। कलियुगके आरम्भमें इनका वर्ण कृष्ण हो गया। ये श्रीमान् तेजकी राशि हैं, परिपूर्णतम ब्रह्म हैं; इसलिये 'कृष्ण' कहे गये हैं। 'कृष्णः' पदमें जो 'ककार' है, वह ब्रह्माका वाचक है। 'ऋकार' अनन्त (शेषनाग) का वाचक है। मूर्धन्य 'षकार' शिवका और 'णकार' धर्मका बोधक है। अन्तमें जो 'अकार' है, वह श्वेतद्वीपनिवासी विष्णुका वाचक है तथा विसर्ग नर-नारायण-अर्थका बोधक माना गया है। ये श्रीहरि उपर्युक्त सब देवताओंके तेजकी राशि हैं। सर्वस्वरूप, सर्वाधार तथा सर्वबीज हैं; इसलिये 'कृष्ण' कहे गये हैं। 'कृष्' शब्द निर्वाणका वाचक है, 'णकार' मोक्षका बोधक है और 'अकार' का अर्थ दाता है। ये श्रीहरि निर्वाण मोक्ष प्रदान करनेवाले हैं; इसलिये 'कृष्ण' कहे गये हैं। 'कृष्' का अर्थ है निश्चेष्ट, 'ण' का अर्थ है भक्ति और 'अकार'का अर्थ है दाता। भगवान् निष्कर्म भक्तिके दाता हैं; इसलिये उनका नाम 'कृष्ण' है। 'कृष्' का

अर्थ है कर्मोंका निर्मूलन, 'ण' का अर्थ है दास्यभाव और 'अकार' प्राप्ति का बोधक है। वे कर्मोंका समूल नाश करके भक्तिकी प्राप्ति कराते हैं; इसलिये 'कृष्ण' कहे गये हैं। नन्द! भगवान्‌के अन्य करोड़ों नामोंका स्मरण करनेपर जिस फलकी प्राप्ति होती है, वह सब केवल 'कृष्ण' नामका स्मरण करनेसे मनुष्य अवश्य प्राप्त कर लेता है। 'कृष्ण' नामके स्मरणका जैसा पुण्य है, उसके कीर्तन और श्रवणसे भी वैसा ही पुण्य होता है। श्रीकृष्णके कीर्तन, श्रवण और स्मरण आदिसे मनुष्यके करोड़ों जन्मोंके पापका नाश हो जाता है। भगवान्‌ विष्णुके सब नामोंमें 'कृष्ण' नाम ही सबकी अपेक्षा सारतम वस्तु और परात्पर तत्त्व है। 'कृष्ण' नाम अत्यन्त मङ्गलमय, सुन्दर तथा भक्तिदायक है\*।

'ककार' के उच्चारणसे भक्त पुरुष जन्म-मृत्युका नाश करनेवाले कैवल्य मोक्षको प्राप्त कर लेता है। 'ऋकार' के उच्चारणसे भगवान्‌का अनुपम दास्यभाव प्राप्त होता है। 'षकार' के उच्चारणसे उनकी मनोवाञ्छित भक्ति सुलभ होती है। 'णकार' के उच्चारणसे तत्काल ही उनके साथ निवासका सौभाग्य प्राप्त होता है और विसर्गके उच्चारणसे उनके सारूप्यकी उपलब्धि होती है, इसमें संशय नहीं है। 'ककार' का उच्चारण होते ही यमदूत काँपने लगते हैं। 'ऋकार' का उच्चारण होनेपर वे ठहर जाते हैं, आगे नहीं बढ़ते। 'षकार' के उच्चारणसे पातक, 'णकार' के उच्चारणसे रोग तथा 'अकार' के उच्चारणसे मृत्यु—ये सब निश्चय ही भाग खड़े

होते हैं; क्योंकि वे नामोच्चारणसे डरते हैं। व्रजेश्वर! श्रीकृष्ण-नामके स्मरण, कीर्तन और श्रवणके लिये उद्योग करते ही श्रीकृष्णके किंकर गोलोकसे विमान लेकर दौड़ पड़ते हैं। विद्वान्‌ लोग शायद भूतलके धूलिकणोंकी गणना कर सकें; परंतु नामके प्रभावकी गणना करनेमें संतपुरुष भी समर्थ नहीं हैं। पूर्वकालमें भगवान्‌ शंकरके मुखसे मैंने इस 'कृष्ण' नामकी महिमा सुनी थी। मेरे गुरु भगवान्‌ शंकर ही श्रीकृष्णके गुणों और नामोंका प्रभाव कुछ-कुछ जानते हैं। ब्रह्मा, अनन्त, धर्म, देवता, ऋषि, मनु, मानव, वेद और संतपुरुष श्रीकृष्ण-नाम-महिमाकी सोलहवीं कलाको भी नहीं जानते हैं।

नन्द! इस प्रकार मैंने तुम्हारे पुत्रकी महिमाका अपनी बुद्धि और ज्ञानके अनुसार वर्णन किया है। इसे मैंने गुरुजीके मुखसे सुना था। कृष्ण, पीताम्बर, कंसध्वंसी, विष्टरश्रवा, देवकीनन्दन, श्रीश, यशोदानन्दन, हरि, सनातन, अच्युत, विष्णु, सर्वेश, सर्वरूपधृक्, सर्वाधार, सर्वगति, सर्वकारणकारण, राधाबन्धु, राधिकात्मा, राधिकाजीवन, राधिकासहचारी, राधामानसपूरक, राधाधन, राधिकाङ्ग, राधिकासक्तमानस, राधाप्राण, राधिकेश, राधिकारमण, राधिकाचित्तचोर, राधाप्राणाधिक, प्रभु, परिपूर्णतम, ब्रह्म, गोविन्द और गरुडध्वज—नन्द! ये श्रीकृष्णके नाम जो तुमने मेरे मुखसे सुने हैं, हृदयमें धारण करो। शुभेक्षण! ये नाम जन्म तथा मृत्युके कष्टको हर लेनेवाले हैं। तुम्हारे कनिष्ठ पुत्रके नामोंका महत्त्व जैसा मैंने सुना था, वैसा यहाँ बताया है†। अब ज्येष्ठ पुत्र हलधरके नामका संकेत

\* नाम्नां भगवतो नन्द कोटीनां स्मरणे च यत् । तत्फलं लभते नूनं कृष्णेति स्मरणात्ररः ॥  
यद्विधं स्मरणे पुण्यं वचनाच्छ्रवणात् तथा । कोटिजन्माहसां नाशो भवेद् यत्स्मरणादिकात् ॥  
विष्णोर्नाम्नां च सर्वेषां सर्वात् सारं परात्परम् । कृष्णेति मङ्गलं नाम सुन्दरं भक्तिदास्यदम् ॥  
(श्रीकृष्णजन्मखण्ड १३। ६३—६५)

† कृष्णः पीताम्बरः कंसध्वंसी च विष्टरश्रवाः । देवकीनन्दनः श्रीशो यशोदानन्दनो हरिः ॥  
सनातनोऽच्युतो विष्णुः सर्वेशः सर्वरूपधृक् । सर्वाधारः सर्वगतिः सर्वकारणकारणः ॥



मेरे मुँहसे सुनो। ये जब गर्भमें थे, उस समय उस गर्भका संकर्षण किया गया था; इसलिये इनका नाम 'संकर्षण' हुआ। वेदोंमें यह कहा गया है कि इनका कभी अन्त नहीं होता; इसलिये ये 'अनन्त' कहे गये हैं। इनमें बलकी अधिकता है; इसलिये इनको 'बलदेव' कहते हैं। हल धारण करनेसे इनका नाम 'हली' हुआ है। नील रंगका वस्त्र धारण करनेसे इन्हें 'शितिवासा' (नीलाम्बर) कहा गया है। ये मूसलको आयुध बनाकर रखते हैं; इसलिये 'मुसली' कहे गये हैं। रेवतीके साथ इनका विवाह होगा; इसलिये ये साक्षात् 'रेवतीरमण' हैं। रोहिणीके गर्भमें वास करनेसे इन महाबुद्धिमान् संकर्षणको 'रौहिणेय' कहा गया है। इस प्रकार ज्येष्ठ पुत्रका नाम जैसा मैंने सुना था, वैसा बताया है। नन्द! अब मैं अपने घरको जाऊँगा। तुम अपने भवनमें सुखपूर्वक रहो।

ब्राह्मणकी यह बात सुनकर नन्दजी स्तब्ध रह गये। नन्दपत्नी भी निश्चेष्ट हो गयीं और वह बालक स्वयं हैंसने लगा। तब नन्दने गर्गजीको प्रणाम करके दोनों हाथ जोड़ लिये और भक्तिभावसे मस्तक झुकाकर विनयपूर्वक कहा।

**नन्द बोले—**ब्रह्मन्! यदि आप चले गये तो कौन महात्मा इस कर्मको करायेंगे; अतः आप स्वयं ही शुभ-दृष्टि करके इन बालकोंका नामकरण एवं अन्नप्राशन-संस्कार कराइये। राधा-बन्धुसे लेकर राधाप्राणाधिकतक जो नाम-समूह बताये गये हैं, उनमें जो राधा नाम आया है, वह राधा कौन है और किसकी पुत्री है?

नन्दकी यह बात सुनकर मुनिवर गर्ग हैंसने लगे और बोले—'यह परम निगूढ़ तत्त्व एवं

रहस्यकी बात है, जिसे तुम्हें बताऊँगा।'

**श्रीगर्गजी बोले—**नन्द! सुनो। मैं पुरातन इतिहास बता रहा हूँ। यह वृत्तान्त पहले गोलोकमें घटित हुआ था। उसे मैंने भगवान् शंकरके मुखसे सुना है। किसी समय गोलोकमें श्रीदामाका राधाके साथ लीलाप्रेरित कलह हो गया। उस कलहके कारण श्रीदामाके शापसे लीलावश गोपी राधाको गोकुलमें आना पड़ा है। इस समय वे वृषभानु गोपकी बेटी हैं और कलावती उनकी माता हैं। राधा श्रीकृष्णके अर्धाङ्गसे प्रकट हुई हैं और वे अपने स्वामीके अनुरूप ही परम सुन्दरी सती हैं। ये राधा गोलोकवासिनी हैं; परंतु इस समय श्रीकृष्णकी आज्ञासे यहाँ अयोनिसम्भवा होकर प्रकट हुई हैं। ये ही देवी मूल-प्रकृति ईश्वरी हैं। इन सती-साध्वी राधाने मायासे माताके गर्भको वायुपूर्ण करके वायुके निकलनेके समय स्वयं शिशु-विग्रह धारण कर लिया। ये साक्षात् कृष्ण-माया हैं और श्रीकृष्णके आदेशसे पृथ्वीपर प्रकट हुई हैं। जैसे शुक्लपक्षमें चन्द्रमाकी कला बढ़ती है, उसी प्रकार व्रजमें राधा बढ़ रही हैं। श्रीकृष्णके तेजके आधे भागसे वे मूर्तिमती हुई हैं। एक ही मूर्ति दो रूपोंमें विभक्त हो गयी है। इस भेदका निरूपण वेदमें किया गया है। ये स्त्री हैं, वे पुरुष हैं, किंवा वे ही स्त्री हैं और ये पुरुष हैं। इसका स्पष्टीकरण नहीं हो पाता। दो रूप हैं और दोनों ही स्वरूप, गुण एवं तेजकी दृष्टिसे समान हैं। पराक्रम, बुद्धि, ज्ञान और सम्पत्तिकी दृष्टिसे भी उनमें न्यूनता अथवा अधिकता नहीं है। किंतु वे गोलोकसे यहाँ पहले आयी हैं; इसलिये अवस्थामें श्रीकृष्णसे

राधाबन्धु राधिकात्मा राधिकाजीवनः स्वयम् । राधिकासहचारी च राधामानसपूरकः ॥  
 राधाधनो राधिकाङ्गो राधिकासक्तमानसः । राधाप्राणो राधिकेशो राधिकारमणः स्वयम् ॥  
 राधिकाचित्तचौरश्च राधाप्राणाधिकः प्रभुः । परिपूर्णतमं ब्रह्म गोविन्दो गरुडध्वजः ॥  
 नामान्येतानि कृष्णस्य श्रुतानि साम्प्रतं व्रज । जन्ममृत्युहराण्येव रक्ष नन्द शुभक्षणे ॥

(१३। ७५-८०)

इन्द्रयागकी परम्पराका भंजन, इन्द्रके कोपसे गोकुलकी रक्षा, गोपियोंके वस्त्रोंका अपहरण, उनके व्रतका सम्पादन, पुनः उन्हें वस्त्र अर्पण तथा मनोवाञ्छित वरदान देनेका कार्य करके ये श्यामसुन्दर अपनी लीलाओंसे उनके चित्तको चुरा लेंगे और उन्हें सर्वथा अपने अधीन कर लेंगे। तदनन्तर इनके द्वारा अत्यन्त रमणीय रासोत्सवका आयोजन होगा, जो सबका आनन्दवर्धन करेगा। शरद् और वसन्त ऋतुमें रातके समय पूर्ण चन्द्रमाका उदय होनेपर रासमण्डलमें गोपियोंको नूतन प्रेम-मिलनका सुख प्रदान करके ये श्यामसुन्दर उनका मनोरथ पूर्ण करेंगे। फिर कौतूहलवश उनके साथ जल-विहार भी करेंगे। तत्पश्चात् श्रीदामाके शापके कारण इनका गोप-गोपियों तथा श्रीराधाके साथ (पार्थिव) सौ वर्षोंके लिये वियोग हो जायगा। उस समय ये मथुरा चले जायेंगे और वहाँ इनका जाना गोपियोंके लिये शोकवर्द्धक होगा। उस समय पुनः ये उनके पास आकर उन्हें समझा-बुझाकर धैर्य बाँधायेंगे और आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करेंगे। उस प्रबोधन और आध्यात्मिक ज्ञानके द्वारा ये रथ तथा सारथि अक्रूरकी रक्षा करेंगे। फिर रथपर आरूढ़ हो पिता, भाई एवं ब्रजवासियोंके साथ यमुनाजीको लाँघकर ब्रजसे मथुराको पधारेंगे। मार्गमें यमुनाजीके जलके भीतर अक्रूरको अपने स्वरूपका दर्शन कराकर उन्हें ज्ञान देंगे। फिर सायंकाल मथुरामें पहुँचकर कौतूहलवश नगरमें घूम-घूमकर सबको दर्शन देंगे। माली, दर्जी और कुब्जाको भवबन्धनसे मुक्त करेंगे। शंकरजीके धनुषको तोड़कर यज्ञभूमिका दर्शन करेंगे। फिर कुवलयापीड़ हाथी और मत्तलोंका वध करनेके पश्चात् अपने सामने राजा कंसको देखेंगे और तत्काल उसका विध्वंस करके माता-पिताको बन्धनसे छुड़ायेंगे। तदनन्तर तुम सब गोपोंको समझा-बुझाकर लौटायेंगे। कंसके राज्यपर उग्रसेनका अभिषेक करेंगे। कंसके

बन्धु-बान्धवोंको ज्ञानोपदेश देकर उनका शोक दूर करेंगे। इसके बाद अपने भाईका और अपना उपनयन-संस्कार कराकर गुरुके मुखसे विद्या ग्रहण करेंगे। गुरुजीको उनका मरा हुआ पुत्र लाकर देंगे और फिर घर लौट आयेंगे। इसके बाद राजा जरासंधके सैनिकोंको चकमा देकर दुरात्मा कालयवनका वध, द्वारकापुरीका निर्माण, मुचुकुन्दका उद्धार तथा यादवोंसहित द्वारकापुरीको प्रस्थान करेंगे। वहाँ कौतूहलवश स्त्रीसमूहोंके साथ विवाह करके उनके साथ क्रीडा-विहार करेंगे। उनका तथा उनके पुत्र-पौत्रादिका सौभाग्यवर्धन करेंगे। मणिसम्बन्धी मिथ्या कलङ्कका मार्जन, पाण्डवोंकी सहायता, भूभार-हरण, धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिरके राजसूययज्ञका लीलापूर्वक सम्पादन, पारिजातका अपहरण, इन्द्रके गर्वका गञ्जन, सत्यभामाके व्रतकी पूर्ति, बाणासुरकी भुजाओंका खण्डन, शिवके सैनिकोंका मर्दन, महादेवजीको जूम्भणास्त्रसे बाँधना, बाणपुत्री उषाका अपहरण, अनिरुद्धको बाणासुरके बन्धनसे छुटकारा दिलाना, वाराणसीपुरीका दहन, ब्राह्मणकी दरिद्रताका दूरीकरण, एक ब्राह्मणके मरे हुए पुत्रोंको लाकर उसे देना, दुष्टोंका दमन आदि करना तथा तीर्थयात्राके प्रसङ्गसे तुम ब्रजवासियोंके साथ पुनः मिलना इत्यादि कार्य करके ये श्रीकृष्ण श्रीराधाके साथ फिर ब्रजमें आयेंगे। तदनन्तर अपने नारायण-अंशको द्वारकापुरीमें भेजकर ये जगदीश्वर गोलोकनाथ यहाँ राधाके साथ समस्त आवश्यक कार्य पूर्ण करेंगे तथा ब्रजवासियों एवं राधाको साथ लेकर शीघ्र ही गोलोकधाममें पधारेंगे। नारायणदेव तुम्हें साथ लेकर वैकुण्ठ पधारेंगे। नर-नारायण नामक जो दोनों ऋषि हैं, वे धर्मके घरको चले जायेंगे तथा श्वेतद्वीपनिवासी विष्णु क्षीरसागरको पधारेंगे।

नन्द! इस प्रकार भविष्यमें होनेवाली लीलाओंका वर्णन मैंने किया है। यह वेदका निश्चित मत है। अब इस समय जिस उद्देश्यसे मेरा आना

हुआ है, उसे बताता हूँ; सुनो। माघ शुक्ल चतुर्दशीकी शुभ बेलामें इन बालकोंका संस्कार करो। उस दिन गुरुवार है। रेवती नक्षत्र है। चन्द्र और तारा शुद्ध हैं। मीनके चन्द्रमा हैं। उसपर लग्नेशकी पूर्ण दृष्टि है। उत्तम वणिज नामक करण है और मनोहर शुभ योग है। वह दिन परम दुर्लभ है। उसमें सभी उत्कृष्ट एवं उपयोगी योगोंका उदय हुआ है। अतः पण्डितोंके साथ विचार करके उसी दिन प्रसन्नतापूर्वक संस्कार-कर्मका सम्पादन करो।

ऐसा कह मुनीश्वर गर्ग बाहर आकर बैठ गये। नन्द और यशोदाको बड़ा हर्ष हुआ और वे संस्कार-कर्मके लिये तैयारी करने लगे। इसी समय गर्गजीको देखनेके लिये गोप-गोपियाँ और बालक-बालिकाएँ नन्दभवनमें आयीं। उन्होंने देखा—मुनिश्रेष्ठ गर्ग मध्याह्नकालके सूर्यकी भाँति प्रकाशित हो रहे हैं। शिष्यसमूहोंसे धिरकर ब्रह्मतेजसे उद्भासित हो रहे हैं और प्रश्न पूछनेवाले किसी सिद्धपुरुषको वे प्रसन्नतापूर्वक गूढ़योगका रहस्य समझा रहे हैं। नन्दभवनकी एक-एक सामग्रीको मुस्कराते हुए देख रहे हैं और योगमुद्रा धारण किये स्वर्णसिंहासनपर बैठे हैं। ज्ञानमयी दृष्टिसे भूत, वर्तमान और भविष्यको भी देख रहे हैं। वे मन्त्रके प्रभावसे अपने हृदयमें परमात्माके जिस सिद्ध स्वरूपको देखते हैं, उसीको मुस्कराते हुए शिशुके रूपमें बाहर यशोदाकी गोदमें देख रहे हैं। महेश्वरके बताये हुए ध्यानके अनुसार जिस रूपका उन्हें साक्षात्कार हुआ था, उसी पूर्णकाम परमात्मस्वरूपका अत्यन्त प्रीतिपूर्वक दर्शन करके नेत्रोंसे आँसू बहाते हुए वे पुलकित शरीरसे भक्तिके सागरमें निमग्न दिखायी देते थे। योगचर्याके अनुसार मन-ही-मन भगवान्की पूजा और प्रणाम करते थे। गोप-गोपियोंने मस्तक झुकाकर उन्हें प्रणाम किया और गर्गजीने भी उन सबको आशीर्वाद

दिया। तदनन्तर मुनि अपने आसनपर विराजमान हुए और वे समागत स्त्री-पुरुष अपने-अपने घरको गये।

नन्दने आनन्दित होकर निकटवर्ती तथा दूरवर्ती बन्धुजनोंके पास शीघ्र ही मङ्गलपत्रिका पठायी। इसके बाद उन्होंने दूध, दही, घी, गुड़, तेल, मधु, माखन, तक्र और चीनीके शर्वतसे भरी हुई बहुत-सी नहरें लीलापूर्वक तैयार करायीं। इसके बाद उन्होंने अगहनीके चावलोंके सौ ऊँचे-ऊँचे पर्वताकार ढेर लगवाये। चिउरोंके सौ पर्वत, नमकके सात, शर्कराके भी सात, लड्डुओंके सात तथा पके फलोंके सोलह पर्वत खड़े कराये। जौ, गेहूँके आटेके पके हुए लड्डुक, पिण्ड, मोदक तथा स्वस्तिक (मिष्टान्न-विशेष)-के अनेक पर्वत खड़े किये गये थे। कपर्दकोंके बहुत ही ऊँचे-ऊँचे सात पर्वत खड़े दिखायी देते थे। कर्पूर आदिसे युक्त ताम्बूलके बीड़ोंसे घर भरा हुआ था। सुवासित जलके चौड़े-चौड़े कुण्ड भरे गये थे, जिनमें चन्दन, अगुरु और केसर मिलाये गये थे। नन्दजीने कौतूहलवश नाना प्रकारके रत्न, भाँति-भाँतिके सुवर्ण, रमणीय मोती-मूँगे, अनेक प्रकारके मनोहर वस्त्र और आभूषण भी पुत्रके अन्न-प्राशन-संस्कारके लिये संचित किये थे। आँगनको झाड़-बुहारकर सुन्दर बनाया गया। उसमें चन्दनमिश्रित जलका छिड़काव किया गया। केलेके खंभों, आमके नये पल्लवोंकी बन्दनवारों और महीन वस्त्रोंसे उस आँगनको कौतुकपूर्वक सब ओरसे घेर दिया गया। यथास्थान मङ्गल-कलश स्थापित किये गये। उन्हें फलों और पल्लवोंसे सजाया गया तथा चन्दन, अगुरु, कस्तूरी एवं फूलोंके गज्रोंसे सुशोभित किया गया। सुन्दर पुष्पहारों और मनोहर वस्त्रोंकी राशियोंसे नन्द-भवनके आँगनको सजाया गया था। उसमें गौओं, मधुपकों, आसनों, फलों और सजल कलशोंके

समूह यथास्थान रखे गये थे। वहाँ नाना प्रकारके अत्यन्त दुर्लभ और मनोहर वाद्य बज रहे थे। ढक्का, दुन्दुभि, पटह, मृदङ्ग, मुरज, आनकसमूह, वंशी, ढोल और झाँझ आदिके शब्द हो रहे थे। विद्याधरियोंके नृत्य, भाव-भंगी तथा भ्रमणसे नन्दप्राङ्गणकी अपूर्व शोभा हो रही थी। उसके साथ ही गन्धर्वराजोंके मूर्छनायुक्त संगीत तथा स्वर्ण-सिंहासनों एवं रथोंके सम्मिलित शब्द वहाँ गूँज रहे थे।

इसी समय संदेशवाहकने प्रसन्नतापूर्वक आकर नन्दरायजीसे कहा—‘प्रभो! आपके भाई-बन्धु गोपराज एवं गोपगण पधारे हैं। उनमेंसे कुछ लोग घोड़ोंपर चढ़कर आये हैं, कुछ हाथियोंपर सवार हैं और कितने ही रथोंपर आरूढ़ हो शीघ्रतापूर्वक पधारे हैं। रत्नमय अलंकारोंसे विभूषित कितने ही राजपुत्रोंका भी यहाँ शुभागमन हुआ है। पत्नी और सेवकोंसहित गिरिभानुजी पधारे हैं। उनके साथ चार-चार लाख रथ और हाथी हैं। घोड़े और शिबिकाओंकी संख्या एक-एक करोड़ है। ऋषीन्द्र, मुनीन्द्र, विद्वान्, ब्राह्मण, बन्दीजन और भिक्षुकोंके समूह भी निकट आ गये हैं। गोप और गोपियोंकी गणना करनेमें कौन समर्थ हो सकता है? आप स्वयं बाहर चलकर देखें।’

आँगनमें खड़े हुए दूतने जब ऐसी बात कही, तब उसे सुनकर व्रजराज नन्दजी स्वयं उन समागत अतिथियोंके पास आये। उन सबको साथ ले आकर उन्होंने आँगनमें बिठाया और तत्काल ही उनका पूजन किया। ऋषि आदिके समुदायको उन्होंने धरतीपर माथा टेककर प्रणाम किया और एकाग्रचित्त हो उन सबके लिये पाद्य आदि समर्पित किये। उस समय नन्दगोकुल विभिन्न प्रकारकी वस्तुओं तथा गोपबन्धुओंसे परिपूर्ण हो रहा था। वहाँ कोई किसीके शब्दको नहीं सुन सकता था। साक्षात् कुबेरने श्रीकृष्णकी प्रसन्नताके

लिये वहाँ तीन मुहूर्ततक सुवर्णकी वर्षा करके गोकुलको सोनेसे भर दिया। नन्दकी यह सम्पत्ति देखकर उनके सभी भाई-बन्धु लज्जासे नतमस्तक हो गये। उन्होंने अपने कौतूहलको छिपा लिया। नन्दजीने नित्यकर्म करके पवित्र हो दो धुले वस्त्र धारण किये। चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और केसरसे अपने ललाट आदि अङ्गोंमें तिलक किया। इसके बाद गर्गजी तथा मुनीश्वरोंकी आज्ञा ले व्रजेश्वर नन्द दोनों पैर धोकर सोनेके मनोहर पीढ़ेपर बैठे। उन्होंने श्रीविष्णुका स्मरण करके आचमन किया। फिर ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन कराकर वेदोक्त कर्मका सम्पादन करनेके अनन्तर बालकको भोजन कराया। आनन्दमग्न हुए नन्दजीने मुनिवर गर्गके कथनानुसार शुभ वेलामें बालकका मङ्गलमय नाम रखा—‘कृष्ण’। इस प्रकार जगदीश्वरको सघृत भोजन कराकर उनका नामकरण करनेके अनन्तर नन्दरायने बाजे बजवाये और मङ्गल-कृत्य करवाये। उन्होंने ब्राह्मणोंको प्रसन्नतापूर्वक नाना प्रकारके सुवर्ण, भाँति-भाँतिके धन, भक्ष्य पदार्थ और वस्त्र दिये। बन्दीजनों और भिक्षुकोंको इतनी अधिक मात्रामें उन्होंने सुवर्ण बाँटा कि सुवर्णके भारी भारसे आक्रान्त होनेके कारण वे सब-के-सब चल नहीं पाते थे। ब्राह्मणों, बन्धुजनों और विशेषतः भिक्षुकोंको भी उन्होंने पूर्णतया मनोहर मिष्ठान्नका भोजन कराया। उस समय नन्दगोकुलमें बड़े जोर-जोरसे निरन्तर यही शब्द सुनायी देता था कि ‘दो और दो।’ ‘खाओ-खाओ’। परिपूर्ण रत्न, वस्त्र, आभूषण, मूँगे, सुवर्ण, मणिसार तथा विश्वकर्माके बनाये हुए मनोहर सुवर्णपात्र वहाँ ब्राह्मणोंको बाँटे गये। व्रजराज नन्दने गर्गजीके पास जाकर विनयपूर्वक अपनी इच्छा प्रकट की और नम्रतापूर्वक उनके शिष्योंको तथा शेष द्विजोंको सुवर्णके अनेक भार पूर्ण मात्रामें प्रदान किये।

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! श्रीहरिको



गोदमें लेकर गर्गजी एकान्त स्थानमें गये और बड़ी भक्ति एवं प्रसन्नतासे उन परमेश्वरको प्रणाम करके उनका स्तवन करने लगे। उस समय उनके नेत्रोंसे आँसू बह रहे थे। शरीरमें रोमाञ्च हो आया था। मस्तक भक्तिभावसे झुक गया था और श्रीकृष्णचरणारविन्दोंमें दोनों हाथ जोड़कर वे इस प्रकार बोल रहे थे।

**गर्गजीने कहा—**हे श्रीकृष्ण! हे जगन्नाथ! हे भक्तभयभञ्जन! आप मुझपर प्रसन्न होइये। परमेश्वर! मुझे अपने चरणकमलोंकी दास्य-भक्ति दीजिये। भक्तोंको अभय देनेवाले गोविन्द! आपके पिताजीने मुझे बहुत धन दिया है; किंतु उस धनसे मेरा क्या प्रयोजन है? आप मुझे अपनी अविचल भक्ति प्रदान कीजिये। प्रभो! अणिमादि सिद्धियोंमें, योगसाधनोंमें, अनेक प्रकारकी मुक्तियोंमें, ज्ञानतत्त्वमें अथवा अमरत्वमें मेरी तनिक भी रुचि नहीं है। इन्द्रपद, मनुपद तथा चिरकालतक स्वर्गलोकरूपी फलके लिये भी मेरे मनमें कोई इच्छा नहीं है। मैं आपके चरणोंकी सेवा छोड़कर कुछ नहीं चाहता। सालोक्य, सार्ष्टि, सारूप्य, सामीप्य और एकत्व—ये पाँच प्रकारकी मुक्तियाँ सभीको अभीष्ट हैं। परंतु परमात्मन्! मैं आपके चरणोंकी सेवा छोड़कर इनमेंसे किसीको भी ग्रहण करना नहीं चाहता। मैं गोलोकमें अथवा पातालमें निवास करूँ, ऐसा भी मेरा मनोरथ नहीं है; परंतु मुझे आपके चरणारविन्दोंका निरन्तर चिन्तन होता रहे, यही मेरी अभिलाषा है। कितने ही जन्मोंके पुण्यके फलका उदय हुआ, जिससे भगवान् शंकरके मुखसे मुझे आपके मन्त्रका उपदेश प्राप्त हुआ। उस मन्त्रको पाकर मैं सर्वज्ञ और समदर्शी हो गया हूँ। सर्वत्र मेरी अबाध गति है। कृपासिन्धो! दीनबन्धो! मुझपर कृपा कीजिये। मुझे अभय देकर अपने चरणकमलोंमें रख लीजिये। फिर मृत्यु मेरा क्या करेगी? आपके चरणारविन्दोंकी सेवासे ही भगवान् शंकर सबके

ईश्वर, मृत्युञ्जय, जगत्का अन्त करनेवाले तथा योगियोंके गुरु हुए हैं। ब्रह्मन्! जिनके एक दिनमें चौदह इन्द्रोंका पतन होता है, वे जगत्-विधाता ब्रह्मा आपके चरणकमलोंकी सेवासे ही उस पदपर प्रतिष्ठित हुए हैं। आपके चरणोंकी सेवा करके ही धर्मदेव समस्त कर्मोंके साक्षी हुए हैं; सुदुर्जय कालको जीतकर सबके पालक और फलदाता हुए हैं। आपके चरणारविन्दोंकी सेवाके प्रभावसे ही सहस्र मुखोंवाले शेषनाग सम्पूर्ण विश्वको सरसोंके एक दानेकी भाँति सिरपर धारण करते हैं। ठीक उसी तरह, जैसे भगवान् शिव कण्ठमें विष धारण करते हैं। जो सम्पूर्ण सम्पदाओंकी सृष्टि करनेवाली तथा देवियोंमें परात्परा हैं, वे लक्ष्मीदेवी अपने केश-कलापोंसे आपके चरणोंका मार्जन करती हैं। जो सबकी बीजरूपा हैं, वे शक्तिरूपिणी प्रकृति आपके चरणकमलोंका चिन्तन करते-करते उन्हींमें तत्पर हो जाती हैं। सबकी बुद्धिरूपिणी एवं सर्वरूपा पार्वतीने आपके चरणोंकी सेवासे ही महेश्वर शिवको प्राणवल्लभके रूपमें प्राप्त किया है। विद्याकी अधिष्ठात्री देवी जो ज्ञानमाता सरस्वती हैं, वे आपके चरणारविन्दोंकी आराधना करके ही सबकी पूजनीया हुई हैं। जो ब्रह्माजी तथा ब्राह्मणोंकी गति हैं, वे वेदजननी सावित्री आपकी चरणसेवासे ही तीनों लोकोंको पवित्र करती हैं। पृथ्वी आपके चरणकमलोंकी सेवाके प्रभावसे ही जगत्को धारण करनेमें समर्थ, रत्नगर्भा तथा सम्पूर्ण शस्योंको उत्पन्न करनेवाली हुई है। आपकी अंशभूता तथा आपके ही तुल्य तेजस्विनी राधा आपके वक्षःस्थलमें स्थान पाकर भी आपके चरणोंकी सेवा करती हैं; फिर दूसरेकी क्या बात है? ईश! जैसे शिव आदि देवता और लक्ष्मी आदि देवियाँ आपसे सनाथ हैं, उसी तरह मुझे भी सनाथ कीजिये; क्योंकि ईश्वरकी सबपर समान कृपा होती है। नाथ! मैं घरको नहीं जाऊँगा।

आपका दिया हुआ यह धन भी नहीं लूँगा। मुझ अनुरागी सेवकको अपने चरणकमलोंकी सेवामें रख लीजिये।

इस प्रकार स्तुति करके गर्गजी नेत्रोंसे आँसू बहाते हुए श्रीहरिके चरणोंमें गिर पड़े और जोर-जोरसे रोने लगे। उस समय भक्तिके उद्रेकसे उनके शरीरमें रोमाञ्च हो आया था। गर्गजीकी बात सुनकर भक्तवत्सल श्रीकृष्ण हँस पड़े और बोले—‘मुझमें तुम्हारी अविचल भक्ति हो।’

जो मनुष्य गर्गजीद्वारा किये गये इस स्तोत्रका तीनों संध्याओंके समय पाठ करता है, वह श्रीहरिकी सद्बुद्ध भक्ति, दास्यभाव और उनकी स्मृतिका सौभाग्य अवश्य प्राप्त कर लेता है। इतना ही नहीं, वह श्रीकृष्णभक्तोंकी सेवामें तत्पर हो जन्म, मृत्यु, जरा, रोग, शोक और मोह आदिके संकटसे पार हो जाता है। श्रीकृष्णके साथ रहकर सदा आनन्द भोगता है और श्रीहरिसे कभी उसका वियोग नहीं होता।

भगवान् नारायण कहते हैं—नारद! श्रीहरिकी इस प्रकार स्तुति करके गर्गमुनिने उन्हें नन्दजीको दे दिया और प्रशंसापूर्वक कहा—‘गोपराज! अब मैं घर जाता हूँ, आज्ञा दो। अहो! कैसी विचित्र बात है कि संसार मोहजालसे जकड़ा हुआ है। जैसे समुद्रमें फेन उठता और मिटता रहता है, उसी प्रकार इस भवसागरमें मनुष्योंको संयोग और वियोगका अनुभव होता रहता है।’

गर्गकी यह बात सुनकर नन्दजी उदास हो गये; क्योंकि साधु पुरुषोंके लिये सत्पुरुषोंका वियोग मरणसे भी अधिक कष्टदायक होता है। सम्पूर्ण शिष्योंसे घिरे हुए मुनिवर गर्ग जब जानेको उद्यत हुए, तब रोते हुए नन्द आदि सब गोप-गोपियोंने अत्यन्त प्रीतिपूर्वक विनीतभावसे उन्हें प्रणाम किया। उन सबको आशीर्वाद देकर मुनिश्रेष्ठ गर्ग सानन्द मथुराको पधारे। ऋषि-मुनि तथा प्रिय बन्धुवर्ग सभी धनसे सम्पन्न हो प्रसन्न-

मनसे अपने-अपने घरोंको गये। समस्त बन्दीजन भी पूर्णमनोरथ होकर अपने घरको लौट गये। उन सबको मीठे पदार्थ, वस्त्र, उत्तम श्रेणीके अन्न तथा सोनेके आभूषण प्राप्त हुए थे। आकण्ठ भोजन करके तृप्त हुए भिक्षुकगण बड़ी प्रसन्नताके साथ अपने घरको लौटे। वे सुवर्ण और वस्त्रोंके भारी भारसे थककर चलनेमें असमर्थ हो गये थे। कोई धीरे-धीरे चलते, कोई विश्रामके लिये धरतीपर सो जाते और कुछ लोग मार्गमें उठते-बैठते जाते थे। कोई वहाँ सानन्द हँसते हुए टिक जाते थे। कपर्दकों तथा अन्य वस्तुओंके जो बहुत-से शेष भाग बच गये थे, उन्हें कुछ लोग ले लेते थे। कुछ लोग खड़े हो दूसरोंको वे वस्तुएँ दिखाते थे। कुछ लोग नृत्य करते थे और कितने ही लोग वहाँ गीत गाते थे। कोई नाना प्रकारकी प्राचीन गाथाएँ कहते थे। राजा मरुत्त, श्वेत, सगर, मान्धाता, उत्तानपाद, नहुष और नल आदिकी जो कथाएँ हैं, उन्हें सुनाते थे। श्रीरामके अश्वमेधयज्ञकी तथा राजा रन्तिदेवके दान-कर्मकी भी गाथाएँ गाते थे। कोई ठहर-ठहरकर और कोई सो-सोकर यात्रा करते थे। इस प्रकार सब लोग प्रसन्नतापूर्वक अपने-अपने घरोंको गये। हर्षसे भरे हुए नन्द और यशोदा दोनों दम्पति बालकृष्णको गोदमें लेकर कुबेरभवनके समान रमणीय अपने भव्य भवनमें रहने लगे। इस प्रकार वे दोनों बालक शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी कलाकी भाँति बढ़ने लगे। अब वे गौओंकी पूँछ और दीवाल पकड़कर खड़े होने लगे। प्रतिदिन आधा शब्द या चौथाई शब्द बोल पाते थे। मुने! आँगनमें चलते हुए वे दोनों भाई माता-पिताका हर्ष बढ़ाने लगे। अब बालक श्रीहरि दो-एक पग चलनेमें समर्थ हो गये। घरमें और आँगनमें वे घुटनोंके बलसे चलने-फिरने लगे। संकर्षणकी अवस्था बालक श्रीकृष्णसे एक साल अधिक थी। वे दोनों भाई माता-पिताका आनन्दवर्धन करते हुए दिन-दिन बड़े होने लगे।

मायासे शिशुरूपधारी वे दोनों बालक गोकुलमें विचरते हुए अच्छी तरह चलनेमें समर्थ हो गये। अब वे स्फुट वाक्य बोल लेते थे।

मुने! गर्गजी मथुरामें वसुदेवजीके घर गये। उन्होंने पुरोहितजीको प्रणाम किया और अपने दोनों पुत्रोंका कुशल-समाचार पूछा। गर्गजीने उनका कुशल-मङ्गल सुनाया और नामकरण-संस्कारके महान् उत्सवकी चर्चा की। वह सब सुननेमात्रसे वसुदेवजी आनन्दके आँसुओंमें निमग्न हो गये। देवकीजी बड़े प्रेमसे बारंबार बच्चोंका समाचार पूछने लगीं। वे आनन्दके आँसू बहाती हुई बार-बार रोने लगती थीं। गर्गजी उन दोनों दम्पतिको आशीर्वाद दे सानन्द अपने घरको गये तथा वे दोनों पति-पत्नी अपने कुबेरभवनोपम

गृहमें निवास करने लगे। नारद! जिस कल्पमें यह कथा घटित हुई थी, उस समय तुम पचास कामिनियोंके पति गन्धर्वराज उपबर्हणके नामसे प्रसिद्ध थे। वे सब सुन्दरियाँ तुम्हें प्राणोंसे बढ़कर प्रिय मानती थीं और तुम शृङ्गारमें निपुण नवयुवक थे। तदनन्तर ब्रह्माजीके शापसे एक द्विजकी दासीके पुत्र हुए। उसके बाद वैष्णवोंकी जूठन खानेसे अब तुम ब्रह्माजीके पुत्र हुए हो। श्रीहरिकी सेवासे सर्वदर्शी और सर्वज्ञ हो गये हो तथा पूर्वजन्मकी बातोंको स्मरण करनेमें समर्थ हो। श्रीकृष्णका यह चरित्र—उनके नामकरण और अन्नप्राशन आदिका वृत्तान्त कहा गया। यह जन्म, मृत्यु और जराका नाश करनेवाला है। अब उनकी अन्य लीलाएँ बता रहा हूँ, सुनो। (अध्याय १३)

~~~~~

यशोदाके यमुनास्नानके लिये जानेपर श्रीकृष्णद्वारा दही-दूध-माखन आदिका भक्षण तथा बर्तनोंको फोड़ना, यशोदाका उन्हें पकड़कर वृक्षसे बाँधना, वृक्षका गिरना, गोप-गोपियों तथा नन्दजीका यशोदाको उपालम्भ देना, नल-कूबर और रम्भाको शापप्राप्त होने तथा उससे मुक्त होनेकी कथा

भगवान् नारायण कहते हैं—नारद! एक दिन नन्दरानी यशोदा स्नान करनेके लिये यमुनातटपर गयीं। इधर मधुसूदन श्रीकृष्ण दही-माखन आदिसे भरे-पूरे घरको देखकर बड़े प्रसन्न हुए। घरमें जो दही, दूध, घी, तक्र और मनोहर मक्खन रखा हुआ था, वह सब आप भोग लगा गये। छकड़ेपर जो मधु, मक्खन और स्वस्तिक (मिष्टान्नविशेष) लदा था, उसे भी खा-पीकर आप कपड़ोंसे मुँह पोंछनेकी तैयारी कर रहे थे। इतनेमें ही गोपी यशोदा नहाकर अपने घर लौट आयीं। उन्होंने बालकृष्णको देखा। घरमें दही, दूध आदिके जितने मटके थे, वे सब फूटे और खाली दिखायी दिये। मधु आदिके जो बर्तन थे, वे भी एकदम खाली हो गये थे। यह सब देखकर यशोदामैयाने बालकोंसे पूछा—‘अरे! यह तो बड़ा

अद्भुत कर्म है। बच्चो! तुम सच-सच बताओ, किसने यह अत्यन्त दारुण कर्म किया है?’ यशोदाकी बात सुनकर सब बालक एक साथ बोल उठे—‘मैया! हम सच कहते हैं, तुम्हारा लाला ही सब खा गया, हम लोगोंको तनिक भी नहीं दिया है।’ बालकोंका यह वचन सुनकर नन्दरानी कुपित हो उठीं और लाल-लाल आँखें किये बेंत लेकर दौड़ीं। इधर गोविन्द भाग निकले। मैया उन्हें पकड़ न सकीं। भला, जो शिव आदिके ध्यानमें भी नहीं आते, योगियोंके लिये भी जिन्हें पकड़ पाना अत्यन्त कठिन है; उन्हें यशोदाजी कैसे पकड़ पातीं? यशोदाजी पीछा करके थक गयीं। शरीर पसीनेसे लथपथ हो गया। वे मनमें ही क्रोध भरकर खड़ी हो गयीं। उनके कण्ठ, ओठ और तालु सूख गये थे।



माताको यों थकी हुई देख कृपालु पुरुषोत्तम जगदीश्वर श्रीकृष्ण मुस्कराते हुए उनके सामने खड़े हो गये। नन्दरानी उनका हाथ पकड़कर अपने घर ले आयीं। उन्होंने मधुसूदनको वस्त्रसे वृक्षमें बाँध दिया। श्रीकृष्णको बाँधकर यशोदा अपने घरमें चली गयीं तथा जगत्पति परमेश्वर श्रीहरि वृक्षकी जड़के पास खड़े रहे। नारद! श्रीकृष्णके स्पर्शमात्रसे वह पर्वताकार वृक्ष सहसा भयानक शब्द करके वहाँ गिर पड़ा। उस वृक्षसे सुन्दर वेषधारी एक दिव्य पुरुष प्रकट हुआ। वह रत्नमय अलंकारोंसे विभूषित, गौरवर्ण तथा किशोर-अवस्थाका था। सुवर्णमय शृङ्गारसे विभूषित जगदीश्वर श्रीकृष्णको प्रणाम करके वह दिव्य पुरुष मुस्कराता हुआ दिव्य रथपर आरूढ़ हुआ और अपने घरको चला गया। वृक्षको गिरते देख ब्रजेश्वरी यशोदा भयसे त्रस्त हो उठीं। उन्होंने रोते हुए बालक श्यामसुन्दरको उठाकर छातीसे लगा लिया। इतनेमें ही गोकुलके गोप और गोपियाँ उनके घरमें आ पहुँचीं। वे सब-की-सब यशोदाको फटकारने लगीं। उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक शिशुकी रक्षाके लिये शान्तिकर्म किया।

सब गोपियाँ यशोदासे कहने लगीं— नन्दरानी! अत्यन्त वृद्धावस्थामें तुम्हें यह पुत्र प्राप्त हुआ है। संसारमें जो भी धन, धान्य तथा रत्न है, वह सब पुत्रके लिये ही है। आज हमने सचमुच यह जान लिया कि तुम्हारे भीतर सुबुद्धि नहीं है। जो खाद्यपदार्थ पुत्रने नहीं खाया, वह सब इस भूतलपर निष्फल ही है। ओ निष्ठुरे! तुमने दही-दूधके लिये अपने लालाको वृक्षकी जड़में बाँध दिया और स्वयं घरके काम-काजमें लग गयीं। दैववश वृक्ष गिर पड़ा; किंतु हम गोपियोंके सौभाग्यसे वृक्षके गिरनेपर भी बालक जीवित बच गया। अरी मूढ़े! यदि बालक नष्ट हो जाता तो इन वस्तुओंका क्या प्रयोजन था?

श्रीनन्दजीने भी यशोदाको उलाहना दिया। ब्राह्मणों और बन्दीजनोंने बालकको शुभ आशीर्वाद दिये। सबने मिलकर ब्राह्मणोंसे श्रीहरिका नाम-कीर्तन करवाया।

नारदजीने पूछा— भगवन्! वह सुन्दर वेषधारी पुरुष कौन था, जो गोकुलमें वृक्ष होकर रहता था? किस कारणसे उसे वृक्ष होना पड़ा था?

भगवान् नारायण बोले— एक बार कुबेरपुत्र नलकूबर अप्सरा रम्भाके साथ नन्दनवनमें चला गया। वहाँ उसने भौँति-भौँतिसे विहार किये। इसी समय महर्षि देवल उधरसे निकले। उनकी दृष्टि नलकूबर और रम्भापर पड़ गयी। इधर मुनिको देखकर भी नलकूबर-रम्भाने उठकर उनका सम्मान नहीं किया। मुनिवर देवल उन दोनोंकी ऐसी दुर्वृत्ति देखकर कुपित हो गये और उन्हें शाप देते हुए बोले—'नलकूबर! तुम गोकुलमें जाकर वृक्षरूप धारण करो। फिर श्रीकृष्णका स्पर्श पानेपर अपने भवनमें लौट आओगे और रम्भा! तुम भी मनुष्ययोनिमें जन्म लेकर राजा जनमेजयकी सौभाग्यशालिनी पत्नी बनो। अश्वमेधयज्ञमें इन्द्रका स्पर्श पाकर तुम पुनः स्वर्गमें चली जाओगी।'

वह नलकूबर ही यह वृक्ष बना और रम्भाने भारतमें राजा सुचन्द्रकी कन्यारूपसे जन्म लेकर जनमेजयकी महारानी बननेका सौभाग्य प्राप्त किया। जनमेजयके अश्वमेधयज्ञमें इन्द्रने महारानीको स्पर्श कर लिया। इससे उसने योगावलम्बन करके देहको त्याग दिया और वह स्वर्गधामको चली गयी। महामुने! इस प्रकार मैंने अर्जुन-वृक्षके भङ्ग होने तथा नलकूबर एवं रम्भाके शापमुक्त होनेका सारा वृत्तान्त कह सुनाया। श्रीकृष्णका पुण्यदायक चरित्र जन्म, मृत्यु एवं जराका नाश करनेवाला है। उसका इस रूपमें वर्णन किया गया। अब उनकी दूसरी लीलाओंका वर्णन करता हूँ। (अध्याय १४)



नन्दका शिशु श्रीकृष्णको लेकर वनमें गो-चारणके लिये जाना, श्रीराधाका आगमन, नन्दसे उनकी वार्ता, शिशु कृष्णको लेकर राधाका एकान्त वनमें जाना, वहाँ रत्नमण्डपमें नवतरुण श्रीकृष्णका प्रादुर्भाव, श्रीराधा-कृष्णकी परस्पर प्रेमवार्ता, ब्रह्माजीका आगमन, उनके द्वारा श्रीकृष्ण और राधाकी स्तुति, वर-प्राप्ति तथा उनका विवाह कराना, नवदम्पतिका प्रेम-मिलन तथा आकाशवाणीके आश्वासन देनेपर शिशुरूपधारी श्रीकृष्णको लेकर राधाका यशोदाजीके पास पहुँचाना

भगवान् नारायण कहते हैं—नारद! एक दिन नन्दजी श्रीकृष्णको साथ लेकर वृन्दावनमें गये और वहाँ भाण्डीर उपवनमें गौओंको चराने लगे। उस भूभागमें स्वच्छ तथा स्वादिष्ट जलसे भरा हुआ एक सरोवर था। नन्दजीने गौओंको उसका जल पिलाया और स्वयं भी पीया। इसके बाद वे बालकको गोदमें लेकर एक वृक्षकी जड़के पास बैठ गये। मुने! इसी समय मायासे मानव-शरीर धारण करनेवाले श्रीकृष्णने अपनी मायाद्वारा अकस्मात् आकाशको मेघमालासे आच्छादित कर दिया। नन्दजीने देखा—आकाश बादलोंसे ढक गया है। वनका भीतरी भाग और भी श्यामल हो गया है। वर्षाके साथ जोर-जोरसे हवा चलने लगी है। बड़े जोरकी गड़गड़ाहट हो रही है। यज्ञकी दारुण गर्जना सुनायी देती है। मूसलधार पानी बरस रहा है और वृक्ष काँप रहे हैं। उनकी डालियाँ टूट-टूटकर गिर रही हैं। यह सब देखकर नन्दको बड़ा भय हुआ। वे सोचने लगे—‘मैं गौओं तथा बछड़ोंको छोड़कर अपने घरको कैसे जाऊँगा और यदि घरको नहीं जाऊँगा तो इस बालकका क्या होगा?’ नन्दजी इस प्रकार कह ही रहे थे कि श्रीहरि उस समय जलकी वर्षाके भयसे रोने लगे। उन्होंने पिताके कण्ठको जोरसे पकड़ लिया।

इसी समय राधा श्रीकृष्णके समीप आयी। वे अपनी गतिसे राजहंस तथा खज्जनके गर्वका गज्जन कर रही थीं। उनकी आकृति बड़ी मनोहर

थी। उनका मुख शरत्कालकी पूर्णिमाके चन्द्रमाकी आभाको छीने लेता था। नेत्र शरत्कालके मध्याह्नमें खिले हुए कमलोंकी शोभाको तिरस्कृत कर रहे थे। दोनों आँखोंमें तारा, बरौनी तथा अञ्जनसे विचित्र शोभाका विस्तार हो रहा था। उनकी नासिका पक्षिराज गरुड़की चोंचकी मनोहर सुषमाको लज्जित कर रही थी। उस नासिकाके मध्यभागमें शोभनीय मोतीकी बुलाक उज्ज्वल आभाकी सृष्टि कर रही थी। केश-कलापोंकी वेणीमें मालतीकी माला लिपटी हुई थी। दोनों कानोंमें ग्रीष्म-ऋतुके मध्याह्नकालिक सूर्यकी प्रभाको तिरस्कृत करनेवाले कान्तिमान् कुण्डल झलमला रहे थे। दोनों ओठ पके बिम्बाफलकी शोभाको चुराये लेते थे। मुक्तापंक्तिकी प्रभाको फीकी करनेवाली दाँतोंकी पंक्ति उनके मुखकी उज्ज्वलताको बढ़ा रही थी। मन्द मुस्कान कुछ-कुछ खिले हुए कुन्द-कुसुमोंकी सुन्दर प्रभाका तिरस्कार कर रही थी। कस्तूरीकी बिन्दुसे युक्त सिन्दूरकी बेंदी भालदेशको विभूषित कर रही थी। शोभाशाली कपालपर मल्लिका-पुष्प धारण करके सती राधा बड़ी सुन्दरी दिखायी देती थीं। सुन्दर, मनोहर एवं गोलाकार कपोलपर रोमाञ्च हो आया था। उनका वक्षःस्थल मणिरत्नेन्द्रके सारतत्त्वसे निर्मित हारसे विभूषित था। उनका उदर गोलाकार, सुन्दर और अत्यन्त मनोहर था। विचित्र त्रिवलीकी शोभासे सम्पन्न दिखायी देता था। उनकी नाभि कुछ गहरी थी। कटिप्रदेश उत्तम रत्नोंके सारतत्त्वसे रचित मेखला-

ऐसा कह श्रीकृष्णको दोनों बाँहोंसे सानन्द गोदमें लेकर श्रीराधा अपनी रुचिके अनुसार वहाँसे दूर ले गयीं। उन्हें प्रेमातिरेकसे वक्षः-स्थलपर रखकर वे बार-बार उनका आलिङ्गन और चुम्बन करने लगीं। उस समय उनका सर्वाङ्ग पुलकित हो उठा और उन्होंने रासमण्डलका स्मरण किया। इसी बीचमें राधाने मायाद्वारा निर्मित उत्तम रत्नमय मण्डप देखा, जो सैकड़ों

यों कहकर नन्दने भयसे रोते हुए बालकको

श्रीकृष्ण बोले—राधे! गोलोकमें देवमण्डलीके भीतर जो वृत्तान्त घटित हुआ था, उसका तुम्हें स्मरण तो है न? प्रिये! पूर्वकालमें मैंने जो कुछ स्वीकार किया है, उसे आज पूर्ण करूँगा। सुमुखि राधे! तुम मेरे लिये प्राणोंसे भी बढ़कर प्रियतमा हो। जैसी तुम हो, वैसा मैं हूँ; निश्चय ही हम दोनोंमें भेद नहीं है। जैसे दूधमें धवलता, अग्निमें दाहिका शक्ति और पृथ्वीमें गन्ध होती है; इसी प्रकार तुममें मैं व्याप्त हूँ। जैसे कुम्हार मिट्टीके बिना घड़ा नहीं बना सकता तथा जैसे स्वर्णकार सुवर्णके बिना कदापि कुण्डल नहीं तैयार कर सकता; उसी प्रकार मैं तुम्हारे बिना सृष्टि करनेमें समर्थ नहीं हो सकता। तुम सृष्टिकी आधारभूता हो और मैं अच्युत बीजरूप हूँ। साध्वि! जैसे आभूषण शरीरकी शोभाका हेतु है, उसी प्रकार तुम मेरी शोभा हो। जब मैं तुमसे अलग रहता

हूँ, तब लोग मुझे कृष्ण (काला-कलूटा) कहते हैं और जब तुम साथ हो जाती हो तो वे ही लोग मुझे श्रीकृष्ण (शोभाशाली श्रीकृष्ण)-की संज्ञा देते हैं। तुम्हीं श्री हो, तुम्हीं सम्पत्ति हो और तुम्हीं आधारस्वरूपिणी हो। तुम सर्वशक्तिस्वरूपा हो और मैं अविनाशी सर्वरूप हूँ। जब मैं तेजःस्वरूप होता हूँ, तब तुम तेजोरूपिणी होती हो। जब मैं शरीररहित होता हूँ, तब तुम भी अशरीरिणी हो जाती हो। सुन्दरि! मैं तुम्हारे संयोगसे ही सदा सर्व-बीजस्वरूप होता हूँ। तुम शक्तिस्वरूपा तथा सम्पूर्ण स्त्रियोंका स्वरूप धारण करनेवाली हो। मेरा अङ्ग और अंश ही तुम्हारा स्वरूप है। तुम मूलप्रकृति ईश्वरी हो। वरानने! शक्ति, बुद्धि और ज्ञानमें तुम मेरे ही तुल्य हो। जो नराधम हम दोनोंमें भेदबुद्धि करता है, उसका कालसूत्र नामक नरकमें तबतक निवास होता है, जबतक जगत्में चन्द्रमा और सूर्य विद्यमान हैं। वह अपने पहले और बादकी सात-सात पीढ़ियोंको नरकमें गिरा देता है। उसका करोड़ों जन्मोंका पुण्य निश्चय ही नष्ट हो जाता है। जो नराधम अज्ञानवश हम दोनोंकी निन्दा करते हैं, वे जबतक चन्द्रमा और सूर्यकी सत्ता है, तबतक घोर नरकमें पकाये जाते हैं।

‘रा’ शब्दका उच्चारण करनेवाले मनुष्यको मैं भयभीत-सा होकर उत्तम भक्ति प्रदान करता हूँ और ‘धा’ शब्दका उच्चारण करनेवालेके पीछे-पीछे इस लोभसे डोलता फिरता हूँ कि पुनः ‘राधा’ शब्दका श्रवण हो जाय। जो जीवनपर्यन्त सोलह उपचार अर्पण करके मेरी सेवा करते हैं, उनपर मेरी जो प्रीति होती है, वही प्रीति ‘राधा’ शब्दके उच्चारणसे होती है। बल्कि उससे भी अधिक प्रीति ‘राधा’ नामके उच्चारणसे होती है। राधे! मुझे तुम उतनी प्रिया नहीं हो, जितना तुम्हारा नाम लेनेवाला प्रिय है। ‘राधा’ नामका उच्चारण करनेवाला पुरुष मुझे ‘राधा’ से भी

अधिक प्रिय है। ब्रह्मा, अनन्त, शिव, धर्म, नर-नारायण ऋषि, कपिल, गणेश और कार्तिकेय भी मेरे प्रिय हैं। लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा, सावित्री, प्रकृति—ये देवियाँ तथा देवता भी मुझे प्रिय हैं; तथापि वे राधा नामका उच्चारण करनेवाले प्राणियोंके समान प्रिय नहीं हैं। उपर्युक्त सब देवता मेरे लिये प्राणके समान हैं; परंतु सती राधे! तुम तो मेरे लिये प्राणोंसे भी बढ़कर हो। वे सब लोग भिन्न-भिन्न स्थानोंमें स्थित हैं; किंतु तुम तो मेरे वक्षःस्थलमें विराजमान हो। जो मेरी चतुर्भुज मूर्ति अपनी प्रियाको वक्षःस्थलमें धारण करती है, वही मैं श्रीकृष्णस्वरूप होकर सदा स्वयं तुम्हारा भार वहन करता हूँ।

यों कहकर श्रीकृष्ण उस मनोरम शय्यापर विराजमान हुए, तब राधिका भक्तिभावसे मस्तक झुकाकर अपने प्राणनाथसे बोलीं।

राधिकाने कहा—‘प्रभो! मुझे गोलोककी सारी बातें याद हैं। मैं सब जानती हूँ। मैं उन बातोंको भूल कैसे सकती हूँ? तुम जो मुझे सर्वरूपिणी बता रहे हो, वह सब तुम्हारे चरण-कमलोंकी कृपासे ही सम्भव है। ईश्वरको कुछ लोग अप्रिय होते हैं और कहीं कुछ लोग प्रिय भी होते हैं। जैसे जो मेरा स्मरण नहीं करते हैं, उसी तरह उनपर तुम्हारी कृपा भी नहीं होती है। तुम तृणको पर्वत और पर्वतको तृण बनानेमें समर्थ हो; तथापि योग्य-अयोग्यमें तथा सम्पत्ति और विपत्तिमें भी तुम्हारी समान कृपा होती है। मैं खड़ी हूँ और तुम सोये हो। इस समय बातचीतमें जो समय निकल गया, वह एक-एक क्षण मेरे लिये एक-एक युगके समान है। मैं उसकी गणना करनेमें असमर्थ हूँ। तुम मेरे वक्षःस्थल और मस्तकपर अपना चरण-कमल रख दो। तुम्हारे विरहकी आगसे मेरा हृदय शीघ्र ही दग्ध होना चाहता है। सामने तुम्हारे चरण-कमलपर जब मेरी दृष्टि पड़ी तो वह वहीं रम

गयी। फिर मैं क्लेश उठाकर भी उसे दूसरे अङ्गोंको देखनेके लिये वहाँसे अन्यत्र न ले जा सकी; तथापि धीरे-धीरे प्रत्येक अङ्गका दर्शन करके ही मैंने तुम्हारे शान्त मुखारविन्दपर दृष्टि डाली है। इस मुखारविन्दको देखकर अब मेरी दृष्टि अन्यत्र जानेमें असमर्थ है।

राधिकाका यह वचन सुनकर पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण हँसने लगे। फिर वे श्रुतियों और स्मृतियोंके मतानुसार तथ्य एवं हितकर वचन बोले।

श्रीकृष्णने कहा—भद्रे! मैंने पूर्वकालमें वहाँ गोलोकमें जो निश्चय किया था, उसका खण्डन नहीं होना चाहिये। प्रिये! तुम क्षणभर ठहरो। मैं तुम्हारा मङ्गल करूँगा। तुम्हारे मनोरथकी पूर्तिका समय स्वयं आ पहुँचा है। राधे! पहले मैंने जिसके लिये जो कुछ लिख दिया है और जिस समय उस मनोरथकी प्राप्ति निश्चय कर दिया है; उस पूर्व-निश्चयका खण्डन मैं स्वयं ही नहीं कर सकता। फिर विधाताकी क्या विसात है, जो उसे मिटा सके? मैं विधाताका भी विधाता हूँ। मैंने जिनके लिये जो कुछ विधान कर दिया है, उसका ब्रह्मा आदि देवता भी कदापि खण्डन नहीं कर सकते।

इसी बीचमें ब्रह्मा श्रीहरिके सामने आये। उनके हाथोंमें माला और कमण्डलु शोभा पा रहे थे। चारों मुखोंपर मन्द मुस्कान खेल रही थी। निकट जाकर उन्होंने श्रीकृष्णको नमस्कार किया और आगमके अनुसार उनकी स्तुति की। उस समय उनके नेत्रोंसे आँसू झर रहे थे। सम्पूर्ण अङ्गोंमें रोमाञ्च हो आया था और भक्तिभावसे उनका मस्तक झुका हुआ था। स्तुति और नमस्कार करके जगद्धाता ब्रह्मा श्रीहरिके और निकट गये। उन्होंने अपने प्रभुको भक्तिभावसे पुनः प्रणाम किया। फिर वे श्रीराधिकाके समीप गये और माताके चरण-कमलमें मस्तक रखकर उन्होंने भक्तिभावसे नमस्कार किया। शीघ्रतापूर्वक

माता राधिकाके चरणारविन्दोंको अपने जटाजालसे वेष्टित करके ब्रह्माजीने कमण्डलुके जलसे प्रसन्नतापूर्वक उनका प्रक्षालन किया। फिर दोनों हाथ जोड़कर वे आगमके अनुसार श्रीराधाकी स्तुति करने लगे।

ब्रह्माजी बोले—हे माता! भगवान् श्रीकृष्णकी कृपासे मुझे तुम्हारे चरणकमलोंके दर्शनका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। ये चरण सर्वत्र और विशेषतः भारतवर्षमें सभीके लिये परम दुर्लभ हैं। मैंने पूर्वकालमें पुष्करतीर्थमें सूर्यके प्रकाशमें बैठकर परमात्मा श्रीकृष्णकी प्रसन्नताके लिये साठ हजार वर्षोंतक तपस्या की। तब वरदाता श्रीहरि मुझे वर देनेके लिये स्वयं पधारे। उनके 'वर माँगो' ऐसा कहनेपर मैंने प्रसन्नतापूर्वक अभीष्ट वर माँगते हुए कहा—'हे गुणातीत परमेश्वर! जो सबके लिये परम दुर्लभ है, उन राधिकाके चरण-कमलका मुझे इसी समय शीघ्र दर्शन कराइये।' मेरी यह बात सुनकर ये श्रीहरि मुझ तपस्वीसे बोले—'वत्स! इस समय क्षमा करो। उपयुक्त समय आनेपर मैं तुम्हें श्रीराधाके चरणारविन्दोंके दर्शन कराऊँगा।' ईश्वरकी आज्ञा निष्फल नहीं होती; इसीलिये मुझे तुम्हारे चरणकमलोंके दर्शन प्राप्त हुए हैं। माता! तुम्हारे ये चरण गोलोकमें तथा इस समय भारतमें भी सबकी मनोवाञ्छाके विषय हैं। सब देवियाँ प्रकृतिकी अंशभूता हैं; अतः वे निश्चय ही जन्य और प्राकृतिक हैं। तुम श्रीकृष्णके आधे अङ्गसे प्रकट हुई हो; अतः सभी दृष्टियोंसे श्रीकृष्णके समान हो। तुम स्वयं श्रीकृष्ण हो और ये श्रीकृष्ण राधा हैं, अथवा तुम राधा हो और ये स्वयं श्रीकृष्ण हैं। इस बातका किसीने निरूपण किया हो, ऐसा मैंने वेदोंमें नहीं देखा है। अम्बिके! जैसे गोलोक ब्रह्माण्डसे बाहर और ऊपर है, उसी तरह वैकुण्ठ भी है। माँ! जैसे वैकुण्ठ और गोलोक अजन्य हैं; उसी प्रकार तुम भी अजन्या हो। जैसे समस्त ब्रह्माण्डमें सभी

जीवधारी श्रीकृष्णके ही अंशांश हैं; उसी प्रकार उन सबमें तुम्हीं शक्तिरूपिणी होकर विराजमान हो। समस्त पुरुष श्रीकृष्णके अंश हैं और सारी स्त्रियाँ तुम्हारी अंशभूता हैं। परमात्मा श्रीकृष्णकी तुम देहरूपा हो; अतः तुम्हीं इनकी आधारभूता हो। माँ! इनके प्राणोंसे तुम प्राणवती हो और तुम्हारे प्राणोंसे ये परमेश्वर श्रीहरि प्राणवान् हैं। अहो! क्या किसी शिल्पीने किसी हेतुसे इनका निर्माण किया है? कदापि नहीं। अम्बिके! ये श्रीकृष्ण नित्य हैं और तुम भी नित्या हो। तुम इनकी अंशस्वरूपा हो या ये ही तुम्हारे अंश हैं; इसका निरूपण किसने किया है? मैं जगत्स्रष्टा ब्रह्मा स्वयं वेदोंका प्राकट्य करनेवाला हूँ। उस वेदको गुरुके मुखसे पढ़कर लोग विद्वान् हो जाते हैं; परंतु वेद अथवा पण्डित तुम्हारे गुणों या स्तोत्रोंका शतांश भी वर्णन करनेमें असमर्थ हैं। फिर दूसरा कौन तुम्हारी स्तुति कर सकता है? स्तोत्रोंका जनक है ज्ञान और सदा ज्ञानकी जननी है बुद्धि। माँ राधे! उस बुद्धिकी भी जननी तुम हो। फिर कौन तुम्हारी स्तुति करनेमें समर्थ होगा? जिस वस्तुका सबको प्रत्यक्ष दर्शन हुआ है; उसका वर्णन करनेमें तो कोई भी विद्वान् समर्थ हो सकता है। परंतु जो वस्तु कभी देखने और सुननेमें भी नहीं आयी, उसका निर्वचन (निरूपण) कौन कर सकता है? मैं, महेश्वर और अनन्त कोई भी तुम्हारी स्तुति करनेकी क्षमता नहीं रखते। सरस्वती और वेद भी अपनेको असमर्थ पाते हैं। परमेश्वर! फिर कौन तुम्हारी स्तुति कर सकता है? मैंने आगमोंका अनुसरण करके तुम्हारे विषयमें जैसा कुछ कहा है, उसके लिये तुम मेरी निन्दा न करना। जो ईश्वरोंके भी ईश्वर परमात्मा हैं, उनकी योग्य और अयोग्यपर भी समान कृपा होती है। जो पालनके योग्य संतान है, उसका क्षण-क्षणमें गुण-दोष प्रकट होता रहता है; परंतु माता और पिता उसके सारे

दोषोंको स्नेहपूर्वक क्षमा करते हैं।

यों कहकर जगत्स्रष्टा ब्रह्मा उन दोनोंके सर्वबन्ध एवं सर्ववाञ्छित चरणकमलोंको प्रणाम करके उनके सामने खड़े हो गये। जो मनुष्य ब्रह्माजीके द्वारा किये गये इस स्तोत्रका तीनों संध्याओंके समय पाठ करता है, वह निश्चय ही राधा-माधवके चरणोंकी भक्ति एवं दास्य प्राप्त कर लेता है। अपने कर्मोंका मूलोच्छेद करके सुदुर्जय मृत्युको भी जीतकर समस्त लोकोंको लाँघता हुआ वह उत्तम गोलोकधाममें चला जाता है।

भगवान् नारायण कहते हैं—ब्रह्माजीकी स्तुति सुनकर श्रीराधाने उनसे कहा—‘विधातः! तुम्हारे मनमें जो अभीष्ट हो, वह वर माँग लो।’ राधिकाकी बात सुनकर जगत्स्रष्टा ब्रह्माने उनसे कहा—‘माँ! तुम दोनोंके चरणकमलोंकी भक्ति ही मेरा अभीष्ट वर है, उसे ही मुझे दे दो।’ विधाताके इतना कहते ही श्रीराधाने तत्काल ‘बहुत अच्छा’ कहकर उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। तब लोकनाथ ब्रह्माने पुनः भक्ति-भावसे श्रीराधाको प्रणाम किया। उस समय उन्होंने श्रीराधा और श्रीकृष्णके बीचमें अग्निकी स्थापना करके उसे प्रज्वलित किया। फिर श्रीहरिके स्मरणपूर्वक विधाताने विधिसे उस अग्निमें आहुति डाली। इसके बाद श्रीकृष्ण पुष्पशय्यासे उठकर अग्निके समीप बैठे। फिर ब्रह्माजीकी बतायी हुई विधिसे उन्होंने स्वयं हवन किया। तत्पश्चात् श्रीकृष्ण और राधाको प्रणाम करके ब्रह्माजीने स्वयं पिताके कर्तव्यका पालन करते हुए उन दोनोंसे कौतुक (वैवाहिक मङ्गल-कृत्य) कराये और सात बार अग्निदेवकी परिक्रमा करवायी। इसके बाद राधासे अग्निकी परिक्रमा करवाकर श्रीकृष्णको प्रणाम कराके राधाको उनके पास बैठाया। फिर श्रीकृष्णसे राधाका हाथ ग्रहण कराया और माधवसे सात वैदिक मन्त्र पढ़वाये। तत्पश्चात् वेदज्ञ विधाताने श्रीहरिके वक्षःस्थलपर

राधिकाका हाथ रखवाकर राधाके पृष्ठदेशमें श्रीकृष्णका हाथ रखवाया और राधासे तीन वैदिक मन्त्रोंका पाठ करवाया। तदनन्तर ब्रह्माने पारिजातके पुष्पोंकी आजानुलम्बिनी माला श्रीराधाके हाथसे श्रीकृष्णके गलेमें डलवायी। तत्पश्चात् कमलजन्मा विधाताने पुनः श्रीराधा और श्रीकृष्णको प्रणाम करके श्रीहरिके हाथसे श्रीराधाके कण्ठमें मनोहर माला डलवायी। फिर श्रीकृष्णको बैठाया और उनके वामपार्श्वमें मन्द-मन्द मुस्कराती हुई श्रीकृष्णहृदया राधाको भी बैठाया। इसके बाद उन दोनोंसे हाथ जुड़वाकर पाँच वैदिक मन्त्र पढ़वाये। तत्पश्चात् विधाताने पुनः श्रीकृष्णको प्रणाम करके, जैसे पिता अपनी पुत्रीका दान करता है, उसी प्रकार राधिकाको उनके हाथमें सौंप दिया और भक्ति-भावसे वे श्रीकृष्णके सामने खड़े हो गये।

इसी बीचमें आनन्दित और पुलकित हुए देवगण दुन्दुभि, आनक और मुरज आदि बाजे बजाने लगे। विवाहमण्डपके पास पारिजातके फूलोंकी वर्षा होने लगी। श्रेष्ठ गन्धर्वोंने गीत गाये और झुंड-की-झुंड अप्सराएँ नृत्य करने लगीं। ब्रह्माजीने श्रीहरिकी स्तुति की और मुस्कराते हुए उनसे कहा—‘आप दोनोंके चरणकमलोंमें मेरी भक्ति बड़े, यही मुझे दक्षिणा दीजिये।’ ब्रह्माजीकी बात सुनकर स्वयं श्रीहरिने उनसे कहा—ब्रह्मन्! मेरे चरणकमलोंमें तुम्हारी सुदृढ़ भक्ति हो। अब तुम अपने स्थानको जाओ। तुम्हारा कल्याण होगा, इसमें संशय नहीं है। वत्स! मैंने जो कार्य तुम्हारे जिम्मे लगाया है, उसका मेरी आज्ञाके अनुसार पालन करो।

मुने! श्रीकृष्णका यह आदेश सुनकर जगत्-विधाता ब्रह्मा श्रीराधा-कृष्णको प्रणाम करके प्रसन्नतापूर्वक अपने लोकको चले गये। ब्रह्माजीके चले जानेपर मुस्कराती हुई देवी राधिकाने बाँकी चितवनसे श्रीहरिके मुँहकी ओर देखा और लज्जासे अपना मुँह ढँक लिया। उस समय उनका

सर्वाङ्ग पुलकित हो उठा था। वे प्रेमवेदनाका अनुभव कर रही थीं। श्रीहरिको भक्तिभावसे प्रणाम करके श्रीराधा उनकी शय्यापर गयीं। वहाँ चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और केसरका अङ्गराग रखा हुआ था। श्रीराधाने श्रीकृष्णके ललाटमें तिलक करके उनके वक्षःस्थलमें चन्दन लगाया। फिर सुधा और मधुसे भरा हुआ मनोहर रत्नपात्र भक्तिपूर्वक श्रीहरिके हाथमें दिया। जगदीश्वर श्रीकृष्णने उस सुधाका पान किया। इसके बाद श्रीराधाने कर्पूर आदिसे सुवासित सुरम्य ताम्बूल श्रीकृष्णको दिया। श्रीहरिने उसे सादर भोग लगाया। फिर श्रीहरिके दिये हुए सुधारसका मुस्कराती हुई श्रीराधाने आस्वादन किया। साथ ही उनके दिये हुए ताम्बूलको भी श्रीहरिके सामने ही खाया। श्रीकृष्णने प्रसन्नतापूर्वक अपना चबाया हुआ पान श्रीराधाको दिया। राधाने बड़ी भक्तिसे उसे खाया और उनके मुखारविन्दमकरन्दका पान किया। इसके बाद मधुसूदनने भी श्रीराधासे उनका चबाया हुआ पान माँगा, परंतु राधाने नहीं दिया। वे हँसने लगीं और बोलीं—‘क्षमा कीजिये।’ माधवने राधाके हाथसे रत्नमय दर्पण ले लिया और राधिकाने भी माधवके हाथसे बलपूर्वक उनकी मुरली छीन ली। राधाने माधवका और माधवने राधाका मन मोह लिया। प्रेम-मिलनके पश्चात् राधाने प्रसन्नतापूर्वक परमात्मा श्रीकृष्णको उनकी मुरली लौटा दी। श्रीकृष्णने भी राधाको उनका दर्पण और उज्ज्वल क्रीड़ा-कमल दे दिया। उनके केशोंकी सुन्दर वेणी बाँध दी और भालदेशमें सिन्दूरका तिलक लगाया। विचित्र पत्र-रचनासे युक्त सुन्दर वेष सँवारा। उन्होंने जैसी वेष-रचना की, उसे विश्वकर्मा भी नहीं जानते हैं; फिर सखियोंकी तो बात ही क्या है?

जब राधा श्रीकृष्णकी वेष-रचना करनेको उद्यत हुई, तब वे किशोरावस्थाका रूप त्यागकर पुनः शिशुरूप हो गये। राधाने देखा, बालरूप

श्रीकृष्ण क्षुधासे पीड़ित हो रहे हैं। नन्दने जैसे भयभीत अच्युतको दिया था, उसी रूपमें वे इस समय दिखायी दिये। राधा व्यथित-हृदयसे लंबी साँस खींचकर इधर-उधर उस नव-तरुण श्रीकृष्णको देखने और ढूँढ़ने लगीं। वे शोकसे पीड़ित और विरहसे व्याकुल हो उठीं। उन्होंने कातरभावसे श्रीकृष्णके उद्देश्यसे यह दीनतापूर्ण बात कही— 'मायेश्वर! आप अपनी इस दासीके प्रति ऐसी माया क्यों करते हैं?' इतना कहकर राधा पृथ्वीपर गिर पड़ीं और रोने लगीं। उधर बालकृष्ण भी वहीं रो रहे थे। इसी समय आकाशवाणी हुई— 'राधे! तुम क्यों रोती हो? श्रीकृष्णके चरणकमलका चिन्तन करो। जबतक रासमण्डलकी आयोजना नहीं होती, तबतक प्रतिदिन रातमें तुम यहाँ आओगी। अपने घरमें अपनी छाया छोड़कर स्वयं यहाँ उपस्थित हो तुम श्रीहरिके साथ नित्य मनोवाञ्छित क्रीड़ा करोगी। अतः रोओ मत। शोक छोड़ो और अपने इन बालरूपधारी प्राणेश्वर मायापतिको गोदमें लेकर घरको जाओ।'

जब आकाशवाणीने सुन्दरी राधाको इस प्रकार आश्वासन दिया, तब उसकी बात सुनकर राधाने बालकको गोदमें उठा लिया और पूर्वोक्त पुण्योद्यान, वन तथा उत्तम रत्नमण्डपकी ओर पुनः दृष्टिपात किया। इसके बाद राधा वृन्दावनसे तुरंत नन्द-मन्दिरकी ओर चल दीं। नारद! वे देवी

मनके समान तीव्र गतिसे चलनेवाली थीं। अतः आधे निमेषमें वहाँ जा पहुँचीं। उनकी वाणी स्निग्ध एवं मधुर थी। आँखें लाल हो गयी थीं। वे यशोदाजीकी गोदमें उस बालकको देनेके लिये उद्यत हो इस प्रकार बोलीं— 'मैया! ब्रजमें आपके स्वामीने मुझे यह बालक घर पहुँचानेके लिये दिया था। भूखसे आतुर होकर रोते हुए इस स्थूलकाय शिशुको लेकर मैं रास्तेभर यातना भोग रही हूँ। मेरा भीगा हुआ वस्त्र इस बच्चेके शरीरमें सट गया है। आकाश बादलोंसे घिरा हुआ है। अत्यन्त दुर्दिन हो रहा है, मार्गमें फिसलन हो रही है। कीच-काच बढ़ गयी है। यशोदाजी! अब मैं इस बालकका बोझ ढोनेमें असमर्थ हो गयी हूँ। भद्रे! इसे गोदमें ले लो और स्तन देकर शान्त करो। मैंने बड़ी देरसे घर छोड़ रखा है; अतः जाती हूँ। सती यशोदे! तुम सुखी रहो।' ऐसा कह बालक देकर राधा अपने घरको चली गयीं। यशोदाने बालकको घरमें ले जाकर चूमा और स्तन पिलाया। राधा अपने घरमें रहकर बाह्यरूपसे गृहकर्ममें तत्पर दिखायी देती थीं; परंतु प्रतिदिन रातमें वहाँ वृन्दावनमें जाकर श्रीहरिके साथ क्रीड़ा करती थीं। वत्स नारद! इस प्रकार मैंने तुमसे शुभद, सुखद तथा मोक्षदायक पुण्यमय श्रीकृष्णचरित्र कहा। अब अन्य लीलाओंका वर्णन करता हूँ, सुनो। (अध्याय १५)

~~~~~

**वनमें श्रीकृष्णद्वारा बकासुर, प्रलम्बासुर और केशीका वध, उन सबका गोलोकधाममें गमन, उनके पूर्वजीवनका परिचय, पार्वतीके त्रैमासिक व्रतका सविधि वर्णन तथा नन्दकी आज्ञाके अनुसार समस्त व्रजवासियोंका वृन्दावनमें गमन**

भगवान् नारायण कहते हैं—मुने! एक समयकी बात है। माधव—श्रीकृष्ण अन्यान्य बालकों और हलधरके साथ खा-पीकर खेलनेके लिये श्रीवनमें गये। वहाँ मधुसूदनने नाना

प्रकारकी बालोचित क्रीड़ाएँ कीं। वह क्रीड़ा समाप्त करके गोपबालकोंके साथ उन्होंने गोधनको आगे बढ़ाया। वहाँ वनमें स्वादिष्ट जल पीकर वे महाबली श्रीकृष्ण उस स्थानसे गोधनसहित



मधुवनमें गये। उस वनमें एक बलवान् और भयंकर दैत्य था, जिसकी आकृति और मुख बड़े विकराल थे। उसका रंग सफेद था। वह पर्वताकार दैत्य बगुलेके आकारमें दिखायी देता था। उसने देखा, गोष्ठमें गौओंका समुदाय है और ग्वालबालोंके साथ केशव और बलराम भी विद्यमान हैं। फिर तो जैसे अगस्त्यने वातापिको उदरस्थ कर लिया था, उसी प्रकार वह दैत्य वहाँ सबको लीलापूर्वक लील गया। श्रीहरि बकासुरके ग्रास बन गये हैं, यह देख सब देवता भयसे काँप उठे। वे संत्रस्त हो हाहाकार करने लगे और हाथोंमें शस्त्र लेकर दौड़े। इन्द्रने दधीचिमुनिकी हड्डियोंका बना हुआ वज्र चलाया; किंतु उसके प्रहारसे बकासुर मर न सका। केवल उसकी एक पाँख जल गयी। चन्द्रमाने हिमपात किया; किंतु उससे उस दानवको केवल सर्दिके कष्टका अनुभव हुआ। सूर्यपुत्र यमने उसपर यमदण्ड मारा; उससे वह कुण्ठित हो गया—हिल-डुल न सका। वायुने वायव्यास्त्र चलाया, उससे वह एक स्थानसे उठकर दूसरे स्थानपर चला गया। वरुणने शिलाओंकी वर्षा की; उससे उसको बहुत पीड़ा हुई। अग्निदेवने आग्नेयास्त्र चलाकर उसकी सभी पाँखें जला दीं। कुबेरके अर्धचन्द्रसे उसके पैर कट गये। ईशानके शूलसे वह असुर मूर्च्छित हो गया। यह देख ऋषि और मुनि भयभीत हो श्रीकृष्णको आशीर्वाद देने लगे। इसी बीचमें श्रीकृष्ण ब्रह्मतेजसे प्रज्वलित हो उठे। उन परमेश्वरने बाहर और भीतरसे दैत्यके सारे अङ्गोंमें दाह उत्पन्न कर दिया। तब उन सबका वमन करके उस दानवने प्राण त्याग दिये।

इस प्रकार बकासुरका वध करके बलवान् श्रीकृष्ण ग्वालबालों और गौओंके साथ अत्यन्त मनोहर केलि-कदम्ब-काननमें जा पहुँचे। इसी समय वहाँ वृषरूपधारी प्रलम्ब नामक असुर आ पहुँचा, जो बड़ा बलवान्, महान् धूर्त तथा

पर्वतके समान विशालकाय था। उसने दोनों सींगोंसे श्रीहरिको उठाकर वहाँ घुमाना आरम्भ किया। यह देख सब ग्वालबाल इधर-उधर भागने और रोने लगे। परंतु बलवान् बलराम जोर-जोरसे हँसने लगे; क्योंकि वे जानते थे कि मेरा भाई साक्षात् परमेश्वर है। उन्होंने बालकोंको समझाया और कहा—‘भय किस बातका है?’ इधर मधुसूदनने स्वयं उसके दोनों



सींग पकड़ लिये और उसे आकाशमें घुमाकर भूतलपर दे मारा। दैत्यराज प्रलम्ब पृथ्वीपर गिरकर अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठा। यह देख सब गोपबालक हँसने, नाचने और खुशीसे गीत गाने लगे। प्रलम्बासुरका वध करके बलरामसहित परमेश्वर श्रीकृष्ण शीघ्र ही गोचारणके कार्यमें जुट गये। वे गौएँ चराते हुए भाण्डीरवनके पास जा पहुँचे।

उस समय माधवको जाते देख बलवान् दैत्यराज केशीने अपनी टापसे धरतीको खोदते हुए शीघ्र ही इन्हें घेर लिया। उसने श्रीहरिको मस्तकपर चढ़ाकर संतुष्ट हो आकाशमें सौ योजनतक उन्हें उछाल-उछालकर घुमाया और अन्तमें पृथ्वीपर गिर पड़ा। उस पापीने श्रीहरिके

पुरुष आये, जो श्रीहरिको प्रणाम करके उनकी स्तुति करते हुए उसी विमानसे उत्तम गोलोकको चले गये। वे तीनों पहलेके वैष्णव पुरुष थे, जो देह त्यागकर दानवी योनिको प्राप्त हुए थे। वे ही इस समय श्रीकृष्णके हाथों मारे जाकर उनके पार्षद हो गये।

नारदजीने पूछा—महाभाग! वे दिव्य वैष्णव पुरुष कौन थे, जो दैत्यरूप हो गये थे? इस बातको बताइये। यह कैसी परम अद्भुत बात सुननेको मिली है?

भगवान् नारायण बोले—ब्रह्मन्! सुनो। मैं इसका प्राचीन इतिहास बता रहा हूँ। मैंने पुष्करतीर्थमें सूर्यग्रहणके अवसरपर साक्षात् महेश्वरके मुखसे इस विषयको सुना था। श्रीहरिके गुण-कीर्तनके प्रसङ्गमें भगवान् शंकरने यह कथा कही थी। गन्धमादन पर्वतपर गन्धर्वराज गन्धवाह रहा करते थे। वे श्रीहरिकी सेवामें तत्पर रहनेवाले महान् तपस्वी और श्रेष्ठ संत थे। मुने! उनके चार पुत्र हुए, जो गन्धर्वोंमें श्रेष्ठ समझे जाते थे। वे सोते और जागते समय दिन-रात श्रीकृष्णके चरणकमलोंका ही चिन्तन करते रहते थे। वे सभी दुर्वासाके शिष्य थे और श्रीकृष्णकी आराधनामें लगे रहते थे। प्रतिदिन कमल चढ़ाकर श्रीहरिकी पूजा करनेके पश्चात् ही जल पीते थे। उन चारोंके नाम इस प्रकार हैं—वसुदेव, सुहोत्र, सुदर्शन और सुपार्श्व। वे चारों श्रेष्ठ वैष्णव थे और पुष्करमें तपस्या करते थे। चिरकालतक तपस्या करनेके पश्चात् उन्होंने मन्त्रको सिद्ध कर लिया था। उन चारोंमें जो ज्येष्ठ वसुदेव था, वह दुर्वासासे योग्य शिक्षा पाकर योगियोंमें श्रेष्ठ और सिद्ध हो गया। उसने विवाह नहीं किया। वह ब्रह्मतेजसे प्रज्वलित हो तत्काल देह त्यागकर श्रीकृष्णका पार्षद हो गया। एक दिन वे तीनों भाई चित्रसरोवरके तटपर गये। वे सूर्योदयकालमें श्रीहरिकी पूजाके लिये कमल लेना चाहते थे। मुने! कमलोंका संग्रह



दिव्यरूपधारी पार्षद विमानपर बैठे हुए वहाँ आ पहुँचे। उन सबके दो भुजाएँ थीं। वे पीताम्बरधारी, किरीट और कुण्डलसे अलंकृत तथा वनमालासे विभूषित थे। उन्होंने विनोदके लिये हाथमें मुरली ले रखी थी। उनके पैरोंमें मञ्जीरकी मधुर ध्वनि हो रही थी। उन पार्षदोंके सभी अङ्ग चन्दनसे चर्चित थे। वे गोपवेष धारण किये बड़े सुन्दर दिखायी देते थे। उनके प्रसन्नमुखपर मन्द हास्यकी छटा छा रही थी। वे श्रीकृष्णभक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये कातर जान पड़ते थे। रत्नोंके सार-तत्त्वसे निर्मित दीप्तिशाली दिव्य रथपर आरूढ़ हो वे भाण्डीरवनमें उस स्थानपर आये, जहाँ श्रीहरि विराजमान थे। उसी समय दिव्य वस्त्र पहने तथा रत्नमय अलंकारोंसे विभूषित हुए तीन

करके जाते हुए उन वैष्णवोंको जब भगवान् शंकरके सेवकोंने देखा, तब वे सब उन्हें बाँधकर अपने साथ ले गये। शंकरके सेवक शरीरसे बलिष्ठ थे; अतः उन दुर्बल वैष्णवोंको पकड़कर उन्हें शंकरजीके पास ले गये। भगवान् शंकरको देखकर उन सब वैष्णवोंने भूतलपर माथा टेक उन्हें प्रणाम किया। शिवजी उन्हें उत्तम आशीर्वाद दे शीघ्र ही उनसे वार्तालापके लिये उद्यत हुए। उस समय उनके प्रसन्नमुखपर मुस्कराहट खेल रही थी और वे उन भक्तजनोंपर अनुग्रह करनेके लिये कातर हो चुके थे।

**भगवान् शिवने पूछा**—पार्वतीके सरोवरमें प्रवेश करके कमल लेनेवाले तुमलोग कौन हो? पार्वतीके व्रतकी पूर्तिके लिये एक लाख यक्ष उस सरोवरकी रक्षा करते हैं। पार्वती पतिविषयक सौभाग्यकी वृद्धिके लिये जब त्रैमासिक व्रत आरम्भ करती हैं, तब वे लगातार तीन महीनेतक श्रीहरिको भक्तिभावसे प्रतिदिन एक सहस्र कमल चढ़ाती हैं।

भगवान् शिवका यह वचन सुनकर वे तीनों वैष्णव भयभीत हो भक्तिसे मस्तक झुका हाथ जोड़कर बोले।

**गन्धर्वोंने कहा**—प्रभो! हमलोग गन्धर्वराज गन्धवाहके पुत्र गन्धर्वोंमें श्रेष्ठ हैं। महेश्वर! हम लोग प्रतिदिन श्रीहरिको कमल चढ़ाकर ही जल पीते हैं। हे नाथ! हम यह नहीं जानते थे कि पार्वतीके द्वारा इस सरोवरकी रक्षा की जाती है। आप यह सारे कमल ले लीजिये और अपने व्रतको सफल बनाइये। महादेव! हम आज कमल नहीं चढ़ायेँगे और जल भी नहीं पीयेँगे। हमने आपको ही वे कमल अर्पित कर दिये। जिनके चरण-कमलका प्रतिदिन चिन्तन करके हम कमलसे पूजा करते हैं, आज साक्षात् उन्हींको कमल अर्पण करके हम सब-के-सब पवित्र हो गये। प्रभो! ब्रह्म एक ही है, दूसरा नहीं है।

उनके कहाँ देह और कहाँ रूप? भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये ही भगवान् शरीर धारण करते हैं। रूप-भेद मायासे ही प्रतीत होता है। प्रभो! आप ये कमल ले लीजिये; क्योंकि आप ही हमारे प्रभु हैं। अच्युत! हमारा हृदय जिसके ध्यानसे परिपूर्ण है; आप अपने उसी रूपका हमें दर्शन कराइये। जिसकी दो भुजाएँ हैं; कमनीय किशोर अवस्था है; श्यामसुन्दर रूप है; हाथमें विनोदकी साधनभूता मुरली है; जो पीताम्बरधारी है; जिसके एक मुख और दो नेत्र हैं, वे चन्दन और अगुरुसे चर्चित हैं; जिसके प्रसन्नमुखपर मन्द मुस्कानकी प्रभा फैल रही है; जो रत्नमय अलंकारोंसे विभूषित है। जिसका वक्षःस्थल मणिराज कौस्तुभकी कान्तिसे अत्यन्त उज्ज्वल दिखायी देता है; जिसकी चूड़ामें मोरका पंख लगा है; जो मालतीकी मालासे विभूषित है; पारिजातके फूलोंके हारोंसे अलंकृत है; करोड़ों कन्दर्पोंके लावण्यका मनोहर लीलाधाम है; समूह-की-समूह गोपियाँ मन्द मुस्कान और बाँकी चितवनसे जिसकी ओर देखा करती हैं; जो नूतन यौवनसे सम्पन्न तथा राधाके वक्षःस्थलपर विराजमान है; ब्रह्मा आदि जिसकी स्तुति करते हैं; जो सबके लिये वन्दनीय, चिन्तनीय और वाञ्छनीय है और जो स्वात्माराम, पूर्णकाम तथा भक्तोंपर अनुग्रहके लिये कातर रहनेवाला है;—आपके उसी रूपका हम दर्शन करना चाहते हैं। ऐसा कहकर वे श्रेष्ठ गन्धर्व भगवान् शंकरके सामने खड़े हो गये।

श्रीकृष्णके रूपका वर्णन सुनकर भगवान् शंकरके श्रीअङ्गोंमें रोमाञ्च हो आया। उनके नेत्रोंमें आँसू भर आये। वे गन्धर्वोंकी उक्त बातें सुनकर उनसे इस प्रकार बोले—‘मैंने यह जान लिया था कि तुम लोग श्रेष्ठ वैष्णव हो और अपने चरणकमलोंकी धूलसे पृथ्वीको पवित्र करनेके लिये भ्रमण कर रहे हो। मैं श्रीकृष्णभक्तके दर्शनकी सदा ही इच्छा करता रहता हूँ; क्योंकि साधु-संत तीनों लोकोंमें

दुर्लभ हैं। तुम लोग मुझे पार्वती और देवताओंसे भी बढ़कर सदा प्रिय हो। मुझे वैष्णवजन अपने तथा अपने भक्तोंसे भी अधिक प्रिय हैं। परंतु मैंने पूर्वकालमें जो प्रतिज्ञा कर रखी है, वह भी व्यर्थ नहीं होनी चाहिये। महाभाग वैष्णवो! सुनो। मैंने कह रखा है कि पार्वतीके व्रतके समय जो लोग किसी अन्य व्रतके निमित्त इस सरोवरसे कमल ले जायेंगे वे शीघ्र ही आसुरी योनिको प्राप्त होंगे, इसमें संशय नहीं है। श्रीकृष्णके भक्तोंका कहीं भी अशुभ नहीं होता है। तुम लोग पहले दानवी योनिमें पड़कर फिर निश्चय ही गोलोकमें पधारोगे। तुम्हारे मनमें श्रीकृष्णके रूपका प्रत्यक्ष दर्शन करनेके लिये उत्कण्ठा है। अतः बच्चो! तुम्हें भारतवर्षके वृन्दावनमें उस रूपका अवश्य दर्शन होगा। श्रीकृष्णको देखकर उन्हींके हाथसे मृत्युको प्राप्त हो तुम वैष्णवशिरोमणि बन जाओगे और दिव्य विमानपर आरूढ़ हो हरिधामको पधारोगे। तुम लोग अभी यहाँ उस वाञ्छनीय रूपको देखनेके लिये उत्सुक हो। अतः वह सब देखो।

ऐसा कहकर भगवान् शिवने उन्हें उस रूपके दर्शन कराये। उस रूपके दर्शन करके उन वैष्णवोंके नेत्रोंमें आँसू भर आये। वे सर्वरूपी श्रीहरिको प्रणाम करके दानवी योनिमें चले गये। इसलिये वे दानवेश्वर हुए। वसुदेव तो पहले ही मुक्त हो चुका था। सुहोत्र बकासुर, सुदर्शन प्रलम्ब और स्वयं सुपार्श्व केशी हुआ था। भगवान् शंकरके वरदानसे श्रीहरिके परम उत्तम रूपके दर्शन करके उन्हींके हाथसे मृत्युको प्राप्त हो वे उनके परम धाममें चले गये। विप्रवर! श्रीहरिका यह अद्भुत चरित्र कहा गया। बक, केशी और प्रलम्बके उद्धारका यह प्रसङ्ग वाचकों और श्रोताओंको मोक्ष प्रदान करनेवाला है।

**नारदजीने पूछा—**महाभाग! आपके कृपा-प्रसादसे यह सारी अद्भुत बात मैंने सुनी। अब

मैं यह सुनना चाहता हूँ कि पार्वतीने कौन-सा व्रत किया था? उस व्रतके आराध्यदेव कौन हैं? उसका फल क्या है और उसमें पालन करनेयोग्य नियम क्या है? भगवन्! उस व्रतके लिये उपयोगी द्रव्य कौन-कौन-से हैं? कितने समयतक वह व्रत किया जाता है और उसकी प्रतिष्ठामें क्या-क्या करना आवश्यक होता है? प्रभो! भलीभाँति विचारकर बताइये। इसे सुननेके लिये मेरे मनमें बड़ा कौतूहल है।

**श्रीनारायण बोले—**मुने! यह 'त्रैमासिक' नामक व्रत है, जो नारीके पतिविषयक सौभाग्यको बढ़ानेवाला है। इस व्रतके आराध्य देवता हैं—राधिकासहित भगवान् श्रीकृष्ण। उत्तरायणके विषुव<sup>१</sup> योगमें इसका आरम्भ होता है और दक्षिणायन आरम्भ होनेतक इसकी समाप्ति हो जाती है। वैशाखकी संक्रान्तिसे एक दिन पहले संयमपूर्वक रहकर निश्चय ही हविष्यका सेवन करे। फिर वैशाखकी संक्रान्तिके दिन स्नान करके गङ्गातटपर व्रतका संकल्प ले। तदनन्तर व्रती पुरुष कलशपर, मणिमें, शालग्राम-शिलामें अथवा जलमें राधासहित श्रीकृष्णका पूजन करे। पहले पाँच देवताओंकी पूजा करके भक्तिभावसे राधावल्लभ श्रीकृष्णका ध्यान करे। उनके सामवेदोक्त ध्यानका वर्णन करता हूँ, सुनो। भगवान् श्रीकृष्णकी अङ्गकान्ति सजल जलधरके समान श्याम है। वे रेशमी पीताम्बर धारण करते हैं। उनका मुख शरत्कालकी पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान मनोहर है। उसपर मन्द हासकी प्रभा फैल रही है। नेत्र शरद् ऋतुके प्रफुल्ल कमलोंकी शोभाको तिरस्कृत कर रहे हैं। उनमें सुन्दर अञ्जन लगा हुआ है। वे गोपियोंके मनको बारंबार मोहते रहते हैं। राधा उनकी ओर देख रही हैं। वे राधाके वक्षःस्थलमें विराजमान हैं। ब्रह्मा, अनन्त, शिव और धर्म आदि देवता उनकी स्तुति करते हैं।

१-ज्योतिषके अनुसार वह समय जब कि सूर्य विषुव रेखापर पहुँचता है और दिन-रात दोनों बराबर होते हैं।



तीन मासतक इस नियमका पालन करके  
उसके बाद व्रतकी प्रतिष्ठा करे। नारद ! प्रतिष्ठाके

(१६। ८५—९३)



दिन जो विधान आवश्यक है, उसे सुनो। विप्रवर! नब्बे हजार अक्षत कमलकी आहुति दे और यत्नपूर्वक नौ हजार ब्राह्मणोंको उत्तम, स्वादिष्ट एवं मीठे अन्न भोजन करावे। नौ हजार सात सौ बीस फल तथा नाना प्रकारके मनोहर द्रव्यका नैवेद्य अर्पण करे। इसके बाद संस्कारयुक्त अग्निकी स्थापना करके विद्वान् पुरुष होम करे। घृतयुक्त तिलकी नब्बे हजार आहुतियाँ देकर ब्राह्मणोंको भक्तिभावसे वस्त्र, भोजन, यज्ञोपवीत और फलसहित अन्न और तिलके लड्डू दे। उन लड्डूओंको गन्ध-पुष्पसे अर्चित करके देना चाहिये। साथ ही शीतल जलसे भरे हुए नब्बे कलशोंका भी दान करना चाहिये। इस प्रकार व्रत करके ब्राह्मणको दक्षिणा देनी चाहिये। दक्षिणाका परिमाण वही है, जो वेदोंमें बताया गया है। एक हजार बैल हों और उनके सोंगोंमें सोना मढ़ा गया हो। ब्रह्मन्! इस प्रकार 'त्रैमासिक' व्रत बताया गया। इस व्रतका अनुष्ठान कर लिया जाय तो यह विशिष्ट संतति देनेवाला और पतिसौभाग्यकी वृद्धि करनेवाला होता है। इस व्रतके प्रभावसे सौ जन्मोंतक नारीका अखण्ड सौभाग्य बना रहता है और निश्चय ही वह सौ जन्मोंतक सत्पुत्रकी जननी होती है। उसका कभी पति और पुत्रसे वियोग नहीं होता। पुत्र दासकी भाँति उसकी आज्ञाका पालक होता है तथा पति भी उसकी बातको माननेवाला होता है। वह सती नारी प्रतिक्षण श्रीराधा-कृष्णकी भक्तिसे सम्पन्न होती है। व्रतके प्रभावसे उसको ज्ञान तथा श्रीहरिकी स्मृति प्राप्त होती है। इस सामवेदोक्त व्रतका पूर्वकालमें हम दोनोंने भी पालन किया था। ब्रह्मन्! दूसरी स्त्रियोंद्वारा उस व्रतका अनुष्ठान होता देख पार्वतीदेवीने प्रसन्नतापूर्वक दोनों हाथ जोड़ भक्तिभावसे सिर झुकाकर भगवान् शंकरसे कहा।

**पार्वती बोलीं—**जगन्नाथ! आज्ञा कीजिये। मैं उत्तम व्रतका पालन करूँगी। हम दोनोंके

इष्टदेव श्रीहरिके व्रतोंमें यह श्रेष्ठ व्रत है। नाथ! श्रीहरिकी आराधना समस्त मङ्गलोंकी कारणरूपा है। यज्ञ, दान, वेदाध्ययन, तीर्थसेवन और पृथ्वीकी परिक्रमा—ये सब श्रीहरिकी आराधनाकी सोलहवीं कलाके भी बराबर नहीं हैं। जिसके बाहर और भीतर प्रतिक्षण श्रीहरिकी स्मृति बनी रहती है, उस जीवन्मुक्त पुरुषके दर्शनसे ही मुक्ति प्राप्त हो जाती है। उसके चरणकमलोंकी धूल पड़नेसे वसुधा उसी क्षण शुद्ध हो जाती है तथा उसके दर्शनमात्रसे तीनों लोक पवित्र हो जाते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, धर्म, शेषनाग, आप महेश्वर और गणेश—ये सब लोग जिनके चरणकमलोंका चिन्तन करते-करते उन्हींके समान महातेजस्वी हो गये हैं। जो जिसका सदा ध्यान करता है, वह निश्चय ही उसे प्राप्त कर लेता है। इतना ही नहीं—ध्याता पुरुष गुण, तेज, बुद्धि और ज्ञानकी दृष्टिसे अपने ध्येयके समान ही हो जाता है। श्रीकृष्णके चिन्तन, तप, ध्यान और सेवासे मैंने आप-जैसा स्वामी और पुत्र भी प्राप्त किया है। मुझे अनायास ही सब कुछ मिल गया। मेरा मनोरथ पूर्ण हो गया। मुझे आप-जैसे स्वामी मिले। कार्तिकेय और गणेश-जैसे पुत्र प्राप्त हुए तथा श्रीकृष्णके अंशस्वरूप हिमवान्-जैसे पिता मिले। प्रभो! मेरे लिये कौन-सी वस्तु दुर्लभ है?

पार्वतीकी यह बात सुनकर भगवान् शंकर बहुत प्रसन्न हुए। उनका शरीर पुलकित हो उठा और वे हँसकर मधुर वाणीमें बोले।

**श्रीमहादेवजीने कहा—**ईश्वर! तुम महालक्ष्मीस्वरूपा हो। तुम्हारे लिये क्या असाध्य है? तुम सर्वसम्पत्स्वरूपा और अनन्तशक्तिरूपिणी हो। देवि! तुम जिसके घरमें हो, वह सम्पूर्ण ऐश्वर्यका भाजन है। शुभप्रदे! मैं, ब्रह्मा और विष्णु तुममें भक्ति रखकर तुम्हारे कृपाप्रसादसे ही संसारकी सृष्टि, पालन और संहारमें समर्थ हुए हैं। हिमालय कौन है? मेरी क्या बिसात है

और कार्तिकेय तथा गणेश क्या हैं ? तुम्हारे बिना हम सब लोग असमर्थ हैं और तुम्हारा सहयोग पाकर हम सभी सब कुछ करनेमें समर्थ हैं। जो पतिव्रताके योग्य है और जो प्राचीनकालसे श्रुतिमें सुनी गयी है, वह आज्ञा परमेश्वरकी आज्ञा है। पतिव्रते ! उस ईश्वरीय आज्ञाको स्वीकार करके तुम व्रतका पालन करो। अबतक जिन स्त्रियोंने इस व्रतका पालन किया है, उन सबकी अपेक्षा विलक्षण ढंगसे तुम इस त्रैमासिक व्रतका अनुष्ठान करो। इस व्रतमें भगवान् सनत्कुमार तुम्हारे पुरोहित हों। सुन्दरि ! इसमें जितने कमलों, ब्राह्मणों और द्रव्योंकी आवश्यकता हो, उन सबको देनेके लिये मैं उद्यत हूँ। तुम कुबेरको द्रव्यकोशका संरक्षक नियत करो। इस व्रतमें दानाध्यक्ष मैं रहूँगा और स्वयं भगवती लक्ष्मी धन देनेवाली होंगी। अग्निदेव वेदका पाठ करेंगे, वरुण-देवता जल देंगे, यक्षलोग वस्तुओंको ढोकर लानेका काम करेंगे और स्कन्द उनके अध्यक्ष रहेंगे। इस व्रतमें स्थानको झाड़-बुहारकर शुद्ध करनेका काम स्वयं वायुदेव करेंगे। इन्द्र रसोई परोसेंगे। चन्द्रमा व्रतके अधिष्ठापक होंगे। प्रिये ! सूर्यदेव दानका निर्वचन करेंगे; योग्यायोग्यकी यथोचित व्याख्या करेंगे। सुन्दरि ! व्रतके लिये जो उपयोगी और नियमित द्रव्य हो, उसे देकर उससे भी अधिक फल-फूल तुम श्रीहरिकी सेवामें समर्पित करो। व्रतमें जितने ब्राह्मणोंको भोजन करानेका नियम है, उतनोंको भोजन कराकर तुम उससे भी अधिक असंख्य ब्राह्मणोंको भक्तिभावसे भोजनके लिये निमन्त्रित करो। समाप्तिके दिन सुवर्ण, रत्न, मोती और मूँगा आदि व्रतोक्त दक्षिणा देकर सारा धन ब्राह्मणोंको बाँट दो।

ऐसा कहकर भगवान् शंकरने पार्वतीसे उस व्रतका अनुष्ठान करवाया। पार्वतीने सब स्त्रियोंकी अपेक्षा विलक्षण रूपसे उस व्रतका सम्पादन

किया। नारद ! इस प्रकार पार्वतीजीने जो व्रत किया था, वह सब मैंने कह सुनाया। पार्वतीके व्रतमें ब्राह्मणलोग रत्न ढोकर ले जानेमें असमर्थ हो गये। नारद ! यह सारा इतिहास तो तुमने सुन लिया, अब जिसका प्रकरण चल रहा है, वह श्रीकृष्णका बालचरित्र सुनो।

यह श्रीकृष्णकी बाललीला पद-पदमें नयी-नयी प्रतीत होगी। पूर्वोक्त दानवेन्द्रोंका वध करके श्रीकृष्ण ग्वालबालोंके साथ गोकुलमें अपने घरको गये, जो कुबेरभवनके समान समृद्धिशाली था। वहाँ बालकोंने प्रसन्नतापूर्वक सब लोगोंसे वनमें घटित घटनाओंकी बातें बतायीं। यह सुनकर सब लोग चकित रह गये, किंतु नन्दजीको बड़ा भय हुआ। उन्होंने वृद्ध गोपों तथा बड़ी-बूढ़ी गोपियोंको घरपर बुलवाया और उन सबके साथ समयोचित कर्तव्यका विचार करके उक्त संकटसे बचनेके लिये युक्ति ढूँढ़ निकाली। युक्ति निश्चित करके गोपराज उस स्थानका त्याग कर देनेको उद्यत हो गये। मुने ! उन्होंने उसी क्षण सबको वृन्दावनमें चलनेकी आज्ञा दी। नन्दजीकी आज्ञा सुनकर सब लोग वहाँ जानेको उद्यत हो गये। गोप, गोपियाँ, बालक, बालिकाएँ—सब इस नयी यात्राके लिये तैयार हो गये। समस्त ग्वाल-बाल श्रीकृष्ण और हलधरके साथ प्रसन्नतापूर्वक चल दिये। अनेक प्रकारकी वेशभूषावाले वे बालक गीत गाते हुए जा रहे थे। कोई वंशीकी तान छेड़ते थे तो कोई साँग बजाते थे। किन्हींके हाथोंमें करताल थे। कुछ लोगोंने अपने हाथोंमें वीणा ले रखी थी। किन्हींके हाथोंमें शरयन्त्र थे तो किन्हींके सिंगे। कुछ गोपबालकोंने अपने कानोंमें नये पल्लव पहन रखे थे। कितनोंने अधखिले कमल और दूसरे-दूसरे फूल धारण कर रखे थे। किन्हींके हाथोंमें फूलोंके नये-नये गजरे थे। कुछ लोगोंने आजानुलम्बिनी वनमाला गलेमें डाल रखी थी। कुछ बालकोंने पल्लवों तथा फूलोंसे अपनी

चोटियाँ सजा रखी थीं। विप्रवर! सब ग्वाल-बाल, तरुण अवस्थावाली गोपियोंके यूथ और बड़ी-बूढ़ी गोपियोंकी अपार संख्या थी।

मुने! श्रीराधाकी जो सुशीला आदि सहेली गोपियाँ थीं, वे नाना प्रकारके अलंकारोंसे विभूषित हो बड़ी भव्य दिखायी देती थीं। दिव्य वस्त्र धारण कर हर्षसे मुस्कराती हुई वे सब-की-सब वृन्दावनकी ओर चलीं। कोई शिबिकापर सवार थीं तो कोई रथपर। राधिकादेवी रत्नमय अलंकारोंसे विभूषित हो सुवर्णमय उपकरणोंसे युक्त रथपर बैठकर उन सब सहेलियोंके साथ यात्रा कर रही थीं। यशोदा और रोहिणीजी भी रत्नमय अलंकारोंसे अलंकृत हो सुवर्णमय उपकरणोंसे सुसज्जित रथपर चढ़कर जा रही थीं। नन्द, सुनन्द, श्रीदामा, गिरिभानु, विभाकर, वीरभानु और चन्द्रभानु—ये प्रमुख गोपगण हाथीपर बैठकर सानन्द यात्रा कर रहे थे। श्रीकृष्ण और बलदेव दोनों भाई रत्ननिर्मित आभूषणोंसे विभूषित हो सुवर्णमय रथपर बैठकर बड़े हर्षके साथ वृन्दावनकी ओर जा रहे थे। कोटि-कोटि



बूढ़े और जवान गोप उस यात्रामें सम्मिलित थे। कोई घोड़ेपर सवार थे, कोई हाथियोंपर बैठे थे और कितने ही रथपर चढ़कर यात्रा करते थे।

नन्दके सेवक उद्धत गोपगण बड़े हर्षके साथ चल रहे थे। उनमेंसे कुछ लोग बैलोंपर सवार थे। वे सब-के-सब संगीतकी तानमें तत्पर थे। राधिकाकी दूसरी-दूसरी दासियाँ बहुत बड़ी संख्यामें यात्रा कर रही थीं, उनके मनमें बड़ा उल्लास था। मुखपर मन्द मुस्कानकी छटा छा रही थी और वे सब-की-सब सोनेके गहनोंसे सजी थीं। उनमेंसे कितनोंके हाथमें सिन्दूर थे, कितनी ही काजल लेकर चल रही थीं। किन्हींके हाथोंमें कन्दुक थे तो किन्हींके पुतलियाँ। कुछ सुन्दरी दासियाँ अपने हाथोंमें भोग-द्रव्य और क्रीड़ा-द्रव्य लेकर चल रही थीं। किन्हींके हाथोंमें वेषरचनाकी सामग्री थी तो किन्हींके हाथोंमें फूलोंकी मालाएँ। कुछ गोपियाँ हाथोंमें वीणा आदि वाद्य लिये सानन्द यात्रा कर रही थीं। कुछ अपने साथ अग्रिशुद्ध दिव्य वस्त्रोंका भार लिये चल रही थीं। कितनी ही चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और केसरका द्रव ले जा रही थीं। कोई संगीतमें मग्न थीं तो कोई विचित्र कथाएँ कह रही थीं। उस समय कोटि-कोटि शिबिकाएँ, रथ, घोड़े, गाड़ियाँ, बैल और लाखों हाथी आदि चल रहे थे। मुने! वृन्दावनमें पहुँचकर सबने उसे गृहशून्य देखा। तब वे सभी लोग वृक्षोंके नीचे यथास्थान ठहर गये। उस समय श्रीकृष्णने गोपोंको अभीष्ट गृह और गौओंके ठहरनेके स्थान बताते हुए कहा—‘आज इसी तरह ठहरो। कल सब व्यवस्था हो जायगी।’ श्रीकृष्णकी यह बात सुनकर गोपोंने पूछा—‘कन्हैया! यहाँ कहाँ घर हैं।’ उनका यह प्रश्न सुनकर श्रीकृष्ण बोले—‘इस स्थानपर बहुत-से स्वच्छ गृह हैं, जिन्हें देवताओंने बनाया है; परंतु उन देवताओंको प्रसन्न किये बिना कोई भी गृह हमारी दृष्टिमें नहीं आ सकते। अतः गोपगण! आज वनदेवताओंकी पूजा करके बाहर ही ठहरो। प्रातःकाल तुम्हें यहाँ निश्चय ही बहुत-से रमणीय गृह दिखायी देंगे। धूप, दीप, नैवेद्य, भेंट, पुष्प और चन्दन आदिके



द्वारा वटके मूलभागमें स्थित चण्डिकादेवीकी पूजा करो।'

श्रीकृष्णकी यह बात सुनकर गोपोंने दिनमें

देवताओंकी पूजा करके भोजन आदि किये और रातमें वहीं प्रसन्नतापूर्वक शयन किया।

(अध्याय १६)

~~~~~

विश्वकर्माका आगमन, उनके द्वारा पाँच योजन विस्तृत नूतन नगरका निर्माण, वृषभानु गोपके लिये पृथक् भवन, कलावती और वृषभानुके पूर्वजन्मका चरित्र, राजा सुचन्द्रकी तपस्या, ब्रह्माद्वारा वरदान, भनन्दनके यहाँ कलावतीका जन्म और वृषभानुके साथ उसका विवाह, विश्वकर्माद्वारा नन्द-भवनका, वृन्दावनके भीतर रासमण्डलका तथा मधुवनके पास रत्नमण्डपका निर्माण, 'वृन्दावन' नामका कारण, राजा केदारका इतिहास, तुलसीसे वृन्दावन नामका सम्बन्ध तथा राधाके सोलह नामोंमें 'वृन्दा' नाम, राधा नामकी व्याख्या, नींद टूटनेपर नूतन नगर देख ब्रजवासियोंका आश्चर्य तथा उन सबका उन भवनोंमें प्रवेश

भगवान् नारायण कहते हैं—नारद! रातमें वृन्दावनके भीतर सब ब्रजवासी और नन्दरायजी सो गये। निद्राके स्वामी श्रीकृष्ण भी माता यशोदाके वक्षःस्थलपर प्रगाढ़ निद्राके वशीभूत हो गये। रमणीय शय्याओंपर सोयी हुई गोपियाँ भी निद्रित हो गयीं। कोई शिशुओंको गोदमें लेकर, कोई सखियोंके साथ सटकर, कोई छकड़ोंपर और कोई रथोंपर ही स्थित होकर निद्रासे अचेत हो गयीं। पूर्णचन्द्रमाकी चाँदनी फैल जानेसे जब वृन्दावन स्वर्गसे भी अधिक मनोहर प्रतीत होने लगा, नाना प्रकारके कुसुमोंका स्पर्श करके बहनेवाली मन्द-मन्द वायुसे सारा वन-प्रान्त सुवासित हो उठा तथा समस्त प्राणी निश्चेष्ट होकर सो गये, तब रात्रिकालिक पञ्चम मुहूर्तके बीच जानेपर शिल्पियोंके गुरुके भी गुरु भगवान् विश्वकर्मा वहाँ आये। उन्होंने दिव्य एवं महीन वस्त्र पहन रखा था। उनके गलेमें मनोहर

रत्नमाला शोभा दे रही थी। वे अनुपम रत्ननिर्मित अलंकारोंसे अलंकृत थे। उनके कानोंमें कान्तिमान् मकराकृत कुण्डल झलमला रहे थे। वे ज्ञान और अवस्थामें वृद्ध होनेपर भी किशोरकी भाँति दर्शनीय थे। अत्यन्त सुन्दर, तेजस्वी तथा कामदेवके समान कान्तिमान् थे।

उनके साथ विशिष्ट शिल्पकलामें निपुण तीन करोड़ शिल्पी थे। उन सबके हाथोंमें मणिरत्न, हेमरत्न तथा लोहनिर्मित अस्त्र थे। कुबेर-वनके किङ्कूर यक्षसमुदाय भी वहाँ आ पहुँचे। वे स्फटिकमणि तथा रत्नमय अलंकारोंसे विभूषित थे। किन्हीं-कन्हींके कंधे बहुत बड़े थे। किन्हींके हाथोंमें पद्मरागमणिके ढेर थे तो किन्हींके हाथोंमें इन्द्रनीलमणिके। कुछ यक्षोंने अपने हाथोंमें स्यमन्तकमणि ले रखी थी और कुछ यक्षोंने चन्द्रकान्तमणि। अन्य बहुत-से यक्षोंके हाथोंमें सूर्यकान्तमणि और प्रभाकरमणिके ढेर प्रकाशित

हो रहे थे। किन्हींके हाथोंमें फरसे थे तो किन्हींके लोहसार। कोई-कोई गन्धसार तथा श्रेष्ठ मणि लेकर आये थे। किन्हींके हाथमें चँवर थे और कुछ लोग दर्पण, स्वर्णपात्र और स्वर्ण-कलश आदिके बोज़ लेकर आये थे।

विश्वकर्माने वह अत्यन्त मनोहर सामग्री देखकर सुन्दर नेत्रोंवाले श्रीकृष्णका ध्यान करके वहाँ नगर-निर्माणका कार्य आरम्भ किया। भारतवर्षका वह श्रेष्ठ और सुन्दर नगर पाँच योजन विस्तृत था। तीर्थोंका सारभूत वह पुण्यक्षेत्र श्रीहरिको अत्यन्त प्रिय है। जो वहाँ मुमुक्षु होकर निवास करते हैं, उन्हें वह परम निर्वाणकी प्राप्ति करानेवाला है। गोलोकमें पहुँचनेके लिये तो वह सोपानरूप है। सबको मनोवाञ्छित वस्तु प्रदान करनेवाला है। वहाँ चार-चार कमरेवाले चार करोड़ भवन बनाये गये थे, जिससे वह नगर अत्यन्त मनोरम प्रतीत होता था। श्रेष्ठ प्रस्तरोंसे निर्मित वह विशाल नगर किवाड़ों, खम्भों और सोपानोंसे सुशोभित था। चित्रमयी पुत्तलिकाओं, पुष्पों और कलशोंसे वहाँके भवनोंके शिखरभाग अत्यन्त प्रकाशमान जान पड़ते थे। पर्वतीय प्रस्तर-खण्डोंसे निर्मित वेदिकाएँ और प्राङ्गण उस नगरके भवनोंकी शोभा बढ़ा रहे थे। प्रस्तर-खण्डोंके परकोटोंसे सारा नगर घिरा हुआ था। विश्वकर्माने खेल-खेलमें ही सारे नगरकी रचना कर डाली। प्रत्येक गृहमें यथायोग्य बड़े-छोटे दो दरवाजे थे। हर्ष और उत्साहसे भरे हुए देवशिल्पीने स्फटिक-जैसी मणियोंसे उस नगरके भवनोंका निर्माण किया था। गन्धसार-निर्मित सोपानों, शंकु-रचित खम्भों, लोहसारकी बनी हुई किवाड़ों, चाँदीके समुज्ज्वल कलशों तथा वज्रसारनिर्मित प्राकारोंसे उस नगरकी अपूर्व शोभा हो रही थी। उसमें गोपोंके लिये यथास्थान और यथायोग्य निवासस्थान बनाकर विश्वकर्माने वृषभानु गोपके लिये पुनः रमणीय भवनका निर्माण

आरम्भ किया। उसके चारों ओर परकोटे और खाइयाँ बनी थीं। चारों दिशाओंमें चार दरवाजे थे। चार-चार कमरोंसे युक्त बीस भव्य भवन बनाये गये थे। उस सम्पूर्ण भवनका निर्माण महामूल्य मणियोंसे किया गया था। रत्नसार-रचित सुरम्य तूलिकाओं, सुवर्णाकार मणियोंद्वारा निर्मित अत्यन्त सुन्दर सोपानों, लोहसारकी बनी हुई किवाड़ों तथा कृत्रिम चित्रोंसे वृषभानु-भवनकी बड़ी शोभा हो रही थी। वहाँका प्रत्येक सुरम्य मन्दिर सोनेके कलशोंसे देदीप्यमान था। उस आश्रमके एक अत्यन्त मनोहर निर्जन प्रदेशमें, जो मनोहर चम्पा-वृक्षोंके उद्यानके भीतर था, पतिसहित कलावतीके उपभोगके लिये विश्वकर्माने कौतूहलवश एक ऐसी अट्टालिका बनायी थी, जिसका निर्माण विशिष्ट श्रेणीकी श्रेष्ठ मणियोंद्वारा हुआ था। उसमें इन्द्रनीलमणिके बने हुए नौ सोपान थे। गन्धसारनिर्मित खम्भों और कपाटोंसे वह अत्यन्त ऊँचा मनोरम भवन सब ओरसे विलक्षण था।

नारदजीने पूछा—भगवन्! मनोहर रूपवाली कलावती कौन थी और किसकी पत्नी थी, जिसके लिये देवशिल्पीने यत्नपूर्वक सुरम्य गृहका निर्माण किया?

भगवान् नारायणने कहा—सुन्दरी कलावती कमलाके अंशसे प्रकट हुई पितरोंकी मानसी कन्या है और वृषभानुकी पतिव्रता पत्नी है। उसीकी पुत्री राधा हुई जो श्रीकृष्णको प्राणोंसे भी बढ़कर प्रिय हैं। वे श्रीकृष्णके आधे अंशसे प्रकट हुई हैं; इसलिये उन्हींके समान तेजस्विनी हैं। उनके चरणकमलोंकी रजके स्पर्शसे वसुन्धरा पवित्र हो गयी है। सभी संत-महात्मा सदा ही श्रीराधाके प्रति अविचल भक्तिकी कामना करते हैं।

नारदजीने पूछा—मुने! ब्रजमें रहनेवाले एक मानवने कैसे, किस पुण्यसे और किस प्रकार

कलावतीने कहा—कमलोद्भव ब्रह्मन्! यदि

आप महाराजको मुक्ति दे रहे हैं तो मुझ अबलाकी क्या गति होगी, यह आप ही बताइये? चतुरानन! कान्तके बिना कान्ताकी क्या शोभा है? श्रुतिमें सुना गया है कि पतिव्रता नारीके लिये पति ही व्रत है, पति ही गुरु, इष्टदेव, तपस्या और धर्म है। ब्रह्मन्! सभी स्त्रियोंके लिये पतिसे बढ़कर परम प्रिय बन्धु कोई नहीं है। पतिसेवा परम दुर्लभ है। वह सब धर्मोंसे बढ़कर है। पतिसेवासे दूर रहनेवाली स्त्रीका सारा शुभ कर्म निष्फल होता है*। व्रत, दान, तप, पूजन, जप, होम, सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान, पृथ्वीकी परिक्रमा, समस्त यज्ञोंकी दीक्षा, बड़े-बड़े दान, सब वेदोंका पाठ, सब प्रकारकी तपस्या, वेदज्ञ ब्राह्मणोंको भोजन-दान तथा देवाराधन—ये सब मिलकर पति-सेवाकी सोलहवीं कलाके बराबर भी नहीं हैं। जो स्त्रियाँ पतिकी सेवा नहीं करतीं और पतिसे कटुवचन बोलती हैं, वे चन्द्रमा और सूर्यकी सत्तापर्यन्त कालसूत्र नरकमें गिरकर यातना भोगती हैं। वहाँ सर्पोंके बराबर बड़े-बड़े कीड़े दिन-रात उन्हें डँसते रहते हैं और सदा विपरीत एवं भयंकर शब्द किया करते हैं। उस नरकमें स्त्रियोंको मल, मूत्र तथा कफका भोजन करना पड़ता है। यमराजके दूत उनके मुखमें जलती लुआठी डालते हैं। नरकका भोग पूरा करके वे नारियाँ कृमियोनिमें जन्म लेती हैं और सौ जन्मोंतक रक्त, मांस तथा विष्टा खाती हैं। वेदवाक्योंमें यह निश्चित सिद्धान्त बताया गया है। मैं अबला हूँ। विद्वानोंके मुखसे सुनकर उपर्युक्त बातोंको कुछ-कुछ जानती हूँ। आप तो वेदोंका भी प्राकट्य करनेवाले हैं। प्रभु हैं। विद्वानों, योगियों, ज्ञानियों तथा गुरुके भी गुरु हैं। अच्युत!

आप सर्वज्ञ हैं। मैं आपको क्या समझा सकूंगी? ये मेरे पति मुझे प्राणोंसे भी बढ़कर प्रिय हैं। यदि इन्हें मुक्ति प्राप्त हो गयी तो मेरा रक्षक कौन होगा? मेरे धन और यौवनकी रक्षा कौन करेगा? कुमारावस्थामें नारीकी रक्षा पिता करता है। फिर वह कन्याका सुपात्रको दान देकर कृतकृत्य हो जाता है। तबसे पति ही नारीकी रक्षा करता है। पतिके अभावमें उसका पुत्र रक्षक होता है। इस प्रकार तीन अवस्थाओंमें नारीके तीन रक्षक माने गये हैं। जो स्त्रियाँ स्वतन्त्र हैं, वे नष्ट मानी गयी हैं। उनका सभी धर्मोंसे बहिष्कार किया गया है। वे नीच कुलमें उत्पन्न, कुलटा और दुष्टहृदया कही गयी हैं। ब्रह्मन्! उनके सौ जन्मोंका पुण्य नष्ट हो जाता है। पतिव्रताका अपने पतिके प्रति सर्वदा समान स्नेह होता है। दूध पीते बच्चेपर माताओंका अधिक स्नेह देखा जाता है, परंतु वह पतिव्रताके पतिविषयक स्नेहकी सोलहवीं कलाके बराबर भी नहीं है। पतिसे बढ़कर कोई बन्धु, प्रिय देवता तथा गुरु नहीं है। स्त्रीके लिये पतिसे बढ़कर धर्म, धन, प्राण तथा दूसरा कोई पुरुष नहीं है। जैसे वैष्णवोंका मन श्रीकृष्णचरणारविन्दमें ही निमग्न रहता है, उसी प्रकार साध्वी स्त्रियोंका चित्त अपने प्रियतम पतिमें ही संलग्न रहता है। ब्रह्मन्! पतिके बिना पतिव्रता स्त्री एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकती। पतिके बिना साध्वी स्त्रियोंके लिये मरण ही जीवन है और जीवन मृत्युसे भी अधिक कष्ट देनेवाला है। ब्रह्मन्! यदि मेरे बिना ही आप इन्हें मुक्त कर देंगे तो प्रभो! मैं आपको शाप देकर स्त्री-हत्याका दारुण पाप प्रदान करूँगी।

* व्रतं पतिव्रतायाश्च पतिरेव श्रुतं श्रुतम् । गुरुश्चाभीष्टदेवश्च तपोधर्ममयः पतिः ॥
सर्वेषां च प्रियतमो न बन्धुः स्वामिनः परः । सर्वधर्मात्परा ब्रह्मन् पतिसेवा सुदुर्लभा ॥
स्वामिसेवाविहीनायाः सर्वं तन्निष्फलं भवेत् । (१७। ६७—६९)

भी अयोनिजा, पूर्व-जन्मकी बातोंको याद रखनेवाली महासाध्वी, सुन्दरी एवं कमलाकी कला थी। कान्यकुब्ज देशमें महापराक्रमी नृपश्रेष्ठ भनन्दन राज्य करते थे। उन्होंने यज्ञके अन्तमें यज्ञकुण्डसे प्रकट हुई दूध पीती नंगी बालिकाके रूपमें उसे पाया था। वह सुन्दरी बालिका उस कुण्डसे हँसती हुई निकली थी। उसकी अङ्ग-कान्ति तपाये हुए सुवर्णके समान थी। वह तेजसे उद्भासित हो रही थी। राजेन्द्र भनन्दनने उसे गोदमें लेकर अपनी प्यारी रानी मालावतीको प्रसन्नतापूर्वक दे दिया। मालावतीके हर्षकी सीमा न रही। वह उस बालिकाको अपना स्तन पिलाकर पालने लगी। उसके अन्नप्राशन और नामकरणके दिन शुभ बेलामें जब राजा सत्पुरुषोंके बीच बैठे हुए थे, आकाशवाणी हुई—‘नरेश्वर! इस कन्याका नाम कलावती रखो।’ यह सुनकर राजाने वही नाम रख दिया। उन्होंने ब्राह्मणों, याचकों और वन्दीजनोंको प्रचुर धन दान किया। सबको भोजन कराया और बड़ा भारी उत्सव मनाया। समयानुसार उस रूपवती कन्याने युवावस्थामें प्रवेश किया। सोलह वर्षकी अवस्थामें वह अत्यन्त सुन्दरी दिखायी देने लगी। वह राजकन्या मुनियोंके मनको भी मोह लेनेमें समर्थ थी। मनोहर चम्पाके समान उसकी अङ्गकान्ति थी तथा मुख शरत्कालके पूर्णचन्द्रकी भाँति परम मनोहर था। एक दिन गजराजकी-सी मन्दगतिसे चलनेवाली राजकुमारी राजमार्गसे कहीं जा रही थी। नन्दजीने उसे मार्गमें देखा। देखकर वे बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने उस मार्गसे आने-जानेवाले लोगोंसे आदरपूर्वक पूछा—‘यह किसकी कन्या जा रही थी।’ लोगोंने बताया—‘यह महाराज भनन्दनकी कन्या है। इसका नाम कलावती है। यह धन्या बाला लक्ष्मीजीके अंशसे राजमन्दिरमें प्रकट हुई है और कौतुकवश खेलनेके लिये अपनी सहेलीके घर जा रही है।’

व्रजराज! आप व्रजको पधारिये।' ऐसा उत्तर देकर लोग चले गये। नन्दके मनमें बड़ा हर्ष हुआ। वे राजभवनको गये। रथसे उतरकर उन्होंने तत्काल ही राजसभामें प्रवेश किया। राजा उठकर खड़े हो गये। उन्होंने नन्दरायजीसे बातचीत की और उन्हें बैठनेके लिये सोनेका सिंहासन दिया। उन दोनोंमें परस्पर बहुत प्रेमालाप हुआ। फिर नन्दने विनीत होकर राजासे सम्बन्धकी बात चलायी।

नन्दजीने कहा—राजेन्द्र! सुनिये। मैं एक शुभ एवं विशेष बात कह रहा हूँ। आप इस समय अपनी कन्याका सम्बन्ध एक विशिष्ट पुरुषके साथ स्थापित कीजिये। व्रजमें सुरभानुके पुत्र श्रीमान् वृषभानु निवास करते हैं, जो व्रजके राजा हैं। वे भगवान् नारायणके अंशसे उत्पन्न हुए हैं और उत्तम गुणोंके भण्डार, सुन्दर, सुविद्वान्, सुस्थिर यौवनसे युक्त, योगी, पूर्वजन्मकी बातोंको स्मरण करनेवाले और नवयुवक हैं। आपकी कन्या भी यज्ञकुण्डसे उत्पन्न हुई है; अतः अयोनिजा है। त्रिभुवनमोहिनी कन्या कलावती भगवती कमलाकी अंश है और स्वभावतः शान्त जान पड़ती है। वृषभानु आपकी पुत्रीके योग्य हैं तथा आपकी पुत्री भी उन्हींके योग्य है।

मुने! राजसभामें ऐसा कहकर नन्दजी चुप हो गये। तब नृपश्रेष्ठ भनन्दनने विनयसे नम्र हो उन्हें इस प्रकार उत्तर दिया।

भनन्दन बोले—व्रजेश्वर! सम्बन्ध तो विधाताके वशकी बात है। वह मेरे द्वारा साध्य नहीं है। ब्रह्माजी ही सम्बन्ध करनेवाले हैं। मैं तो केवल जन्मदाता हूँ। कौन किसकी पत्नी या कन्या है तथा कौन किसका साधन-सम्पन्न पति है? इसे विधाताके सिवा और कौन जानता है? कर्मोंके अनुरूप फल देनेवाले विधाता ही सबके कारण हैं। किया हुआ कर्म कभी निष्फल नहीं होता, उसका फल मिलकर ही रहेगा—ऐसा श्रुतिमें सुना

गया है। अन्यथा असमर्थ पुरुषके उद्यमकी भाँति सारा कर्म निष्फल हो जाता है। यदि विधाताने मेरी पुत्रीको ही वृषभानुकी पत्नी होनेकी बात लिखी है तो वह पहलेसे ही उनकी पत्नी है। मैं फिर कौन हूँ, जो उसमें बाधा डाल सकूँ तथा दूसरा भी कौन उस सम्बन्धका निवारण कर सकता है?

नारद! यों कहकर राजेन्द्र भनन्दनने विनयसे सिर झुकाकर नन्दरायजीको आदरपूर्वक मिष्टान्न भोजन कराया। तत्पश्चात् राजाकी अनुमति ले व्रजराज व्रजको लौट गये। जाकर उन्होंने सुरभानुकी सभामें सब बातें बतायीं। सुरभानुने भी यत्नपूर्वक नन्द और गर्गजीके सहयोगसे सादर इस सम्बन्धको जोड़ा। विवाहकालमें महाराज भनन्दनने गजरत्न, अश्वरत्न, अन्यान्य रत्न तथा मणियोंके आभूषण आदि बहुत दहेज दिये। वृषभानु कलावतीको पाकर बड़ी प्रसन्नताके साथ निर्जन एवं रमणीय स्थानमें उसके साथ विहार करने लगे। कलावती एक पलका भी विरह होनेपर स्वामीके बिना व्याकुल हो उठती थी और वृषभानु भी एक क्षणके लिये भी कलावतीके दूर होनेपर उसके बिना विकल हो जाते थे। वह राजकन्या पूर्वजन्मकी बातोंको याद रखनेवाली देवी थी। मायासे मनुष्यरूपमें प्रकट हुई थी। वृषभानु भी श्रीहरिके अंश और जातिस्मर थे तथा कलावतीको पाकर बड़े प्रसन्न थे। उन दोनोंका प्रेम प्रतिदिन नया-नया होकर बढ़ने लगा। लीलावश पूर्वकालमें सुदामाके शाप और श्रीकृष्णकी आज्ञासे श्रीकृष्णप्राणाधिका सती राधिका उन दोनोंकी अयोनिजा पुत्री हुई। उसके दर्शनमात्रसे वे दोनों दम्पति भवबन्धनसे मुक्त हो गये। नारद! इस प्रकार इतिहास कहा गया। अब जिसका प्रकरण चल रहा है, वह प्रसङ्ग सुनो। उक्त इतिहास पापरूपी ईधनको जलानेके लिये प्रज्वलित अग्निकी शिखाके समान है।

शिल्पिशिरोमणि विश्वकर्मा वृषभानुके आश्रमपर जाकर वहाँसे अपने सेवकगणोंके साथ दूसरे स्थानपर गये। वे तत्त्वज्ञ थे। उन्होंने मन-ही-मन एक कोस लंबे-चौड़े एक मनोहर स्थानका विचार करके वहाँ महात्मा नन्दके लिये आश्रम बनाना आरम्भ किया। बुद्धिसे अनुमान करके उनके लिये सबसे विलक्षण भवन बनाया। वह श्रेष्ठ भवन चार गहरी खाइयोंसे घिरा हुआ था, शत्रुओंके लिये उन्हें लौघना बहुत कठिन था। उन चारों खाइयोंमें प्रस्तर जुड़े हुए थे। उन खाइयोंके दोनों तटोंपर फूलोंके उद्यान थे, जिनके कारण वे पुष्पोंसे सजी हुई-सी जान पड़ती थीं और सुन्दर एवं मनोहर चम्पाके वृक्ष तटोंपर खिले हुए थे। उन्हें छूकर बहनेवाली सुगन्धित वायु उन परिखाओंको सब ओरसे सुवासित कर रही थी। तटवर्ती आम, सुपारी, कटहल, नारियल, अनार, श्रीफल (बेल), भृङ्ग (इलायची), नीबू, नारंगी, ऊँचे आम्रातक (आमड़ा), जामुन, केले, केवड़े और कदम्बसमूह आदि फूले-फले वृक्षोंसे उन खाइयोंकी सब ओरसे शोभा हो रही थी। वे सारी परिखाएँ सदा वृक्षोंसे ढकी होनेके कारण जल-क्रीड़ाके योग्य थीं। अतएव सबको प्रिय थीं। परिखाओंके एकान्त स्थानमें जानेके लिये विश्वकर्माने उत्तम मार्ग बनाया, जो स्वजनोंके लिये सुगम और शत्रुवर्गके लिये दुर्गम था। थोड़े-थोड़े जलसे ढके हुए मणिमय खम्भोंद्वारा संकेतसे उस मार्गपर खम्भोंकी सीमा बनायी गयी थी। वह मार्ग न तो अधिक संकीर्ण था और न अधिक विस्तृत ही था। परिखाके ऊपरी भागमें देवशिल्पीने मनोहर परकोटा बनाया था, जिसकी ऊँचाई बहुत अधिक थी। वह सौ धनुषके बराबर ऊँचा था। उसमें लगा हुआ एक-एक पत्थर पचीस-पचीस हाथ लंबा था। सिन्दूरी रंगकी मणियोंसे निर्मित वह प्राकार बड़ा

ही सुन्दर दिखायी देता था। उसमें बाहरसे दो और भीतरसे सात दरवाजे थे। दरवाजे मणिसारनिर्मित किवाड़ोंसे बंद रहते थे। वह नन्दभवन इन्द्रनीलमणिके चित्रित कलशोंद्वारा विशेष शोभा पा रहा था। मणिसाररचित कपाट भी उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। स्वर्णसारनिर्मित कलशोंसे उसका शिखरभाग बहुत ही उद्दीप्त जान पड़ता था। नन्दभवनका निर्माण करके विश्वकर्मा नगरमें घूमने लगे। उन्होंने नाना प्रकारके मनोहर राजमार्ग बनाये। रक्तभानुमणिकी बनी हुई वेदियों तथा सुन्दर पत्तनोंसे वे मार्ग सुशोभित होते थे। उन्हें आर-पार दोनों ओरसे बाँधकर पक्का बनाया गया था, जिससे वे बड़े मनोहर लगते थे। राजमार्गके दोनों ओर मणिमय मण्डप बने हुए थे, जो वैश्योंके वाणिज्य-व्यवसायके उपयोगमें आने योग्य थे। वे मण्डप दायें-बायें सब ओरसे प्रकाशित हो उन राजमार्गोंको भी प्रकाश पहुँचाते थे।



तदनन्तर वृन्दावनमें जाकर विश्वकर्माने सुन्दर, गोलाकार और मणिमय परकोटोंसे युक्त रासमण्डलका निर्माण किया, जो सब ओरसे एक-एक योजन

विस्तृत था। उसमें स्थान-स्थानपर मणिमय वेदिकाएँ बनी हुई थीं। मणिसाररचित नौ करोड़ मण्डप उस रासमण्डलकी शोभा बढ़ाते थे। वे शृङ्गारके योग्य, चित्रोंसे सुसज्जित और शय्याओंसे सम्पन्न थे। नाना जातिके फूलोंकी सुगन्ध लेकर बहती हुई वायु उन मण्डपोंको सुवासित करती थी। उनमें रत्नमय प्रदीप जलते थे। सुवर्णमय कलश उनकी उज्ज्वलता बढ़ा रहे थे। पुष्पोंसे भरे हुए उद्यानों तथा सरोवरोंसे सुशोभित रासस्थलका निर्माण करके विश्वकर्मा दूसरे स्थानको गये। वे उस रमणीय वृन्दावनको देखकर बहुत संतुष्ट हुए। वनके भीतर जगह-जगह एकान्त स्थानमें मन-बुद्धिसे विचार और निश्चय करके उन्होंने वहाँ तीस रमणीय एवं विलक्षण वनोंका निर्माण किया। वे केवल श्रीराधा-माधवकी ही क्रीड़ाके लिये बनाये गये थे।

तदनन्तर मधुवनके निकट अत्यन्त मनोहर निर्जन स्थानमें वटवृक्षके मूलभागके निकट सरोवरके पश्चिम किनारे केतकीवनके बीच और चम्पाके उद्यानके पूर्व विश्वकर्माने राधा-माधवकी क्रीड़ाके लिये पुनः एक रत्नमय मण्डपका निर्माण किया, जो चार वेदिकाओंसे घिरा हुआ और अत्यन्त सुन्दर था। रत्नसाररचित सौ तूलिकाएँ उसकी शोभा बढ़ाती थीं। अमूल्य रत्नोंद्वारा निर्मित तथा नाना प्रकारके चित्रोंसे चित्रित नौ जोड़े कपाटों और नौ मनोहर द्वारोंसे उस रत्नमण्डपकी बड़ी शोभा हो रही थी। उस मण्डपकी दीवारोंके दोनों बगलमें और ऊपर भी श्रेष्ठ रत्नोंद्वारा रचित कृत्रिम चित्रमय कलश उसकी श्रीवृद्धि कर रहे थे। उन कलशोंकी तीन कोटियाँ थीं। उक्त रत्नमण्डपमें महामूल्यवान् श्रेष्ठ मणिरत्नोंद्वारा निर्मित नौ सोपान शोभा दे रहे थे। उत्तम रत्नोंके सारभागसे बने हुए कलशोंसे मण्डपका शिखर-भाग जगमगा रहा था। पताका, तोरण तथा श्वेत चामर उस भवनकी

शोभा बढ़ा रहे थे। उसमें सब ओर अमूल्य रत्नमय दर्पण लगे थे, जिनके कारण सबको अपने सामनेकी ओरसे ही वह मण्डप दीप्तिमान् दिखायी देता था। वह सौ धनुष ऊपरतक अग्नि-शिखाके समान प्रकाशपुञ्ज फैला रहा था। उसका विस्तार सौ हाथका था। वह रत्नमण्डप गोलाकार बना था। उसके भीतर रत्ननिर्मित शय्याएँ बिछी थीं, जिनसे उस उत्तम भवनके भीतरी भागकी बड़ी शोभा हो रही थी। उक्त शय्याओंपर अग्निशुद्ध दिव्य वस्त्र बिछे थे। मालाओंके समूहसे सुसज्जित होकर वे विचित्र शोभा धारण करते थे। पारिजातके फूलोंकी मालाओंके बने हुए तकिये उनपर यथास्थान रखे गये थे। चन्दन, अगुरु, कस्तूरी और कुंकुमसे वह सारा भवन सुवासित हो रहा था। उसमें मालती और चम्पाके फूलोंकी मालाएँ रखी थीं। नूतन शृङ्गारके योग्य तथा पारस्परिक प्रेमकी वृद्धि करनेवाले कपूरयुक्त ताम्बूलके बीड़े उत्तम रत्नमय पात्रोंमें सजाकर रखे गये थे। उस भवनमें रत्नोंकी बनी हुई बहुत-सी चौकियाँ थीं, जिनमें हीरे जड़े थे और मोतियोंकी झालरें लटक रही थीं। रत्नसारजटित कितने ही घट यथास्थान रखे हुए थे। रत्नमय चित्रोंसे चित्रित अनेक रत्नसिंहासन उस मण्डपकी शोभा बढ़ाते थे, जिनमें जड़ी हुई चन्द्रकान्त मणियाँ पिघलकर जलकी बूँदोंसे उस भवनको सींच रही थीं। शीतल एवं सुवासित जल तथा भोग्य वस्तुओंसे युक्त उस रमणीय मिलन-मन्दिर (रत्नमण्डप)-का निर्माण करके विश्वकर्मा फिर नगरमें गये।

जिनके लिये जो भवन बने थे, उनपर उनके नाम उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक लिखे। इस कार्यमें उनके शिष्य तथा यक्षगण उनकी सहायता करते थे। मुने! निद्राके स्वामी श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण उस समय निद्राके वशीभूत थे। उनको नमस्कार करके विश्वकर्मा अपने घरको चले गये। परमेश्वर श्रीकृष्णकी

इच्छासे ही भूतलपर ऐसा आश्चर्यमय नगर निर्मित हुआ। इस प्रकार मैंने श्रीहरिका सारा मङ्गलमय चरित्र कह सुनाया, जो सुखद और पापहारी है। अब तुम और क्या सुनना चाहते हो?

नारदजीने पूछा—भगवन्! भारतवर्षमें इस काननका नाम 'वृन्दावन' क्यों हुआ? इसकी व्युत्पत्ति अथवा संज्ञा क्या है? आप उत्तम तत्त्वज्ञ हैं, अतः इस तत्त्वको बताइये।

सूतजी कहते हैं—नारदजीका प्रश्न सुनकर नारायण ऋषिने सानन्द हैंसकर सारा ही पुरातन तत्त्व कहना आरम्भ किया।

भगवान् नारायण बोले—नारद! पहले सत्ययुगकी बात है। राजा केदार सातों द्वीपोंके अधिपति थे। ब्रह्मन्! वे सदा सत्य धर्ममें तत्पर रहते थे और अपनी स्त्रियों तथा पुत्र-पौत्रवर्गके साथ सानन्द जीवन बिताते थे। उन धार्मिक नरेशने समस्त प्रजाओंका पुत्रोंकी भाँति पालन किया। सौ यज्ञोंका अनुष्ठान करके भी राजा केदारने इन्द्रपद पानेकी इच्छा नहीं की। वे नाना प्रकारके पुण्यकर्म करके भी स्वयं उनका फल नहीं चाहते थे। उनका सारा नित्यनैमित्तिक कर्म श्रीकृष्णकी प्रीतिके लिये ही होता था। केदारके समान राजाधिराज न तो कोई पहले हुआ है और न पुनः होगा ही। उन्होंने अपनी त्रिभुवनमोहिनी पत्नी तथा राज्यकी रक्षाका भार पुत्रोंपर रखकर जैगीषव्य मुनिके उपदेशसे तपस्याके लिये वनको प्रस्थान किया। वे श्रीहरिके अनन्य भक्त थे और निरन्तर उन्हींका चिन्तन करते थे। मुने! भगवान्का सुदर्शनचक्र राजाकी रक्षाके लिये सदा उन्हींके पास रहता था। वे मुनिश्रेष्ठ नरेश चिरकालतक तपस्या करके अन्तमें गोलोकको चले गये। उनके नामसे केदारतीर्थ प्रसिद्ध हुआ। अवश्य ही आज भी वहाँ मरे हुए प्राणीको तत्काल मुक्तिलाभ होता है।

उनकी कन्याका नाम वृन्दा था, जो लक्ष्मीकी अंश थी। उसने योगशास्त्रमें निपुण होनेके कारण किसीको अपना पुरुष नहीं बनाया। दुर्वासाने उसे परम दुर्लभ श्रीहरिका मन्त्र दिया। वह घर छोड़कर तपस्याके लिये वनमें चली गयी। उसने साठ हजार वर्षोंतक निर्जन वनमें तपस्या की। तब उसके सामने भक्तवत्सल भगवान् श्रीकृष्ण प्रकट हुए। उन्होंने प्रसन्नमुखसे कहा—'देवि! तुम कोई वर माँगो।' वह सुन्दर विग्रहवाले शान्तस्वरूप राधिका-कान्तको देखकर सहसा बोल उठी—'तुम मेरे पति हो जाओ।' उन्होंने 'तथास्तु' कहकर उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। वह कौतूहलवश श्रीकृष्णके साथ गोलोकमें गयी और वहाँ राधाके समान श्रेष्ठ सौभाग्यशालिनी गोपी हुई। वृन्दाने जहाँ तप किया था, उस स्थानका नाम 'वृन्दावन' हुआ। अथवा वृन्दाने जहाँ क्रीड़ा की थी, इसलिये वह स्थान 'वृन्दावन' कहलाया।

वत्स! अब दूसरा पुण्यदायक इतिहास सुनो—जिससे इस काननका नाम 'वृन्दावन' पड़ा। वह प्रसङ्ग मैं तुमसे कहता हूँ, ध्यान दो। राजा कुशध्वजके दो कन्याएँ थीं। दोनों ही धर्मशास्त्रके ज्ञानमें निपुण थीं। उनके नाम थे—तुलसी और वेदवती। संसार चलानेका जो कार्य है, उससे उन दोनों बहिनोंको वैराग्य था। उनमेंसे वेदवतीने तपस्या करके परम पुरुष नारायणको प्राप्त किया। वह जनककन्या सीताके नामसे सर्वत्र विख्यात है। तुलसीने तपस्या करके श्रीहरिको पतिरूपमें प्राप्त करनेकी इच्छा की, किंतु दैववश दुर्वासाके शापसे उसने शङ्खचूड़को प्राप्त किया। फिर परम मनोहर कमलाकान्त भगवान् नारायण उसे प्राणवल्लभके रूपमें प्राप्त हुए। भगवान् श्रीहरिके शापसे देवेश्वरी तुलसी वृक्षरूपमें प्रकट हुई और तुलसीके शापसे श्रीहरि शालग्रामशिला हो गये। उस शिलाके वक्षः-

स्थलपर उस अवस्थामें भी सुन्दरी तुलसी निरन्तर स्थित रहने लगी। मुने! तुलसीका सारा चरित्र तुमसे विस्तारपूर्वक कहा जा चुका है, तथापि यहाँ प्रसङ्गवश पुनः उसकी कुछ चर्चा की गयी। तपोधन! उस तुलसीकी तपस्याका एक यह भी स्थान है; इसलिये इसे मनीषी पुरुष 'वृन्दावन' कहते हैं। (तुलसी और वृन्दा समानार्थक शब्द है) अथवा मैं तुमसे दूसरा उत्कृष्ट हेतु बता रहा हूँ, जिससे भारतवर्षका यह पुण्यक्षेत्र वृन्दावनके नामसे प्रसिद्ध हुआ। राधाके सोलह नामोंमें एक वृन्दा नाम भी है, जो श्रुतिमें सुना गया है। उन वृन्दा नामधारिणी राधाका यह रमणीय क्रीडा-वन है; इसलिये इसे 'वृन्दावन' कहा गया है। पूर्वकालमें श्रीकृष्णने श्रीराधाकी प्रीतिके लिये गोलोकमें वृन्दावनका निर्माण किया था। फिर भूतलपर उनकी क्रीडाके लिये प्रकट हुआ वह वन उस प्राचीन नामसे ही 'वृन्दावन' कहलाने लगा।

नारदजीने पूछा—जगदुरो! श्रीराधिकाके सोलह नाम कौन-कौन-से हैं? मुझ शिष्यसे उन्हें बताइये; उन्हें सुननेके लिये मेरे मनमें उत्कण्ठा है। मैंने सामवेदमें वर्णित श्रीराधाके सहस्र नाम सुने हैं; तथापि इस समय आपके मुखसे उनके सोलह नामोंको सुनना चाहता हूँ। विभो! वे सोलह नाम उन सहस्र नामोंके ही अन्तर्गत हैं या उनसे भिन्न हैं? अहो! उन भक्तवाञ्छित पुण्यस्वरूप नामोंका मुझसे वर्णन कीजिये। साथ ही उन सबकी व्युत्पत्ति भी बताइये। जगत्के आदिकारण! जगन्माता श्रीराधाके उन सर्वदुर्लभ पावन नामोंको मैं सुनना चाहता हूँ।

श्रीनारायणने कहा—राधा, रासेश्वरी, रासवासिनी, रसिकेश्वरी, कृष्णप्राणाधिका, कृष्णप्रिया, कृष्णस्वरूपिणी, कृष्णवामाङ्गसम्भूता, परमानन्दरूपिणी, कृष्णा, वृन्दावनी, वृन्दा,

वृन्दावनविनोदिनी, चन्द्रावली, चन्द्रकान्ता और शरच्चन्द्रप्रधानना—ये सारभूत सोलह नाम उन सहस्र नामोंके ही अन्तर्गत हैं। राधा शब्दमें 'धा' का अर्थ है संसिद्धि (निर्वाण) तथा 'रा' दानवाचक है। जो स्वयं निर्वाण (मोक्ष) प्रदान करनेवाली हैं; वे 'राधा' कही गयी हैं। रासेश्वरकी ये पत्नी हैं; इसलिये इनका नाम 'रासेश्वरी' है। उनका रासमण्डलमें निवास है; इससे वे 'रासवासिनी' कहलाती हैं। वे समस्त रसिक देवियोंकी परमेश्वरी हैं; अतः पुरातन संत-महात्मा उन्हें 'रसिकेश्वरी' कहते हैं। परमात्मा श्रीकृष्णके लिये वे प्राणोंसे भी अधिक प्रियतमा हैं; अतः साक्षात् श्रीकृष्णने ही उन्हें 'कृष्णप्राणाधिका' नाम दिया है। वे श्रीकृष्णकी अत्यन्त प्रिया कान्ता हैं अथवा श्रीकृष्ण ही सदा उन्हें प्रिय हैं; इसलिये समस्त देवताओंने उन्हें 'कृष्णप्रिया' कहा है। वे श्रीकृष्णरूपको लीलापूर्वक निकट लानेमें समर्थ हैं तथा सभी अंशोंमें श्रीकृष्णके सदृश हैं; अतः 'कृष्णस्वरूपिणी' कही गयी हैं। परम सती श्रीराधा श्रीकृष्णके आधे वामाङ्गभागसे प्रकट हुई हैं; अतः श्रीकृष्णने स्वयं ही उन्हें 'कृष्णवामाङ्गसम्भूता' कहा है। सती श्रीराधा स्वयं परमानन्दकी मूर्तिमती राशि हैं; अतः श्रुतियोंने उन्हें 'परमानन्दरूपिणी' की संज्ञा दी है। 'कृष्' शब्द मोक्षका वाचक है, 'ण' उत्कृष्टताका बोधक है और 'आकार' दाताके अर्थमें आता है। वे उत्कृष्ट मोक्षकी दात्री हैं; इसलिये 'कृष्णा' कही गयी हैं। वृन्दावन उन्हींका है; इसलिये वे 'वृन्दावनी' कही गयी हैं। अथवा वृन्दावनकी अधिदेवी होनेके कारण उन्हें यह नाम प्राप्त हुआ है। सखियोंके समुदायको 'वृन्द' कहते हैं और 'अकार' सत्ताका वाचक है। उनके समूह-की-समूह सखियाँ हैं; इसलिये वे 'वृन्दा' कही गयी हैं। उन्हें सदा वृन्दावनमें विनोद प्राप्त होता है; अतः वेद उनको 'वृन्दावनविनोदिनी' कहते हैं।

नारदजीने कहा—प्रभो! यह सर्वदुर्लभ परम आश्चर्यमय स्तोत्र मुझे प्राप्त हुआ। देवी श्रीराधाका 'संसारविजय' नामक कवच भी उपलब्ध हुआ। सुयज्ञने जिसका प्रयोग किया था, वह दुर्लभ स्तोत्र भी मुझे सुलभ हो गया। भगवान् श्रीकृष्णकी विचित्र कथा सुनकर आपके चरणकमलोंके प्रसादसे मैंने बहुत कुछ पा लिया। अब मैं जिस रहस्यको सुनना चाहता हूँ, उसका वर्णन कीजिये। मुने! वृन्दावनमें प्रातःकाल उस अद्भुत नगरको देखकर गोपोंने क्या कहा?

भगवान् श्रीनारायण बोले—नारद! जब वहाँ रात बीत गयी, विश्वकर्मा चले गये और अरुणोदयकी बेला आयी, तब सब लोग जाग उठे। उठते ही सबसे विलक्षण उस नगरको देख ब्रजवासी आपसमें कहने लगे—'यह क्या आश्चर्य है? यह क्या आश्चर्य है?' किन्हीं गोपोंने कुछ अन्य गोपोंसे पूछा—'यह कैसे सम्भव हुआ? न जाने भूतलपर किस रूपसे कौन प्रकट हो सकता है?' परंतु नन्दरायजी गर्गके वाक्योंका स्मरण करके मन-ही-मन सब कुछ जान गये। उन्होंने भीतर-ही-भीतर विचार किया—'यह समस्त चराचर जगत् श्रीहरिकी इच्छासे ही उत्पन्न हुआ है। जिनके भूभङ्गकी लीलामात्रसे ब्रह्मासे लेकर तृणपर्यन्त सारा जगत् आविर्भूत और

तिरोभूत होता रहता है, उनके लिये क्या और कैसे असाध्य है? अहो! जिनके रोमकूपोंमें ही सारे ब्रह्माण्ड स्थित हैं, उन परमेश्वर महाविष्णु श्रीहरिके लिये क्या असाध्य हो सकता है? ब्रह्मा, शेषनाग, शिव और धर्म जिनके चरणारविन्दोंका दर्शन करते रहते हैं, उन माया-मानव-रूपधारी परमेश्वरके लिये कौन-सा ऐसा कार्य है, जो असाध्य हो?' नन्दजीने उस नगरमें घूम-घूमकर, एक-एक घरको देख-देखकर और वहाँ लिखे हुए नामोंको पढ़कर सबके लिये घरोंका वितरण किया। नन्द और वृषभानुने शुभ मुहूर्त देखकर प्रवेशकालिक मङ्गलकृत्यका सम्पादन करके अपने सेवकगणोंके साथ अपने-अपने आश्रममें प्रवेश किया। वृन्दावनमें रहकर उन सबके मुख और नेत्र प्रसन्नतासे खिल उठे। उन सब गोपोंने बड़े आनन्दके साथ अपने-अपने उत्तम आश्रममें पदार्पण किया। अपने-अपने मनोहर स्थानपर सब गोपोंको बड़ा आनन्द मिला। वहाँके बालक और बालिकाएँ हर्षपूर्वक खेलने-कूदने लगीं। श्रीकृष्ण और बलदेव भी कौतूहलवश गोपशिशुओंके साथ वहाँ प्रत्येक मनोहर स्थानपर बालोचित क्रीड़ा करने लगे। नारद! इस प्रकार मैंने नगर-निर्माणका सारा वृत्तान्त कह सुनाया। वनमें गोपबालाओंके लिये जो राममण्डल बना था, उसकी भी बात बतायी। (अध्याय १७)

~~~~~

पुष्करे च महातीर्थे पुण्याहे देवसंसदि ॥

राधाप्रभावप्रस्तावे सुप्रसन्नेन चेतसा । इदं स्तोत्रं महापुण्यं तुभ्यं दत्तं मया मुने ॥  
निन्दकायावैष्णवाय न दातव्यं महामुने । यावज्जीवमिदं स्तोत्रं त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः ॥  
राधामाधवयोः पादपद्मे भक्तिर्भवेदिह । अन्ते लभेत्तयोर्दास्यं शश्वत्सहचरो भवेत् ॥  
अणिमादिकसिद्धिं च संप्राप्य नित्यविग्रहम् । व्रतदानोपवासैश्च सर्वैर्नियमपूर्वकैः ॥  
चतुर्णां चैव वेदानां पाठः सर्वार्थसंयुतैः । सर्वेषां यज्ञतीर्थानां करणैर्विधिबोधितैः ॥  
प्रदक्षिणेन भूमेश्च कृत्स्नाया एव सप्तधा । शरणागतरक्षायामज्ञानां ज्ञानदानतः ॥  
देवानां वैष्णवानां च दर्शनेनापि यत् फलम् । तदेव स्तोत्रपाठस्य कलां नार्हति षोडशीम् ॥  
स्तोत्रस्यास्य प्रभावेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः । (१७। २२०—२४६)